श्री राम उवाच–38

श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्

आचार्य श्री रामलाल जी म.सा.

प्रकाशक
साधुमार्गी पब्लिकेशन

श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्

संस्करण प्रथम, नवम्बर, 2023
4000 प्रतियाँ

मूल्य ₹ 125/-

प्रकाशक **साधुमार्गी पब्लिकेशन**
अंतर्गत - श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
समता भवन, आचार्य श्री नानेश मार्ग,
श्री जैन पी. जी. कॉलेज के सामने,
नोखा रोड, गंगाशहर, बीकानेर-334401 (राज.)
☎ 0151-2270261
e-mail : sahitya@sadhumargi.com

आई.एस.बी.एन. 978-93-91137-77-9

मुद्रक **उपकार प्रिंट हाऊस** प्रा. लिमिटेड, आगरा

श्रद्धा से मिलता है सच्चा ज्ञान

किसी वस्तु के संबंध में सही जानकारी होना ही ज्ञान है। थोड़े आसान शब्दों में कहें तो जो चीज जिस रूप में है, वैसा ही अनुभव होना ज्ञान है। दरअसल ज्ञान, सत्य तक पहुँचने का साधन है। यह साधन बहुमूल्य रत्नों से भी अधिक मूल्यवान है। यह उपयोगी भी बहुत है। यह आत्मसम्मान पैदा कर सकता है तो मनुष्य को उन्नत कर उसे सर्वोच्च स्थान पर ले जा सकता है। यहाँ तक कि मुक्ति के लिए मार्ग प्रशस्त कर सकता है। पर यह सब तभी हो सकता है जब ज्ञान सच्चा हो।

सच्चा ज्ञान वह है, जो सदाचार की ओर ले जाए। जो संस्कारित बनाए। जिससे विनय भाव आए। और सच्चा ज्ञानी वह है जो सदाचारी एवं संस्कारित होने के साथ ही जगत् के प्रति प्रेम, सद्भाव एवं सौहार्द रखने वाला हो। सच्चा ज्ञानी वह है जो सभी आत्माओं को अपनी आत्मा के समान समझे और जिसके कारण सभी में प्रसन्नता का भाव व्याप्त हो। ऐसे ज्ञान का कोई अर्थ नहीं है जिसे प्राप्त करने के बाद भी अविद्या का अंधकार छाया रहे और विनय का अभाव हो। ऐसा होने का अर्थ है दिशाहीन ज्ञान होना और ज्ञान दिशाहीन हो तो किसी काम का नहीं है। ज्ञान तभी काम का है जब वह सही दिशा में हो। ज्ञान सही दिशा में नहीं हो, वह संवेदना पैदा नहीं करे तो उससे समृद्ध होने के बाद भी लोग अज्ञानी ही रहा करते हैं।

सच्चा ज्ञान प्राप्त होता है श्रद्धा से, क्योंकि वह केवल पुस्तक की वस्तु नहीं है। वह तत्त्व है। उसका प्रकटीकरण श्रद्धा की शिला पर ही संभव है। श्रद्धायुक्त ज्ञान आचरण के आनंद तक पहुँचाने वाला है। श्रद्धापूर्वक कर्म का कोई मुकाबला नहीं है। श्रद्धा चाहे भगवान महावीर पर हो, अपने गुरु पर हो, अपने कर्म पर हो या धर्म पर।

श्रद्धा की महिमा से अवगत आचार्य प्रवर श्री रामलाल जी म. सा. अपने प्रवचनों के माध्यम से आम जनमानस को श्रद्धावान बनने का संदेश फरमाते रहते हैं। मध्य प्रदेश के नीमच शहर में सन् 2023 में चातुर्मासार्थ

विराजित आचार्यश्री ऐसे ही संदेशों से भरे प्रवचन फरमा रहे हैं। वहाँ फरमाए गए प्रवचनों में से कुछ प्रवचन इस उद्देश्य से '**श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्**' के रूप में प्रस्तुत हैं कि पाठक श्रद्धावान हों। श्रद्धावान होंगे तो सच्चा ज्ञान प्राप्त होगा। सच्चा ज्ञान अपने लक्ष्य की तरफ आगे बढ़ाएगा। इतना आगे बढ़ाएगा कि वे मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं।

नीमच चातुर्मास में फरमाए गए प्रवचनों की यह तीसरी पुस्तक है। पूर्व की भाँति इसमें भी गलतियों से बचने का तो पूरा प्रयास किया ही गया है, भाव भी वही रखने का प्रयास है, जो आचार्यश्री ने व्याख्यान फरमाते हुए व्यक्त किये थे। सारी सतर्कता के बावजूद आचार्यश्री के भावों को जस-का-तस व्यक्त करने में हमसे कोई चूक हो गई हो तो यह हमारी कमी है। अपनी इस कमी के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं। क्षमा के साथ हम यह भी चाहेंगे कि पाठक हमारी गलतियों को हमसे बतायें, जिससे भविष्य में हम उन गलतियों से बच सकें।

संयोजक
साधुमार्गी पब्लिकेशन
अंतर्गत श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

संघ के प्रति अहोभाव

हे पितृ तुल्य संघ! हे आश्रयदाता संघ!

संसार के प्रत्येक जीव की रक्षा के लिए सतत प्रयत्नरत संघ! तुम्हारी शीतल छाँव तले हम अपने परिवार के साथ तप-त्याग से युक्त आध्यात्मिक, सुखद जीवन जी रहे हैं। तुम्हारे ही आश्रय में रहकर हमने अपने नन्हें चरणों को आध्यात्मिकता की दिशा में बढ़ाया है। तुमने ही हमें आत्मा के अन्वेषण हेतु प्रेरित किया। तुम्हारी ही प्रेरणा से प्रेरित होकर हमने अपने जीवन को सन्मार्ग की ओर बढ़ाया है। इस हेतु हम संघ का अभिवादन करते हैं।

संघ ने हम अकिंचन को पुस्तक '**श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्**' के माध्यम से सेवा का अनुपम अवसर प्रदान किया। इस हेतु हम अपने आपको सौभाग्यशाली समझते हैं। अंतर्भावना से संघ का आभार व्यक्त करते हुए यह विश्वास करते हैं कि भविष्य में भी परम उपकारी श्री संघ शासन हमें सेवा का अवसर प्रदान करता रहेगा।

- अर्थ सहयोगी -

श्री चाँदमल जी-गुलाब बाई भड़कतियां (फुलजीबा)
की पावन स्मृति में
पवन कुमार, राजेन्द्र कुमार (लाला), राजेश कुमार
भड़कतियां परिवार (बदनावर, वर्धमानपुर)

।। सेवा है यज्ञकुण्ड, समिधा सम हम जलें।।

विषयानुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	संकट किसने दूर हटाया	07
2.	धीरज धारे कभी न हारे	18
3.	जीवन में क्रांति जगाए जा	30
4.	आपद में ना शीश झुकाना	42
5.	श्रद्धा हम मजबूत बनाएं	55
6.	जय, जय अन्तरभाव सँजो लें	69
7.	धर्म श्रद्धा मन दृढ़ बनाती	82
8.	पर्युषण की आई रे बहार	92
9.	करो कुछ आत्महित चिंतन	103
10.	जगे हमारा कर्तव्य बोध	114
11.	वीर पथ पर कदम बढ़ाएं	128
12.	आपकी भावना फले	139
13.	समभाव मुक्ति का मार्ग	152
14.	अपना संधान करना	164
15.	गुणपरक दृष्टि बन जाय	177
16.	विरोध, तजें, सहयोग दें	184

1

संकट किसने दूर हटाया

शांति जिन एक मुज विनति, सुणो त्रिभुवन राय रे।
शांति स्वरूप केम जाणिये, कहो मन केम परखाय रे।।
धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।

धर्म श्रद्धा को जिसने प्राणों के साथ मिला लिया, जिसके प्राण और धर्म श्रद्धा एकमेक हो गए, वह व्यक्ति कभी भी मात नहीं खाता। वह सदा जय प्राप्त करता है।

मदनरेखा की कहानी यह दर्शाती है कि प्रगाढ़ धर्म श्रद्धा के आधार पर विकट क्षणों में भी उसने हिम्मत नहीं हारी। कोई पूछ लेता है कि धर्म क्या करता है। धर्म की श्रद्धा क्या करती है। उससे यदि वापस पूछें कि तुम दूध पीते हो, दूध क्या करता है? तुम खाना खाते हो वह क्या करता है?

दूध व भोजन सप्त धातुओं को बल देने वाला होता है। उससे सप्त धातुएं सक्रिय होती हैं, बलवती होती हैं। प्राणों को बल मिलता है। जीवनी शक्ति सक्रिय होती है। भोजन नहीं मिलने से शरीर सुस्त होगा। प्राण शिथिल होंगे। इंद्रियां शिथिल होंगी। शरीर में स्फूर्ति व सक्रियता का अनुभव नहीं कर पाएंगे। जैसे भोजन से शरीर सक्रिय होता है, वैसे ही धर्म श्रद्धा से आत्मबल सुदृढ़ होता है। आत्मविश्वास मजबूत होता है, वह सदा रहता है। फिर कितना भी संकट आ जाए आत्मा का कुछ भी बिगाड़ होने वाला नहीं है। शरीर मरता है, मरेगा, मरता रहेगा। शरीर छूटता है, छूटेगा और छूटता रहेगा। आत्मा शाश्वत है। उसका मरण नहीं होता। वह सदा मौजूद रहती है। सदा विद्यमान रहती है।

जिसे अटूट विश्वास होगा कि आत्मा सदैव विद्यमान रहती है, वह शरीर को महत्त्व नहीं देगा। धर्म श्रद्धा से आत्मविश्वास घनीभूत बनता है। मदनरेखा के जीवन में भी वैसी श्रद्धा बनी।

युगबाहु और मदनरेखा उद्यान में विश्राम कर रहे थे। रात्रि के समय वहाँ मणिरथ पहुँचा। वह युगबाहु का बड़ा भाई था। राजा था। सम्राट था। उसका आना जानकर मदनरेखा कहती है, नाथ! आपके भाई साहब का आना प्रशस्त नहीं है, शुभ नहीं है। पिछले कई दिनों से उनकी दृष्टि मुझ पर लगी हुई है। उनके यहाँ पहुँचने से मेरा मन कहता है कि कहीं कुछ अकाज न हो जाए।

युगबाहु कहता है, तू कैसी भ्रांति पाल रही है। वे मुझे पुत्र के समान समझते हैं। उन्होंने मुझे युवराज बनाया है। मेरे प्रति उनका बड़ा प्रेम है, लगाव है। मदनरेखा ने इतना ही कहा, नाथ! सावधान रहना।

मणिरथ वहाँ पहुँचा। अंगरक्षकों ने उसे रोकने की कोशिश की तो युगबाहु ने कहा कि आने दो। मणिरथ के हाथ में नंगी तलवार देखकर युगबाहु विचाराधीन हो गए। तत्काल उनको स्फुरणा हुई कि नंगी तलवार लाने की क्या आवश्यकता पड़ गई! यहाँ कौन-सी असुरक्षा की बात है! युगबाहु ने कहा कि भाई साहब! इतनी रात्रि को आप कैसे पधारे तो उसने कहा कि भाई अभी-अभी तू शत्रुओं को जीत कर आया है। शत्रु अकस्मात् आकर धावा न बोल दे, इसलिए मुझे नींद नहीं आ रही थी। मैं आ गया।

युगबाहु ने कहा कि भाई साहब! मैंने अभी उनके दाँत खट्टे किए हैं, वे मेरे सामने आँख उठाकर भी नहीं देख सकते। उनकी इतनी हिम्मत नहीं हो सकती। बाकी आपका सोचना प्रेम के वशीभूत हो सकता है, किंतु चिंता की कोई बात नहीं है।

मणिरथ ने कहा कि अच्छा भाई पानी तो पिला दो। सुराही से पानी निकालने के युगबाहु जैसे ही झुके मणिरथ ने उस पर वार कर दिया।

विश्वासघात बहुत बार हो चुके हैं, फिर भी विश्व में विश्वास मौजूद है। कितना भी विश्वासघात हो जाए, विश्वास नाम का तत्त्व नहीं हटेगा। विश्वास के आधार पर विश्व टिका हुआ है और टिका रहेगा। शत्रु वार करेगा या नहीं करेगा लेकिन अपने ही लोग वार करने के लिए तैयार हैं।

सुमित मुनि जी म.सा. बोल रहे थे और आप सुन रहे थे कि पिता ने पुत्र से कहा कि तुम मेरी इकलौती संतान हो तो मेरी मृत्यु के समय तुम्हें मेरे साथ चलना चाहिए, पर बेटे ने मना कर दिया। इस पर जो मेरे विचार बने, उसे आपके समक्ष प्रस्तुत कर देता हूँ।

बेटे को साथ ले जाने की गलती बाप नहीं करेगा। उसने इस जन्म में देख लिया है कि बेटा क्या कर रहा है, कैसी शांति दे रहा है, ऐसी स्थिति में मरते हुए साथ ले जाने की भूल वह नहीं करेगा। पहली भूल जन्म देकर कर दी, अब मरते हुए साथ ले जाने की दूसरी भूल क्यों करेगा।

आप करोगे क्या? कोई चाहेगा क्या कि बेटा मेरे साथ चले?

एक भी आदमी हाथ खड़ा कर दे जो चाहता हो कि बेटा मेरे साथ चले। ऐसा कोई नहीं चाहता है कि जब मैं मरूँ तो बेटा मेरे साथ चले, पत्नी मेरे साथ चले। यह बात किसी युग में रही होगी। इस युग में यह बात नहीं है कि पत्नी मेरे साथ चले, बेटा मेरे साथ चले।

खैर, बात हो रही थी कि विश्वास पर विश्व चल रहा है किंतु अति विश्वास कभी भी घातक हो सकता है। युगबाहु का मणिरथ पर अति विश्वास था और मणिरथ का भी युगबाहु पर अति विश्वास था, किंतु मणिरथ ने जब से मदनरेखा के शारीरिक रूप लावण्य को देखा तब से वह बेकाबू हो गया। उसका अपने पर नियंत्रण नहीं रह पाया। वह सोचने लगा कि मुझे मदनरेखा चाहिए। मदनरेखा को पाने के लिए उसने उपाय भी किए, किंतु वे उपाय सफल नहीं हो पाए।

धर्म में जीने वाली मदनरेखा ने कह दिया कि मैं आपकी पुत्री के समान हूँ। आप मुझे पुत्री के रूप में ही देखें। मणिरथ विचार करने लगा कि जब तक इसका पति मौजूद रहेगा तब तक यह मुझे स्वीकार नहीं करेगी। वासनायुक्त इस विचार से प्रेम की जड़ें खोखली हो गईं। आसक्ति के पीछे भाई-भाई का प्रेम हिल गया। मोह के झोंके से भ्रातृ-प्रेम काफूर हो गया। जैसे कपूर हवा में उड़ जाती है, वैसे ही वह प्रेम हवा में उड़ गया।

इसलिए ज्ञानी कहते हैं-

'न सा महं नो वि अहं पि तीसे'

मैं तेरा नहीं हूँ, तू मेरा नहीं है। दुनिया में कोई भी किसी का नहीं है। दुनिया में कौन किसका भाई! कौन किसकी बहन! स्वार्थ ही मुख्य है। स्वार्थ को ही लोग महत्त्व देते हैं। स्वार्थ के सामने धर्म श्रद्धा हवा हो जाती है। दिखावे का प्रेम हट जाता है। गहरे से गहरा प्रेम भी टूट जाता है।

युगबाहु के साथ भी ऐसा ही हुआ। मदनरेखा के कारण मणिरथ ने युगबाहु पर वार कर दिया। वार होने पर युगबाहु भयंकर आक्रोश में आ गया। भयंकर आक्रोश में वह विचार करने लगा कि उसके हाथ में तलवार होती, उसमें ताकत होती तो वह मणिरथ के टुकड़े-टुकड़े कर देता, किंतु उसमें शक्ति नहीं थी। उसके प्राण शिथिल होते जा रहे थे।

मदनरेखा ने उस समय अपने कर्तव्य का निर्वहन किया। उसने कहा कि नाथ! आप भाई पर द्वेष मत कीजिए। वार भाई ने नहीं, मेरे रूप ने किया है। मेरे लावण्य ने किया है। भाई का आप पर अटूट विश्वास था, प्रेम था। मेरे निमित्त से उनका मन भ्रांत बना, विभ्रांत बना और उसी के कारण से उन्होंने वार किया। आप धर्म की शरण को स्वीकार करें। उसने चार शरण दिए-

अरिहंते सरणं पवज्जामि,
सिद्धे सरणं पवज्जामि,
साहू सरणं पवज्जामि,
केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पवज्जामि।

ये चार शरण युगबाहु को सुनाती हुई मदनरेखा कहती है कि नाथ! ये चार शरण उत्तम हैं, मंगल हैं, श्रेष्ठ हैं। सारे दु:खों का नाश करने वाले हैं। आप इनमें अपने मन को लगाइए। युगबाहु का ध्यान उन चार शरणों पर गया तो उसका मन शांत हो गया। समाधिस्थ हो गया। तन्मय हो गया। उसी अवस्था में काल धर्म को प्राप्त करके वह देवगति को प्राप्त हो गया। धर्म के प्रति श्रद्धा होने से वह नरक के बदले देवगति को प्राप्त करने वाला बन गया।

'धर्म भक्ति दुर्गति को टारे, भवसागर से पार उतारे'

धर्म भक्ति, धर्म श्रद्धा दुर्गति को दूर करने वाली है। दुर्गति का अर्थ होता है दुष्ट गति, बुरी गति। जहाँ पर जीव को क्लेश मिले, संक्लेश मिले, कष्ट मिले ऐसी गति को दुर्गति कहा गया है। धर्म श्रद्धा से जीव की दुर्गति नहीं होती।

युगबाहु काल धर्म को प्राप्त हुए।

मदनरेखा ने विचार किया कि अभी तक तो पति का आधार था, मैं उनके शरण में थी, उनके बल पर दृढ़ थी, किंतु पति के मरने के बाद मणिरथ निश्शंक हो जाएगा। वह बलात्कार करने से भी पीछे नहीं हटेगा, क्योंकि अब उसको किसी का भय नहीं है। मदनरेखा उधेड़बुन में पड़ गई। वह सोचने लगी कि यदि महल में जाती हूँ तो सुरक्षित नहीं हूँ। वह सोचने लगी कि भले ही महल बड़ा होगा, सुंदर होगा, किंतु वहाँ मेरे शील की सुरक्षा कठिन होगी। ऐसा विचार करते हुए उसने सोचा कि मुझे वन की शरण ले लेनी चाहिए।

अरण्य शरण जाने में पुत्र मोह अवरोधक बन रहा था। पुत्र मोह का ताँता उसे महल की ओर खींचने लगा। वह सोचने लगी कि मेरे लाडले पुत्र चंद्रयश का जीवन खतरे में पड़ जाएगा, किंतु ज्यादा समय नहीं लगा, उसने निर्णय कर लिया कि मुझे अपने शील की रक्षा करनी है, अपने धर्म की रक्षा करनी है। धर्म ही चंद्रयश की रक्षा करेगा।

वह अनिश्चित दिशा से जंगल की ओर चली गई। बीहड़ जंगल दिन में डरावना होता है। रात के समय तो कहना ही क्या! सनसनाती हवाएँ चल रही थीं, पत्ते खड़खड़ कर रहे थे। उसके पाँवों में कई नुकीले पत्थर लग गए, खून की धार बहने लगी, किंतु वह चलती रही, चलती रही। धर्म श्रद्धा का ही उसका साथ था।

धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।

उसके हृदय में धर्म श्रद्धा थी। उसी के बल पर वह रात्रि के अंधेरे में जंगल पार कर रही थी। जंगल में सिंह, चीता, भालू आदि जानवरों का भय होता है, किंतु वह निर्भय होकर चलती रही।

निर्भयता बहुत सारे झंझटों से दूर करने वाली होती है, किंतु वह हर किसी को नसीब नहीं हो पाती। जिसका गहरा आत्मविश्वास होगा, धर्म, ईमान और सत्य पर जिसकी निष्ठा होगी, उसी को निर्भयता प्राप्त हो पाती है। जैसे सेना के जवानों को सुरक्षा कवच मिलता है, वैसे ही सत्य और ईमान पर जीने वाले व्यक्ति को निर्भयता रूपी ढाल सुरक्षा कवच के रूप में प्राप्त होती है। निर्भयता रूपी ढाल सत्य और ईमान पर जीने वाले व्यक्ति को ही प्राप्त हो पाती

है। हर किसी के बूते में नहीं है निर्भयता को प्राप्त करना।

निर्भयता की दोस्ती सत्य से होती है। जहाँ सत्य होता है, जहाँ ईमान होता है, जहाँ धर्म होता है, वहाँ निर्भयता खड़ी रहती है। जहाँ सत्य और ईमान नहीं होगा, वहाँ दिखावे की निर्भयता हो सकती है पर मन निर्भय नहीं होगा। मन भयग्रस्त रहेगा। भयाक्रांत रहेगा।

मदनरेखा हृदय से धर्म को धारण किए हुए थी। इसलिए वह विकट क्षणों में जंगल में भी अकेली जा रही थी। कहानी बहुत लंबी है, बहुत सारे प्रसंग बने। उसी बीहड़ जंगल में मदनरेखा को प्रसव वेदना होती है और वह पुत्र को जन्म देती है। वह अपनी साड़ी का एक पल्ला फाड़ करके उसका झूला बनाकर अपनी संतान को वनचर प्राणियों से सुरक्षित रखने के लिए एक टहनी पर लटका देती है और स्वयं शुद्धि करने के लिए तालाब की ओर चल पड़ती है। इतने में एक हाथी आया और उसने मदनरेखा को अपनी सूंड में पकड़ कर आकाश में उछाल दिया।

जब संकट आता है तो एक नहीं आता। एक के पीछे एक संकट आने लगते हैं। आदमी एक संकट से मुक्त हो नहीं पाता कि दूसरा संकट आ जाता है, किंतु हिम्मती व्यक्ति कहता है कि 'चाहे संकट आए लाख मैं सब सह लूंगा।' वह कहता है कि सारे संकटों को सह लूंगा, किंतु अपनी धर्म श्रद्धा को किसी भी हालात में विचलित नहीं होने दूंगा। स्वयं को धर्म से कभी विचलित नहीं होने दूंगा।

मेरा जीवन और मरण धर्म के साथ रहेगा। जिंदा रहूंगा तो धर्म के साथ और मरूंगा तो धर्म के बल पर। धर्म को छोड़कर जीना हराम है। मृत्यु के समय भी मैं धर्म को छोड़ने वाला नहीं हूँ। ऐसी आस्था लेकर मदनरेखा चल रही थी।

हाथी ने उसको आकाश में उछाला। संयोग से उसी समय एक विद्याधर उधर से निकल रहा था। उसने मदनरेखा को अपने विमान में बैठा लिया। इतनी सुंदर स्त्री देखकर उसका भी हृदय कामुक हो गया। उसने विमान को घुमाया और घर की तरफ जाने लगा।

तब तक मदनरेखा होश में आ गई थी। उसने पूछा कि आप कौन हो और कहाँ जा रहे थे? और आपने विमान को वापस क्यों मोड़ लिया? उसने

कहा कि मैं विद्याधर हूँ। मेरे पिता जी दीक्षित हुए हुए हैं, मैं उनके दर्शन के लिए जा रहा था। तुम्हारे जैसा स्त्रीरत्न मुझे मिल गया इसलिए वापस घर की ओर जा रहा हूँ। मदनरेखा ने कहा कि आप संत दर्शन के कार्य से विमुख हो रहे हैं। यह ठीक नहीं है। मेरी इच्छा है कि मैं भी मुनिराज के दर्शन करूँ। विद्याधर ने सोचा कि अभी मुझे इसकी मनोकामना पूरी करनी चाहिए। तद्नुसार वे संत दर्शन को पहुँच गए। वहीं पर उसकी सारी समस्याओं का समाधान हो गया। मुनिराज से धर्मोपदेश सुना, इतने में एक देव भी उपस्थित हुआ। देव पहले मदनरेखा को नमस्कार कर बाद में मुनि को नमस्कार करता है। ऐसे में विद्याधर ने मुनिराज से पूछ लिया कि मुनिराज तो आप हो किंतु ये पहले आपको नमस्कार नहीं करके एक स्त्री को नमस्कार करता है, ऐसा क्यों? यह उलटी गंगा कैसे बह गई?

विद्याधर ने सोचा कि आने वाला प्राणी भी मदनरेखा पर आसक्त हो गया होगा इसलिए पहले उसको नमस्कार कर रहा हो।

मुनिराज ने उनको पूर्व की घटना बताते हुए कहा कि मदनरेखा ने मृत्यु के समय धर्म सुनाया जिससे इसे देव गति मिली इस कारण से देव ने उपकारी को पहले नमस्कार किया, उसके बाद मुझे नमस्कार किया। इसमें उलटी गंगा बहने जैसी कुछ भी नहीं है।

बन्धुओ! कठिनाइयों में भी मदनरेखा ने धर्म को नहीं भुलाया। उसने यह नहीं सोचा कि मैंने इतना धर्म किया इसके बावजूद मुझ पर इतनी कठिनाइयाँ आ गईं। कई लोग बहुत जल्दी खिन्न हो जाते हैं कि मैंने इतना धर्म किया और मुझ पर इतनी कठिनाइयाँ आ रही हैं! खेदित होकर सोचते हैं कि क्या मतलब है ऐसे धर्म से! ध्यान रखना! मन में धर्म के प्रति आस्था नहीं रहेगी तो वह रक्षा नहीं कर पाएगा।

सोना अग्नि में तपता है तब कुंदन बनता है। वैसे ही धर्म परीक्षा लेता है कि हम कितने सत्यनिष्ठ हैं, कितने धार्मिक हैं। उसी से ज्ञात होता है कि धर्म के प्रति किसकी कितनी श्रद्धा है। धर्म के प्रति दिखावे की श्रद्धा करने वाले लोग बहुत होते हैं, वस्तुत: धर्म में जीने वाले लोग विरले होते हैं।

'धर्म पर डट जाना, है वीरों का काम'

आपके और हमारे काम का नहीं है। हमारे में वह वीरता कहाँ है!

हमारी आवाज में भी वीरता नहीं है। आवाज भी दबी-दबी आ रही है। हम तनाव में जी रहे हैं। अशांति में हैं। बहुत दुख में हैं। हमने इसका कारण नहीं खोजा कि अशांति में क्यों हैं। तनाव में क्यों हैं।

उपाध्याय श्री बता रहे थे कि दुख का कारण भ्रम है। हम कितने भ्रम में जी रहे हैं। भ्रम का सूत्रपात करनेवाला मोह है। वह भ्रमित करता है। नए-नए रूप दिखाता रहता है। भटकाता रहता है। धर्म श्रद्धा में जीने वाले के सामने कितनी भी कठिनाइयाँ क्यों न आ जाए, वह जल्दी से मोह के बहकावे में नहीं आता है।

मदनरेखा चाहती तो मणिरथ को स्वीकार कर सकती थी। विद्याधर ने भी उसके साथ संबंध बनाने की बात कही, किंतु वह उनको स्वीकार नहीं करती है। धर्म की श्रद्धा ऐसे आकर्षणों से प्रभावित नहीं होती। वह अपने ध्येय पर दृढ़ रहती है। अपने ध्येय पर उसकी गति होती है।

देव ने अपनी उपकारी मदनरेखा से कहा कि मैं तुम्हारा क्या हित करूँ। पुत्र देखने की उसकी इच्छा थी अत: देव ने मदनरेखा को विमान से वहाँ पहुँचा दिया। वहाँ दृढव्रता आर्या विराज रही थी। उसने उनके दर्शन किए, उपदेश सुना और धर्म रंग में रँग गई। वह भूल गई अपनी संतान को। वह साधु जीवन स्वीकार कर लेती है। साधना करती है, आराधना करती है।

बंधुओ! 'धर्म श्रद्धा हृदय धरूँ' केवल गाने की बात नहीं है। हृदय की गहराई में धर्म की श्रद्धा पहुँच जानी चाहिए। शरीर के एक-एक खंड में, एक-एक कतरे में धर्म श्रद्धा की गूँज होनी चाहिए। रक्त की एक भी बूँद ऐसी नहीं होनी चाहिए, जिसमें धर्म की गूँज नहीं आए।

शास्त्रकार कहते हैं कि

'धम्मपेमाणुरागरत्ता'

अर्थात् श्रावक का जीवन धर्म के प्रेम से अनुरक्त होता है। हमारा जीवन भी धर्म से अनुरक्त हो। न केवल रक्त, मांस व हड्डी श्रद्धा से अनुरक्त हो बल्कि मज्जा तक धर्म की श्रद्धा पहुँच जानी चाहिए। शरीर का प्रत्येक अवयव धर्म की श्रद्धा से पूरित होना चाहिए।

कभी-कभी ऐसा हो जाता है जो होना नहीं चाहिए। आश्चर्य होता है

कि ऐसा कैसे हो गया। ऐसे अनहोनी पर एक कहानी है। एक राजा के सिर पर दो सींग आ गए। राजा के सामने समस्या खड़ी हो गई। वह सदा माथे पर मुकुट लगाए रहते ताकि किसी को मालूम न पड़े कि मेरे माथे पर दो सींग हैं, नहीं तो लोग हँसी उड़ाएंगे, किंतु बालों को काटना जरूरी है। बाल काटने के लिए नाई को बुलाया जाता। नाई जैसे ही बाल काटता उसको मार दिया जाता। आगे से जब भी राजा का बाल कटता तो काटने वाले नाई को खत्म कर दिया जाता ताकि वह किसी से कहे नहीं कि राजा के सिर पर दो सींग है।

ऐसे करते-करते कई नाई मारे गए। अंत में सिर्फ एक नाई बचा। दीवान ने राजा से कहा कि राजन हम इसको भी मार देंगे तो पूरे गाँव में केश काटने वाला मिलेगा कौन। राजा ने कहा कि उसको बुलाया जाए, उसको मारेंगे नहीं। उसे बुलाया गया। जैसे ही राजा ने सिर से मुकुट हटाया तो वह आश्चर्यचकित हो गया, उसका चिंतन उभरा मैं यह पहली बार देख रहा हूँ कि राजा के सिर पर दो सींग है। राजा ने कहा कि खबरदार, कहीं जाकर मुँह खोल दिया तो तुम्हारा जीवन खतरे में पड़ जाएगा। तुम्हारा जीवन समाप्त कर दिया जाएगा। यदि मुँह नहीं खोलोगे तो तुम जिंदा रह सकते हो। वह डरते-डरते बोला कि मुँह नहीं खोलूंगा। डरते-डरते उसने राजा के बाल काटे। राजा ने वापस मुकुट पहन लिया।

नाई के भीतर भय बैठ गया, किंतु बात पच नहीं रही थी। कई बार आदमी सुनी हुई, देखी हुई आश्चर्यकारी बात कहीं कहे बिना रह नहीं पाता है। वह सोचता है कि यह मेरा प्रिय व्यक्ति है, इससे कहूंगा तो वह आगे नहीं कहेगा। इस तरह दो कान से चार कान, चार कान से छह कानों में बात पहुँचती है और आगे से आगे बढ़ जाती है। नाई को बात पचाना बहुत मुश्किल हो रहा था। नाई सोचने लगा कि कहे बिना पेट में अफारा आ रहा है, किसी से कहूंगा नहीं तो मर जाऊंगा। वह घर से बाहर जंगल की तरफ निकला। जंगल में एक पौधे से उसने बोल दिया कि राजा के दो सींग है। उसका अफारा खत्म हो गया कि मैंने अपनी बात बोल दी। वह खुश हो गया कि अब कौन क्या करेगा।

वह पौधा बाँस का था। बाँस से बाँसुरी बनती है। कुछ समय पश्चात् उस बाँस को काटकर बाँसुरी बनाई गई तो उसके भीतर से आवाज निकलने

लगी कि राजा के दो सींग है, राजा के दो सींग है।

बाँसुरी से क्या आवाज आ रही है?

(श्रोतागण बोले- राजा के दो सींग है)

बाँस की जड़ के पास केवल एक बार बोला गया कि राजा के दो सींग है और बाँसुरी से ध्वनि निकलने लगी कि राजा के दो सींग है।

हमसे कौन-सी ध्वनि निकलेगी?

(श्रोताओं की तरफ से आवाज आती है- जय जयकार जय जयकार राम गुरु की जय जयकार)

यही हमने सीखा है। इतने में समझ लिया कि कल्याण है।

'नहीं थोथे नाद गुँजाना है,
कुछ करके अब दिखलाना है।'

पीछे वालों का मौन है क्या? दस पंक्ति तक के लोगों की आवाज आ रही है। बाकी का मौन है क्या?

'नहीं थोथे नाद गुँजाना है,
कुछ करके अब दिखलाना है।'

अब करने का समय आ गया है। केवल शब्दों से काम नहीं चलेगा। केवल कागजी कार्यवाही नहीं चलेगी। करने का मतलब समय के साथ कुछ करने के लिए जुट जाएं। अपनी शक्ति के अनुसार लग जाना है कि मुझे यह कार्य करना ही है। धर्म श्रद्धा को हृदय में धारण करते हुए धर्म की रक्षा करनी है। चाहे कुछ भी हो जाए किंतु धर्म श्रद्धा से च्युत नहीं होंगे। धर्म में कभी दिखावा नहीं करेंगे।

हमने सेठ सुदर्शन की बात सुनी है। मदनरेखा की बात भी सुनी है। धर्म श्रद्धा के बल पर वे विजित हुए। धर्म पर श्रद्धा करने वालों को हर-क्षण सफलता प्राप्त होती है। आप भी प्रयत्न करें। प्रयत्न करना, लक्ष्य होना चाहिए। धर्म पर इतनी दृढ़ता हो जानी चाहिए कि चाहे कोई मेरी गरदन भी उड़ा दे, किंतु मुझे धर्म से विचलित नहीं कर सकता। देव-दानव भी विचलित नहीं कर सकता। मैं धर्म से अलग नहीं हूँ। धर्म पर अविचलित रहूंगा। धर्म श्रद्धा पर विश्वास रहेगा तो धर्म मेरा अंगरक्षक बनकर काम करेगा। ऐसी आस्था रहेगी

तो फिर देखना कि कैसा रंग आता है।

धर्म रंग से मन हो रंगा, देख कठौती दिखती गंगा।

फिर हर जगह सफलता मिलेगी। हर स्थान पर सफलता नजर आएगी। कोई विपदा नहीं रहेगी। बस धर्म श्रद्धा सुदृढ़ होनी चाहिए। उसमें सुराख नहीं होना चाहिए। उसमें सुराख हो जाएगा तो स्थिति डाँवाडोल हो जाएगी। इसलिए एक बात ध्यान में रखें कि धर्म श्रद्धा में कोई सुराख नहीं हो। जैसे हृदय में सुराख होने पर साँस फूलने लगती है, व्यक्ति ज्यादा गतिशील नहीं हो पाता, वैसे ही धर्म श्रद्धा में सुराख हो जाएगा तो मंजिल मिलने वाली नहीं है। बीच रास्ते में ही धड़कन तेज हो जाएगी। अत: उसमें कोई सुराख नहीं होना चाहिए। ऐसा हमारा लक्ष्य बने।

तपस्वी आत्माएं तपस्या में रत हैं। तपस्वी आत्माएं भी अपने भरोसे के बल पर आगे बढ़ रही हैं। हम भी उनसे प्रेरणा लेकर अपनी धर्म श्रद्धा को बलवती बनाएं। इतना ही कहते हुए विराम।

06 अगस्त, 2023

2

धीरज धारे कभी न हारे

शांति जिन एक मुज विनति, सुणो त्रिभुवन राय रे।
शांति स्वरूप केम जाणिये, कहो मन केम परखाय रे।।
धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।

चार पदों में धर्माराधना का निष्कर्ष, निचोड़ बता दिया है। प्रश्न होता है कि धर्म श्रद्धा का विकास कैसे हो, धर्म श्रद्धा कैसे हृदयंगम हो, और कैसे वह वर्धमान बन सकती है?

उत्तर है निरंतर साधु-संतों और परम-धर्म को जानने वालों का सान्निध्य मिलने, उनसे सम्पर्क होते रहने से धर्म श्रद्धा बढ़ती है। धर्म श्रद्धा सुदृढ़ होती रहती है। मजबूत होती रहती है। एक समय में मकान बनाने के लिए सीमेंट की जगह चूने का उपयोग हुआ करता था। चूने से बने हुए मकान सुदृढ़ हुआ करते थे। सीमेंट के मकान की उम्र सौ वर्ष है तो चूने के मकान की उम्र 500 वर्ष या उससे भी अधिक है। दुर्ग बनाने में, किला बनाने में चूने का उपयोग हुआ करता था। वर्षों-वर्ष तक वे टिके रहते थे। आज भी हैं। उनकी तराई की जाती थी। वैसे ही धर्म श्रद्धा की तराई होती रहे तो वह प्रवर्धमान होती है।

पूज्य गुरुदेव उदरामसर चातुर्मास में विराज रहे थे। देशनोक के डालचन्द जी भूरा वहाँ उपस्थित हुए और प्रश्नोत्तर काल में प्रश्न किया कि गुरुदेव! बहनें दौड़ी-दौड़ी आती हैं कि पूज्य म.सा. की सेवा करनी है, ये न आपको कुछ लाकर दे सकती हैं, न आपके हाथ-पैर दबा सकती हैं, फिर सेवा कैसे होती है? फिर वे सेवा-सेवा की रट क्यों लगाती हैं?

गुरुदेव ने एक प्रश्न के माध्यम से उनको बड़ा सुंदर समाधान दिया।

गुरुदेव ने पूछा कि आप कभी बगीचे में गए क्या? उन्होंने कहा कि कभी-कभार जाने का काम पड़ता है तो चला जाता हूँ। जो भी बगीचे में जाता है, वह वहाँ घूमे या न घूमे उसके विचारों में कुछ तब्दिली होती है। उसके शरीर में स्फूर्ति आती है। उसका मन आनंदित हो जाता है। उसका तनाव दूर हो जाता है। उसे बहुत शांति की अनुभूति होती है। व्यक्ति अपने आपमें शांति की अनुभूति करता है।

बगीचे ने क्या दिया उसको? वहाँ के पौधों ने क्या दिया? वहाँ के फूलों ने क्या दिया? उसने किसी पत्ती, फूल या पौधे को छुआ तक नहीं। कुर्सी पर जाकर बैठने में ही उसको लगता है कि उसने बहुत कुछ प्राप्त कर लिया। उसने क्या पाया यह नहीं जान रहा है, किसने क्या दिया यह भी नहीं जान रहा है, किंतु उसे कुछ मिला जरूर है, वह आनंद का अनुभव करता है।

क्या मिला वहाँ पर?

पहले उसके शरीर में सुस्ती थी, जाने के बाद स्फूर्त हो गया। उसने शांत वातारण को प्राप्त किया। शांत वातावरण मन को शांति देने वाला होता है। वहाँ से उसको ऑक्सीजन प्राप्त हुआ।

गुरुदेव ने समाधान देते हुए इसी बात को कहा कि ''संतों के यहाँ आने पर चाहे संत बोलें या नहीं, उनके समीप शांत भाव से, सकारात्मक सोच के साथ बैठने मात्र से शांति मिलती है, समाधि मिलती है।''

वैसे संतों के पास बैठकर भी नकारात्मक विचार आ सकते हैं। यथा कि मैं कब से बैठा हूँ, म.सा. तो मेरे सामने देख ही नहीं रहे हैं। यह विचार नकारात्मक है। इससे जो मिलना चाहिए वह नहीं मिल पाएगा। आप श्रद्धा से बैठे रहें, कुछ भी बोलने की आवश्यकता नहीं है। जब आप उठेंगे तो आपको लगेगा कि मुझे बहुत कुछ प्राप्त हो गया। खींचने की ताकत हमारे भीतर होनी चाहिए। आप संतों से जो भी खींचना चाहें, वह श्रद्धा से खींच पाएंगे।

अभी स्याही के पेन बहुत कम देखने को मिलते हैं। पहले स्याही के पेन हुआ करते थे। स्याही सोखने वाला एक पेपर (सोख्ता) भी होता था। जहाँ भी स्याही के छींटे पड़ते वहाँ सोख्ता को रख देने पर वह स्याही के छींटों को सोख लेता था। सोख्ता जैसी ही हमारी श्रद्धा होनी चाहिए जो समाधि को खींच

ले और अपने आपको शांत बना ले।

जो बोलने से प्राप्त होता है वह बहुत कम है। जो बोल के दिया जाता है वह भी बहुत कम है। मौन से जो दिया जाता है वह अद्भुत होता है। लेने वाला भी मौन और देने वाला भी मौन। मौन में सबकुछ दिया जा सकता है। मौन में वह ताकत होती है जो शब्दों में कभी नहीं हो सकती। शब्द केवल माध्यम बने हुए हैं, मूल में हमारे भाव होते हैं। जहाँ भावों का सम्बन्ध जुड़ जाता है, वहाँ अद्भुत छटा घटित होती है।

उदाहरण के रूप में मीरा और मृगावती को लिया जा सकता है। इस विषय में ज्यादा बताने की आवश्यकता नहीं है कि मृगावती को भगवान महावीर से क्या मिला।

महेंद्र राजा की पुत्री अंजना जन्म से ही रूप-लावण्य से युक्त थी। संस्कारों से युक्त थी। राजा महेंद्र जब भी पुत्री को देखते तो आनंदित हो जाते थे। पुत्री का रूप, उसका सौंदर्य, उसका माधुर्य राजा को पुलकित करने वाला था। देखते-ही-देखते दिन निकले और एकदा अंजना को देखकर राजा महेंद्र के मन में विचार पैदा हो गया कि अहो! मेरी पुत्री यौवन की दहलीज पर आ गई, उस ओर मेरा ध्यान ही नहीं गया। अब मुझे इसका विवाह कर देना चाहिए। राजा ने एक सभा का आयोजन किया, जिसमें मुख्य-मुख्य चिंतक लोग उपस्थित थे। राजा ने कहा, अंजना विवाह के लायक हो चुकी है। आप लोग बहुत अनुभवी हैं, आप बताइए कि उसकी शादी किसके साथ की जाए जिससे वह सुखी रहे।

अधिकांश माता-पिता यह चाहते हैं कि हमारी संतान सुखी रहे। कोई माता-पिता अपना स्वार्थ देखने वाले भी हो सकते हैं कि बड़े घर में लड़की देंगे, उनसे अच्छा सम्पर्क हो जाएगा तो कठिनाई के समय में सहयोगी बनेंगे, पर अधिकांश माता-पिता संतान का हित चाहते हैं।

सम्राट महेन्द्र के पूछने पर एक मंत्री ने कहा, राजन! वर्तमान में रावण सबसे शक्तिशाली राजा है। रावण के साथ अंजना की शादी हो जानी चाहिए। ऐसा होने पर अपने को भी सुविधा मिलेगी, राज्य निष्कंटक रहेगा, क्योंकि रावण के साथ संबंध जुड़ जाने से किसी दूसरे राजा की आँख नहीं उठ सकेगी।

दूसरे मंत्री ने कहा, हम लड़की की खुशी चाहते हैं, उसकी सुविधा चाहते हैं या अपने राज्य की सुरक्षा पाना चाहते हैं? उस मंत्री ने कहा कि रावण के साथ शादी होने से अपना सम्बन्ध प्रगाढ़ हो सकता है, किंतु रावण के साथ वह कैसे सुखी रह पाएगी! क्योंकि रावण के पहले से अनेक पत्नियाँ मौजूद हैं। एक अन्य मंत्री ने कहा- रावण के साथ नहीं तो मेघनाथ के साथ शादी कर दी जाए, किंतु वह बात भी जँची नहीं। विद्युतप्रभ विद्याधर की बात सामने आने पर लोगों ने बात काट दी कि उसका आयुष्य कम है। उसके लिए भविष्यवाणी हुई है कि वह 18 साल की उम्र में दीक्षित हो जाएगा और 26 वर्ष की उम्र में उसे निर्वाण प्राप्त हो जाएगा। एक सुझाव आया कि सम्राट प्रह्लाद का पुत्र पवनकुमार बहुत ही सौंदर्ययुक्त है, संस्कारी है। अंजना की तरह सर्वगुण सम्पन्न है अत: सर्वथा रूप से योग्य है, उसके साथ शादी हो जानी चाहिए। शादी की बात हो गई।

पवनकुमार को अंजना के विषय में बहुत कुछ बातें सुनने में आई कि वह सौंदर्ययुक्त है, संस्कारयुक्त है आदि। पवन जी के मन में थोड़ा कौतूहल हुआ कि जिससे मेरी शादी होने वाली है, जिसकी इतनी प्रशंसा सुन रहा हूँ एक बार उसको देख लूँ तो ठीक रहेगा। उनके मन में ऐसा विचार बना, किंतु वह कहें किससे। माता-पिता से कहना उचित नहीं था। अपने मित्र प्रहस्थ से कहा तो उसने कहा कि इसमें क्या दिक्कत है, चलो चलते हैं, देख लेंगे।

दोनों गए। बगीचे में अंजना अपनी सखियों के साथ घुली-मिली हुई थी। अंजना की शादी तय हो जाने से सखियाँ मजाक कर रही थीं। बसंतमाला ने कहा कि तुम्हारी शादी होने वाली है, तुम्हें पतिव्रता धर्म का पालन करने का अवसर मिलगा। दूसरी सखी ने कहा, शादी होने वाली है यह तो ठीक है, किंतु विद्युतप्रभ के समान दूसरा वर नहीं हो सकता। पवन जी उसके सामने कुछ भी नहीं हैं। विद्युतप्रभ की होड़ करने वाला कोई नहीं है। दूसरी सहेली ने कहा, तुम जो कह रही हो वह ठीक है। विद्युतप्रभ अल्प आयुष्य वाला है उसके साथ हमारी सहेली कैसे सुखी रहेगी। विद्युतप्रभ की प्रशंसक सखी ने कहा- अल्प आयुष्य हो तो क्या हुआ, निर्वाण को प्राप्त करने वाला है। हमारी सखी को गौरव मिलेगा कि उसका पति दीक्षित हुआ, केवली हुआ एवं निर्वाण प्राप्त किया।

इस तरह की बात हो रही थी। पवन जी और प्रहस्थ दोनों उनकी बातें सुन रहे थे। पवन जी को बड़ा गुस्सा आया कि अंजना की सहेलियाँ मेरी निंदा कर रही हैं। पवन जी ने उनको मारने के लिए तलवार निकाल ली और गुस्से में आगे बढ़ने लगे। प्रहस्थ ने कहा, रुको! यह क्या कर रहे हो? तुम्हें पता नहीं है कि क्षत्रिय कभी भी अबला पर हाथ नहीं उठाता। क्या तुम अपने वंश को कलंकित करोगे?

पवन को बात समझ में आई और वे शांत हो गए। वे कहने लगे कि जिस अंजना की चर्चा सुन रहे थे कि इतनी सुंदर है, यह है, वह है, मैंने देख लिया कि उसने अपने होने वाले पति की निंदा सुनकर भी कोई जवाब नहीं दिया। कोई काट नहीं की। मुझे इससे शादी नहीं करनी। प्रहस्थ ने समझाया तो पवन शादी करने के लिए तैयार हुए, किंतु मन में एक गाँठ बाँध ली कि मैं इसका बदला लेकर रहूँगा। इसको कहते हैं वैरानुबंधी वैर की गाँठ बाँध लेना। इसके परिणाम क्रूर होते हैं। उन परिणामों को बार-बार संबल मिलता रहता है तो वह गाँठ प्रगाढ़ बन जाती है। वह गाँठ जब तक नहीं हटेगी, नहीं खुलेगी तब तक निर्वाण होने वाला नहीं है। तब तक मुक्ति होने वाली नहीं है।

ऐसी गाँठ जिसने भी बाँध रखी होगी वह कितनी भी धर्माराधना कर ले, फलवती नहीं हो सकती। इसलिए कहा जाता है कि पहले ग्रंथि विमोचन होना चाहिए। विचारों की गाँठों को खोलना जरूरी है। जब तक गाँठें नहीं खुलेंगी, तब तक मन शांत नहीं हो पाएगा। निर्भय नहीं हो पाएगा। वह प्राणी सत्य को स्वीकार करने में समर्थ नहीं हो पाएगा। ग्रंथि विमोचन होने के बाद ही धर्म की आराधना होती है। ग्रंथि खोलने के बाद ही की गई धर्माराधना फलदायी होती है।

इसको ऐसे समझा जा सकता है कि कई बीमार व्यक्तियों के शरीर के लिए पौष्टिक आहार हितावह नहीं होता। जैसे टाइफाइड से ग्रस्त व्यक्ति यदि गरिष्ठ भोजन करेगा तो वह उसके लिए भारी हो जाएगा। तकलीफदेह बनेगा। उस समय हलका-फुलका आहार लेना लाभकारी होता है। जो भोजन पच जाए वैसा लेना चाहिए। टाइफाइड ठीक होने के बाद शरीर को पुष्ट करने के लिए वह जो भी आहार लेगा, शरीर को पुष्ट करने वाला हो सकता है। इसी

तरह भीतर पड़ी गाँठ खुलने के बाद की गई धर्माराधना महत्त्वपूर्ण होगी। एक नवकारसी भी बहुत लाभ देने वाली हो सकती है, अन्यथा मास-मासखमण की तपस्या का परिणाम भी लाभदायक नहीं होगा।

खैर, अंजना की शादी हो गई। वह ससुराल में आ गई। पवन जी के दिमाग में पहले से ही बात जमी हुई थी कि ससुराल आने के बाद अंजना से बोलना नहीं है। उसकी तरफ देखना भी नहीं है। पवन जी ने गहरी गाँठ बाँध ली थी। वे 22 साल तक अंजना से नहीं बोले। अलग-अलग कथाओं में अलग-अलग समय बताया गया है। किसी कथा में 12 साल तो किसी में 22 साल बताया गया है। 22 साल तक पवन जी ने अंजना की तरफ देखा भी नहीं, बोले भी नहीं।

किसी औरत का पति पहले दिन से ही रुष्ट हो जाए, उससे बात नहीं करे, उसकी तरफ देखे भी नहीं तो उस पत्नी के लिए कितना कष्टकारी हो जाता है। इस युग में तो बारह दिन निकालना मुश्किल हो जाता है। भले ही सास-ससुर, ननद-देवर कितने ही हिल-मिलकर चलते हों, किंतु पति रुष्ट रहे तो पत्नी के लिए कठिन है ससुराल में रह पाना।

अंजना को उनकी सखी बसंतमाला कई बार कुछ-न-कुछ बोल देती। एक बार उसने कहा कि यह कोई बात होती है क्या जो पवन जी तुम्हारी तरफ देखते भी नहीं। उसने कहा कि हमसे यह देखा नहीं जाता। तुम्हारा कोई अपराध नहीं है। यदि उनके मन में कुछ बात थी तो शादी क्यों की। वे अच्छा नहीं कर रहे हैं। ऐसा करना हितकर नहीं है। जरूर उनका भी कुछ बुरा होगा।

अंजना ने कहा, बहन! ऐसी बात मत बोलो। वे मेरे पति हैं। मैं उनका कभी भी बुरा नहीं सोच सकती।

आप विचार करें कि अंजना क्या बोल रही है! अंजना क्या सोच रही है! अंजना बोल रही है कि मैं अपने पति का कभी बुरा नहीं सोच सकती। कभी अहित नहीं सोच सकती। बोलना तो बहुत दूर की बात है, मन में भी ऐसा विचार पैदा नहीं हो सकता। वे मेरे नाथ हैं। मेरे पति हैं। मेरे हृदयेश्वर हैं। मैं उनका अहित सोचूँ उससे पहले मेरी मृत्यु आना ही उचित होगा। मेरे स्वामी के लिए तुम ऐसी बात आगे कभी मत कहना।

'सती अंजना धीरज धारे, रूठे पवन नहीं मन हारे'

पवन जी रूठे हुए थे, किंतु अंजना ने मन से कभी हार नहीं मानी। एकबार बसन्तमाला ने कहा कि पीहर सूचना कर देते हैं किंतु अंजना ने कहा, नहीं, सूचना की आवश्यकता नहीं है। पीहरवालों को क्यों फालतू कष्ट में डालूँ। वे और चिंतित होंगे। उनमें तनाव होगा। मेरे कर्मों का भोग मुझे करना है। माता-पिता सहित कोई भी मेरे कर्मों का भोग भोगने में सहयोगी नहीं हो सकता। मुझे किसी को माध्यस्थ बनाने की आवश्यकता नहीं है। मेरे कर्म जिस दिन सही होंगे, जिस दिन मेरे कर्मों का योग बनेगा, जिस दिन योग सुधरेंगे, उस दिन पवन जी स्वत: चलकर आएंगे। मैं अपने प्रेम को कभी कम नहीं पड़ने दूँगी। अपने विश्वास को कभी खंडित नहीं होने दूँगी। पूरा जीवन निकल जाए तो भी मैं उनके अहित की वांछा नहीं कर सकती। और तुम भी मेरे आगे फिर से कभी ऐसी बात मत बोलना।

यह प्रेरणा लेने की बात है। खाली सुनने की बात नहीं है कि उसने कितना धैर्य धारण किया। भयंकर परिस्थितियों में भी धैर्य धारण किए रहना, यह बात बहनों के लिए ही नहीं है। हर किसी को धैर्य धारण करना चाहिए।

'धीरज धर रे मानवी, धीरज बढ़ावे मान'

धीरज से सारे कार्य संपन्न होते हैं। अधीरता से संपन्न हुए कार्य भी बिखर जाते हैं।

स्वेट मार्डन ने अपने शिष्यों से कहा कि धैर्य से सारे कार्य संपन्न होते हैं। एक विद्यार्थी ने कहा, गुरुदेव मैं यदि पानी को छलनी में लेना चाहूँ तो क्या यह संभव होगा? उन्होंने कहा, निश्चित रूप से होगा, बस तुम धैर्य रखो। जब तक पानी बर्फ न बन जाए तब तक धैर्य रखो। उतना धैर्य रखने पर छननी में पानी लिया जा सकता है। धैर्य की कोई सीमा नहीं होती। यह गुण असीम है। कोई प्रश्न करता है कि सहनशीलता कब तक रखी जाए? इस प्रश्न का समाधान है कि ऐसा विचार ही पैदा क्यों हो कि सहनशीलता कब तक रखी जाए! सहनशीलता को जीने वाले के मन में कभी ऐसा प्रश्न उठ ही नहीं सकता। वह मानता है कि यह जीवन की आब है। इसलिए सहनशीलता रखते जाओ... रखते जाओ... कार्य सिद्ध होगा। इसी प्रकार हर कार्य सिद्ध होता है

धैर्य से। अधैर्य कभी भी कार्य की सफलता में सहयोगी नहीं हो सकता। अधैर्य विफलता की ओर ले जाता है।

रावण के साथ वरुण का युद्ध होने वाला था। रावण ने यह जुबान दे दी कि वह शस्त्र नहीं उठाएगा। वरुण बहुत शक्तिशाली राजा था। रावण ने सोचा क्या किया जाए, कैसे किया जाए? उसके मंत्रियों ने सुझाव दिया कि प्रह्लाद जी को बुलाया जाए। वे आपके मित्र हैं, बड़े योद्धा हैं, युद्धवीर हैं। प्रह्लाद, पवन जी के पिता थे। राजा प्रह्लाद को संदेश पहुँचा, आपको युद्ध के लिए आना है। प्रह्लाद की तैयारी होने लगी तो पवन जी ने कहा, पिता जी! मेरे रहते हुए आप नहीं जा सकते। मैं समर्थ हूँ, मुझमें शक्ति है। उन्होंने कहा, देखो! वरुण राजा कोई सामान्य राजा नहीं हैं और युद्ध बड़े रहस्यमय हुआ करते हैं। युद्ध के रहस्यों को समझे बिना जीता नहीं जा सकता। एक-एक बारीकी पर ध्यान देना पड़ता है। सामने वाले के कृत्य को ध्यान में लेना पड़ता है। सावधान रहना पड़ता है।

'सावधानी हटी, दुर्घटना घटी'

भले कितना ही तेजस्वी राजा हो, कितने ही शत्रुओं से लोहा लेने वाला राजा हो, कितना ही युद्धवीर हो, एकांगी दृष्टि लेकर चलेगा तो पराजित हो जाएगा।

पवन जी ने कहा कि पिताजी! आप निश्चिंत रहिए। युद्ध की तैयारी होने लगी। पवन जी के जाने की बात हुई। बसंतमाला ने अंजना से कहा कि यह तो ठीक बात नहीं है। पवन जी कहीं युद्ध के लिए जा रहे हैं, युद्ध में क्या पता क्या हो। जीवन-मरण का खेल होता है युद्ध। ऐसे समय में तुमको उनसे मिलना चाहिए। एक बार आपकी भी राय लेते तो...

अंजना ने कहा, तुम इसकी चिंता मत करो। पवन जी मेरे दिल में बसे हुए हैं। बसंतमाला ने कहा, ऐसी बात नहीं है। तुम एक बार उनको पत्र लिखो, मैं जाकर उनके हाथ में थमा आऊँगी। अंजना पत्र लिखना नहीं चाहती थी। उसके मन में पूरा विश्वास था, धैर्य था, फिर भी उसके कहने से एक पत्र लिखा। वह उस पत्र को लेकर पवन जी के पास पहुँची। पवन जी ने पूछा, किसका पत्र है? पत्र के नीचे अंजना का नाम लिखा देखते ही उनको गुस्सा आ

गया। कहा कि तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई मेरे सामने पत्र लाने की। मैं जिसका मुँह नहीं देखना चाहता उसका पत्र लेकर तुम ऐसे समय में क्यों आई।

पवन जी ने उस पत्र को फाड़कर फेंकते हुए कहा- ले जाओ अपना पत्र वापस। बसंतमाला रोती-रोती आई और अंजना से कहने लगी कि कितना निष्ठुर पति है तुम्हारा, एक शब्द भी नहीं पढ़ा। अंजना ने कहा, ऐसा मत बोलो। जरूर कोई-न-कोई बात होगी, इसलिए वे ऐसा कर रहे हैं। मैं तो पत्र ही नहीं लिखना चाह रही थी। पवन जी मेरे हृदय में बसे हुए हैं। मैं हृदय से रोज दर्शन करती हूँ। मैं जैसे ही ध्यान करती हूँ वे मेरे सामने आते हैं। मैंने गुरु भगवंतों की सेवा में बहुत कुछ सीखा है। जब शादी नहीं हुई थी तब साधु-संतों का योग मिलता तो लाभ लेती थी। मन को पवित्र रखना, शत्रु का भी हित चाहना मैंने संतों से सीखा है।

अंजना ने विचार किया कि वे नहीं आ रहे हैं तो कोई बात नहीं। वे युद्ध में जा रहे हैं तो मेरा कर्तव्य बनता है उनके लिए सगुन करना। अंजना सुंदर वस्त्रों को पहनकर, हाथ में दही भरा कटोरा लेकर उस रास्ते पर खड़ी हो गई, जिस रास्ते से पवन जी जाने वाले थे।

पवन जी ने दूर से देखा कि कोई महिला सगुन के लिए खड़ी है। नजदीक आने पर जब अंजना को देखा तो दही के बरतन पर लात मारी जिससे दही गिर गया। पवन जी ने कहा- मेरे सामने क्यों आई, आने के लिए किसने बोला। मैं जिसका चेहरा देखना भी पसंद नहीं करता, वह मेरे सामने क्यों आ गई। वह अंजना को जबरदस्त डाँट-फटकार लगाने लगे, फिर भी अंजना धैर्य धारण किए खड़ी रही।

उसने कहा मेरी कोई गलती रही है। वह शांत भाव से अपने स्थान पर आ गई। कहते हैं कि पाप का भी घड़ा भरता है और पुण्य का भी घड़ा भरता है। किस समय पुण्य का योग आता है और किस समय पाप का योग आ जाता है यह कहना बहुत मुश्किल होता है।

पवन जी युद्ध के लिए चले। साथ में प्रहस्थ भी था। चलते-चलते रात हो गई। रात्रि विश्राम करने के लिए वे रुके। पवन जी को नींद आ गई थी। अचानक उनकी नींद खुल गई। उन्हें जंगल में चकवी का करुण क्रंदन सुनाई

दिया। उन्हें लगा कि जरूर किसी ने चकवे को सताया होगा, उसी के विरह में चकवी रो रही है। अब तक पवन जी ने यह माना था कि स्त्रियाँ क्रूर होती हैं, निष्ठुर होती हैं। उनके दिमाग में यही ग्रंथि पड़ी हुई थी। चकवी का रुदन सुनकर पवन जी उद्वेलित हो गए। पवन जी ने प्रहस्थ को उठाया और कहा भाई! मुझे नींद नहीं आ रही है। ऐसी-ऐसी बात हो गई। आज मुझे विचार आ रहा है कि 22 साल से मैं अंजना के साथ क्रूर व्यवहार कर रहा हूँ, उसका क्या हाल हो रहा होगा।

चकवी का करुण क्रंदन सुनकर पवन जी के विचार बदल गए। प्रहस्थ ने कहा कि मैं तो पहले भी बोलने वाला था, किंतु तुम सुनने के लिए तैयार ही नहीं थे। पवन जी ने कहा कि अब क्या हो सकता है?

आदमी धार ले तो क्या नहीं हो सकता। आकाश के तारे तोड़कर लाए जा सकते हैं। किसी युग में हमने सोचा नहीं होगा, किंतु आज यह बात कही जाती है कि चन्द्र पर, मंगल पर यान जा रहे हैं। चर्चा सुनी है कि अब सूर्य पर भी जाना है। कोशिश की तो कहाँ पहुँच गए। यह अलग विषय है, किंतु किसी ने कभी ऐसा सोचा भी नहीं होगा।

पवन जी, प्रहस्थ से कहते हैं कि मेरा दिमाग अभी काम नहीं कर रहा है, तुम बोलो क्या होना चाहिए? प्रहस्थ ने कहा, तुम तैयार हो तो रातों-रात अंजना से मिलकर वापस आ सकते हैं। पवन जी ने कहा, यह संभव है क्या? प्रहस्थ बोला, क्या संभव नहीं है। असंभव कुछ भी नहीं है। हमारे पास पवन वेग से उड़ने वाले घोड़े हैं। कहानी लम्बी है। इतनी लंबी कि चार महीने तक चलाएं तो भी समय कम पड़ जाए। 22 साल की कहानी 22 मिनट में पूरी नहीं हो सकती। फिर भी हम कहने की कोशिश कर रहे हैं।

पवन जी और प्रहस्थ रात्रि में पहुँचे। बिना किसी से कहे-सुने पहुँचे। अंजना जिस कमरे में थी उसके पास बसंतमाला और अंजना बातें कर रही थीं। पवन जी के विषय में ही बातें चल रही थीं। पवन जी ने उन बातों को सुना। सुनकर उनका वेग ठंडा हो गया। उनका क्रोध ठंडा हो गया। पवन जी ने देखा कि अंजना मेरे प्रति कितनी हित की भावना रख रही है। बसंतमाला कह रही थी कि तुम्हारे पति ने तुम्हारा अपमान किया, तिरस्कार किया तो अंजना

बोली, बहन! ऐसा मत बोलो। अपमान का बदला, अपमान से नहीं चुकाया जाता। खून से सना हुआ हाथ खून से नहीं धोया जा सकता। अपमान का बदला प्रेम से लिया जाता है। पवन जी के प्रति मेरे मन में पहले भी प्रेम था और आज भी उतना ही है। पहले भी उनको अपने दिल में प्रेम से बसाया था और आज भी वे उसी प्रकार से बसे हुए हैं।

यह बात सुन पवन जी का पारा ठंडा हो गया। इसी बीच अंजना को दरवाजा खटखटाने की कपाट खोलने की आवाज सुनाई पड़ी। अंजना ने कड़कते हुए कहा, कौन है? किसने रात्रि के समय आने की कोशिश की है? किसने सोचा कि कुमार नहीं हैं? किसने सोचा कि हम अकेले हैं? ध्यान रखना, सुबह ससुर जी से सारी बात स्पष्ट कह दूँगी फिर जो भी दंड होगा वह दिया जाएगा।

प्रहस्थ ने धीरे से कहा कि मैं पवन जी का मित्र हूँ। अंजना ने कहा, मैं कैसे मान लूँ? उसने खिड़की खोलकर देखा तो सचमुच में दोनों थे। अंजना ने दरवाजा खोला और 22 वर्षों के बाद दर्शन किए, चरण स्पर्श किए। पवन जी क्षमा माँगने लगे। कुछ ही समय वे रुके और वापस लौट गए। कहानी बहुत लम्बी है। इतने समय में पूरी कहानी कहना बहुत मुश्किल काम है।

अब आगे क्या होता है और क्या प्रसंग बनता है उस पर समय के साथ ही विचार कर पाएंगे, किंतु इतना अवश्य है–

'धीरज धर रे मानवी, धीरज बढ़ावे मान'

किसकी जीत हुई? 'सत्यमेव जयते।' सत्य की विजय होती है। धर्म श्रद्धा की विजय होती है। धैर्य की विजय होती है। इसलिए कहा गया 'धीरज धर रे मानवी।' अर्थात् धीरज धरो। धैर्य धरो। अधीर मत बनो। मन धैर्य धारण करने वाला होना चाहिए। सारी समस्याओं का समाधान धैर्य धारण करने से मिलने वाला है। अधीरता स्वयं अपने आपमें समस्या है। इसलिए धैर्य को अखंड बनाने की कोशिश करें। कितना भी संकट आ जाए, धैर्य अखंड रहना चाहिए।

यदि अपने धैर्य को खंडित नहीं होने देंगे तो कैसा भी संकट आ जाए कुछ फर्क नहीं पड़ेगा, ऐसा दृढ़ विश्वास होगा तो सफलता चरणों में आकर

झुक जाएगी। सफलता के पैर पकड़ने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी, बल्कि वह स्वयं हमारे पैर पकड़ेगी।

महासती श्री मल्लिका श्री जी म.सा. आज मासखमण के रथ पर आरूढ़ हो रही हैं। उन्होंने कल ही 30 के पच्चक्खाण ले लिए थे। कई भाई-बहनों में तपस्याएँ चल रही हैं। कुछ तपस्याओं के पारणे हो गए और कुछ तपस्याएँ चल रही हैं।

अपने आपमें यह बड़ा संकल्प है कि कुछ भी हो जाए मुझे धैर्य धारण करना है। धैर्य से सफलता प्राप्त होती है। आगे अंजना के विषय में क्या प्रसंग बनता है यह अभी कहना मुश्किल काम है, किंतु इतनी बात अवश्य ध्यान में लें कि धैर्य का फल मीठा होता है। इंतजार करो, इंतजार करो।

आप बोलेंगे कि कब तक इंतजार करें?

इंतजार करने की कोई सीमा नहीं है। इंतजार... इंतजार... और इंतजार... इंतजार करते रहो। इंतजार करते रहोगे तो तुम्हारा धैर्य अखंडित रहेगा। धैर्य अखंडित रहेगा तो निश्चित रूप से सफलता मिलेगी। इतना ही कहते हुए विराम लेता हूँ।

08 अगस्त, 2023

3

जीवन में क्रांति जगाए जा

शांति जिन एक मुज विनति, सुणो त्रिभुवन राय रे।
शांति स्वरूप केम जाणिये, कहो मन केम परखाय रे।।
धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।

धर्म की महिमा काफी समय से सुनते आ रहे हैं। धर्म की पहचान होना बहुत जरूरी है।

'सती अंजना धीरज धारे, रूठे पवन नहीं मन हारे'

सती अंजना बहुत धीर-गंभीर थी। उस पर कितने भी कष्ट आए, उपसर्ग आए, कठिनाइयाँ आईं उसने कभी दूसरों को दोष नहीं दिया।

धर्म की पहचान करना चाहते हैं तो इस बात की पहचान करें कि हमारे सामने कोई कठिनाई आने पर हम क्या विचार करते हैं! दूसरों को दोष देते हैं या अपने कर्मों का दोष मानते हैं!

अधिकांश व्यक्ति दूसरों को दोष देते हैं। दूसरों को दोष देते हुए कहते हैं कि उसने मेरे साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया। उसने मेरे साथ बहुत बुरा किया। ऐसा बुरा भगवान किसी के साथ नहीं करें।

22 वर्षों तक पवन जी अंजना से बोले नहीं, दर्शन नहीं दिए, बात नहीं की, सामने नहीं आए। यहाँ तक कि जब अंजना सगुन मनाने के लिए सामने गई तो दही के कटोरे पर भी लात मारी जिससे वह उसके हाथ से गिर गया। फिर भी अंजना मान रही है कि मेरे ही कर्मों का दोष है। 22 वर्षों के बाद जब पवन जी अंजना के पास आए, तब मिलाप हो गया।

पवन जी जब मिलकर जाने लगे तो अंजना ने कहा, नाथ! आप अभी

आए हैं इसकी जानकारी परिवारवालों को दे दें तो अच्छा है। नहीं तो आपके मिलाप से मेरे गर्भ में यदि कोई संतान रह गई हो तो मैं लोगों को क्या प्रमाण दूँगी। पवन जी ने कहा, अभी मैं जानकारी दूँगा तो उन्हें लगेगा कि रातों-रात आ गया, युद्ध से निकलकर आ गया। ऐसा कहना मेरे लिए अच्छा नहीं होगा। यह मेरे शौर्य को कलंकित करनेवाला काम हो जाएगा। पवन जी ने अपनी अँगूठी देते हुए कहा कि यदि कहीं प्रमाण देने की आवश्यकता पड़े तो अँगूठी दिखा देना।

अंजना गर्भवती हो गई। किसी ने अंजना की सास से कहा तो उसको विश्वास नहीं हुआ। वह जान रही थी कि मेरी बहू बड़ी सुशील है, धर्मनिष्ठ है। उन्होंने अंजना को बुलवाया। बुलाने पर अंजना पहले खुश हुई कि सास ने मुझे याद किया है, किंतु बाद में उसके दिमाग में एक बात पैदा हुई कि अचानक कैसे बुला लिया। अंजना को लगा कि जरूर कोई-न-कोई कारण होगा, अचानक बुलाने का कोई रहस्य होगा।

मन पवित्र होता है तो आगे की बात भाँप ली जाती है। लिफाफे को देखकर मजमून भाँप लिया जाता है कि इस पत्र में क्या लिखा होगा। हर व्यक्ति भले न भाँप सके, किंतु जिसकी मति, जिसकी बुद्धि पवित्र होती है, जिसका मन सरल और स्वच्छ होता है तो वह भाँप लेता है।

अंजना सास के पास गई। सास ने पहली नजर में अनुभव कर लिया कि वह गर्भवती है। गर्भ का अनुभव होते ही उसको क्रोध आ गया। इतना भयंकर क्रोध आया कि वह आपे से बाहर हो गई। अंजना को कुलटा-कलंकिनी आदि कहने लगी। कहा कि जब मेरा बेटा तुमसे बात ही नहीं करता, तुम्हारा मुँह ही नहीं देखता, तो यह पाप तुमने कहाँ से पाला।

अंजना ने सास को सही बात बताई, किंतु उस पर विश्वास करे कौन! यदि समझदारी से विचार किया होता तो बात स्पष्ट हो जाती कि जिसने 22 वर्षों में कोई गलत काम नहीं किया, वह अकस्मात ऐसा काम कैसे कर सकती है, तो बात स्पष्ट हो सकती थी। अंजना को ससुराल आए हुए कोई पाँच-छह महीने नहीं हुए थे। साल-दो साल नहीं हुए थे। 22 वर्षों से वह ससुराल में रह रही थी, किंतु कर्म योग होता है तो अच्छा कार्य भी बुरा हो जाता है। बुरा

किया हुआ और बुरा हो जाता है।

सास अंजना की बात मानने को तैयार नहीं थी। अंजना ने अंगूठी की बात बताई तो कहा कि यह तो कहीं भी इधर-उधर गिर सकती है और तुमने उठा ली होगी। सास ने अंगूठी पर भी विश्वास नहीं किया।

सास ने यह बात सम्राट से कही कि अंजना ने इस प्रकार से अपने खानदान को कलंकित कर दिया, सम्राट ने कहा- अब क्या करना चाहिए? सास ने कहा, इसको अपने मायके भेज दिया जाए। सम्राट प्रह्लाद ने वैसा ही विचार कर लिया। उन्होंने भी सत्य जानने की कोशिश नहीं की। एक रथ सजाया गया। अंजना उस पर आरूढ़ हुई। रथ मायके की दिशा में आगे बढ़ा। अंजना समझ गई कि क्या बात हो रही है।

अंजना ने रथी से कहा, भाई! तुम क्यों तकलीफ कर रहे हो, मुझे कहाँ छोड़ने की बात बताई गई है। उसने कहा, महेंद्रपुर के मार्ग तक। अंजना ने कहा, महेंद्रपुर यहाँ से नजदीक है, मैं चली जाऊँगी, तुम कष्ट मत करो। बसंतमाला को यह सब बहुत बुरा लग रहा था, किंतु वह करे क्या!

कहानी लंबी है, मैं संक्षेप में ही बता रहा हूँ। अंजना अपने पिता के द्वार पर पहुँची और द्वारपाल से निवेदन किया कि पिता जी से बोलो अंजना आई है। द्वारपाल अंजना को पहचान गया। उसने कहा, क्या बात है, अभी इस स्थिति में कैसे आना हुआ। अंजना ने सारी हकीकत सुनाई। द्वारपाल ने अंदर जाकर जैसे ही राजा महेंद्र से कहा कि अंजना पधारी है, तो राजा ने कहा पूरा नगर सजाया जाए।

द्वारपाल ने कहा, हुजूर आपकी आज्ञा सर-माथे पर है, लेकिन पहले सुन लीजिए, अभी वह उस रूप में नहीं आई है। जो बात अंजना ने द्वारपाल को बताई थी वही बात उसने राजा के सामने रखी। राजा महेंद्र ने कहा, ऐसी स्थिति में मेरे घर में प्रवेश करने का अवकाश नहीं है। उससे कहा जाए कि मेरे राज्य की सीमा से बाहर हो जाए। मंत्री ने सुझाव भी दिया कि एकदम ऐसी आज्ञा मत दीजिए, पहले सत्य की खोज करें। राजा महेंद्र ने कहा, सुनो, नियम सबके लिए समान होता है। मैं अच्छी तरह से जानता हूँ कि पवन जी अंजना से बात भी नहीं करते, फिर इस स्थिति की गहराई में जाने की आवश्यकता नहीं है।

उसको मेरे राज्य से बाहर निकलने का आदेश दे दिया जाए।

अंजना को आदेश मिला और वह जंगल में चली गई। संयोग से वन में एक महात्मा के दर्शन हुए। अंजना ने महात्मा से पूछा, भगवन्! पूर्व जन्म में मैंने क्या कृत्य किया, जिससे मेरे साथ ऐसी-ऐसी घटनाएँ घट रही हैं, ऐसे प्रसंग हो रहे हैं?

मुनिराज ने कहा, पूर्व जन्म में तुम महारानी थी। तुम्हारी सौत की संतान पैदा हुई। तुम्हारे संतान नहीं थी। एक बार तुमने उसके बच्चे को छिपा दिया। तुम्हारी सौत तुमसे बार-बार पूछने लगी। रुदन करने लगी। तुम्हारे चेहरे को देखकर उसने कहा, जरूर तुमने ही मेरे बच्चे को छिपाया होगा तो तुमने कहा, मैं ऐसा क्यों करूँगी। वह मेरी भी तो संतान है। वह कहती है कि आपकी भी संतान है, किंतु जैसा दर्द मुझे हो रहा है, वैसा दर्द आपको नहीं हो रहा है, इसलिए मेरे मन में आया कि आपने छिपाया होगा। वह बेचारी बावली हो रही थी कि मेरी संतान, मेरा पुत्र कहाँ चला गया। पड़ोसन ने तुम्हें समझाया तब तुमने उसके पुत्र को सौंप दिया। 22 घड़ी तक तुमने उसके पुत्र को छिपाकर रखा। उसका परिणाम तुम्हारे सामने यह आया कि 22 वर्ष तक पवन जी बोले नहीं। तुम्हारी तरफ देखा तक भी नहीं।

व्यवहार में बहुत छोटी बात लगती है, किंतु इसके परिणाम कितने बुरे होते हैं यह बात व्यक्ति नहीं समझ पाता है। महात्मा ने अंजना से यह भी कहा कि अब तुम्हारे कष्ट के दिन ज्यादा नहीं रहे। जल्द ही तुम्हारे सुदिन आने वाले हैं।

जंगल की गुफा में हनुमान का जन्म हुआ। उनके मामा को मालूम पड़ा, वह आकर उनको ले गया। यह सारा घटनाक्रम बना। यह घटनाक्रम बताना मेरा उद्देश्य नहीं था। मूल बात है कि अंजना पर इतनी कठिनाइयाँ आईं, किंतु सारी कठिनाइयों के लिए उसने अपने को दोष दिया। कहा कि मेरा दोष है। मैंने किसी जन्म में ऐसे कर्म किए होंगे।

पवन जी युद्ध करके लौटे। पवन जी लौटे तो अंजना के नहीं मिलने पर वे डिप्रेसन जैसी स्थिति में आ गए। उन्हें लगा कि अब मुझे अपनी जीवनलीला समाप्त कर लेनी चाहिए। क्यों जीना, किसलिए जीना। मेरे कारण

एक सती को कुंठित होना पड़ा।

प्रहस्थ के समझाने पर वे प्रहस्थ के साथ अंजना की खोज में निकले। महेन्द्र नगर पहुँचे वहाँ उनको हकीकत ज्ञात हुई, वे बिना भोजन किए वहाँ से निकल गए। घूमते-घूमते वे उसी जंगल में पहुँचे। जंगल में जाकर वे अत्यंत दुखी हो गए। सोचने लगे कि इस जंगल में अंजना का बचा रहना मुझे संभव नहीं लग रहा है। मुझे भी अब जीना नहीं है, मैं आत्महत्या करूँगा।

पवन जी के मित्र प्रहस्थ ने समझाया कि दोस्त! आत्महत्या समाधान नहीं है। हमको खोज करनी चाहिए। वह सती है, अपने सतीत्व के प्रभाव से वह बची भी होगी। हम ऐसा क्यों सोच रहे हैं कि उसे जानवर ने खा लिया होगा।

पवन जी मानने को तैयार नहीं। तब प्रहस्थ ने कहा, मैं प्रह्लाद जी से बात करके आता हूँ। फिर वे जैसा कहें वैसे करना।

सम्राट प्रह्लाद को जब मालूम हुआ तो वे बड़े दुखी हुए। प्रह्लाद जी वहाँ पहुँचे और पवन जी को समझाते हुए कहा कि हम खोज कराते हैं। खोज भी हो गई। अंजना का पता प्राप्त हो गया। वह मिल भी गई।

इतना कुछ होने पर भी अंजना ने कभी भी किसी को दोष नहीं दिया। न सास, न ससुर, न पति, किसी को दोष नहीं दिया। ऐसा नहीं कहा कि ससुराल वालों ने मेरे साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया, मायके वाले भी कठिनाई के समय नहीं रहे।

धर्म श्रद्धा की यह पहचान है कि वह दूसरों को दोष नहीं देता। वह यह मानकर चलता है कि मेरे ही कर्मों का उदय है। मैंने किसी जन्म में कोई बुरा कार्य किया होगा उसी का परिणाम भोगना पड़ रहा है। भगवान महावीर कहते हैं कि-

'अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य'

अर्थात् आत्मा ही कर्ता है और आत्मा ही विकर्ता है। आत्मा ही कर्मों को करने वाली है और कर्मों को बिखेरने वाली भी वही है। धर्म श्रद्धा कर्मों को बिखेरने वाली बनेगी। कोई व्यक्ति रोते-रोते कर्मों को भोगता है तो वह नए कर्मों का उपार्जन करता है और जो शांत भाव से कर्मों को भोगता है वह उन कर्मों को भोगता हुआ नए कर्मों का उपार्जन नहीं करता।

अंजना ने इस बात को बहुत अच्छी तरह से जाना था, इसलिए वह दूसरों को दोष नहीं देती। थोड़ा सा विचार करें कि हम भी धर्माराधना कर रहे हैं। धर्म श्रद्धा को हृदय में धारण करके चल रहे है, धर्म श्रद्धा को स्वीकार करके चल रहे हैं, किंतु किसी को दोष तो नहीं देते हैं। विचार करें कि अपने साथ कुछ भी बुरा घटने पर दूसरों को दोष देता हूँ या अपना ही दोष मानता हूँ। अधिकांश लोग दूसरों की तरफ अँगुलियां उठाते हैं, अपनी तरफ नहीं। लोग निमित्त को बहुत महत्त्व देते हैं, किंतु धर्मी पुरुष निमित्त को निमित्त मानते हैं। उपादान अपना मानते हैं।

धर्मी पुरुष सोचता है कि मेरे स्वयं का उपादान है, दूसरे का नहीं। यह दृष्टि जिस दिन आएगी उस दिन हम मोक्ष के बहुत नजदीक पहुँच गए होंगे। यदि जानना चाहते हैं कि मेरी मोक्ष की दूरी कितनी है तो यह हेतु बता सकता है कि आपका मोक्ष कितना दूर है।

सती अंजना के लिए बताया गया कि वह साधु जीवन स्वीकार करती है। देवलोक में गई, वहाँ से पुन: मनुष्य जन्म प्राप्त करके मोक्ष प्राप्त करेगी। यह अंजना की धर्म श्रद्धा का रिजल्ट है, निष्कर्ष है। एक जन्म पहले उसने अपने आपको इतना साध लिया कि मोक्ष से बस दो कदम दूर रह गई।

महासती मल्लिका श्री जी म.सा. की आज 31 की तपस्या है। उन्होंने जब तपस्या चालू की उस समय शासन दीपिका श्री जयश्री जी म.सा. ने फरमाया कि इनकी भावना तो बहुत ऊँची है... हालांकि थोड़े समय बाद चक्कर आने लगे, किंतु उनका कहना था कि मुझे आगे बढ़ना है और आज वे मासखमण पर आरूढ़ होकर कलश चढ़ाने की स्थिति में हैं। यदि शरीर ने साथ दिया होता तो ये अन्न से प्रेम नहीं करती।

अन्न हमारा उद्देश्य नहीं है। खाना हमारा उद्देश्य नहीं है। हमें अनाहारी बनना चाहिए। अनाहारक बनेंगे तो मोक्ष होगा। जब तक वह स्थिति पैदा नहीं हो, तब तक आर्तध्यान नहीं होना चाहिए। शरीर को बनाए रखने के लिए अन्न माध्यम बनता है।

कल आपने सुना था कि एक ही परिवार के पाँच सदस्य एक साथ दीक्षित हुए। प्राणेश मुनि जी, मल्लिका श्री जी, श्री कर्णिका श्री जी, श्री

कृतिका श्री जी व श्री जयेश मुनि जी। ये बाफना परिवार, राजनंदगाँव छत्तीसगढ़ से है। उत्कर्ष भावों के साथ जिन्होंने दीक्षा ली, साधु जीवन में प्रवेश किया। तपस्या तो पहले से ही इनकी चालू थी। तपस्या का विवरण कल सुनाया गया कि कौन-कौन सी तपस्या की है। यह भी प्रेरणा की बात है। यह भी समझने की बात है। बिना क्षयोपशम के हर किसी से तपस्या नहीं हो पाती। क्षयोपशम प्रबल होने से तपस्या हो पाती है।

आज कौन-सी तारीख है?

(श्रोतागण बोले- नौ तारीख है)

आज 9 अगस्त है। 9 अगस्त को क्या हुआ था?

'यह दिवस क्रांति का आया है, मन में क्या जोश भराया है,
यह दिवस क्रांति का आया है।'

वैसे अब कम हो गया होगा, किंतु कभी-कभी इस दिवस की स्मृति स्वरूप कुछ आयोजन किए जाते हैं। 'भारत माता की जय' बोलते हुए जुलूस निकाले जाते हैं, सभा हो जाती है और कार्य सम्पन्न हो जाते हैं।

मुंबई में आज के दिन एक उद्घोष हुआ था 'अंग्रेजों भारत छोड़ो।' महात्मा गांधी और अन्य लोगों ने यह आवाज बुलंद की थी, जो ज्वाला की तरह एकदम भड़क गई। पूरे भारत में फैल गई। इसलिए इसको क्रांति दिवस के रूप में माना जाता है। क्रांति करने वालों ने क्रांति की। हम क्या कर रहे हैं, यह चिंतनीय है।

आज हम क्या कर रहे हैं? क्या हो रहा है? हमने नारे लगा दिए, सभा कर ली। देशभक्ति की कुछ बातें कर ली और सोच लिया कि कार्यक्रम पूरा हो गया। हम यह देखें कि अपने कर्तव्य का निर्वाह करने में समर्थ हुए या नहीं! यह देखें कि अपने कर्तव्य का पालन करने में कहीं पीछे तो नहीं हट रहे हैं!

माता दुबकी सिसकी भरती, गम भरा हृदय आँखें झरती।
सुध ली या आंख मुंदाया है।। यह...

संतान का क्या कर्तव्य है? क्या माता दुख में जीए, सिसकियाँ भरे और संतान कान में तेल डालकर सोती रहे! माता के दुख-दर्द को दूर करने का दायित्व संतान का होता है। संतान जब तक माता का दर्द दूर नहीं कर ले तब

तक क्या विश्राम ले सकती है। दुख-दर्द दूर किए बिना उसको विश्राम लेना चाहिए क्या? माँ के दुखी होने पर कृष्ण वासुदेव कहते हैं कि धिक्कार है मुझे। जिसकी माता दुखी हो वह संतान किस काम की। मैं अपनी माता को दुखी देख रहा हूँ यह मेरे लिए कलंक की बात है।

हम भारत माता की जय बोलते हैं, प्रवचन माता की जय बोलते हैं। यदि राष्ट्र के हिसाब से बात करें तो राष्ट्र के प्रति हमारा क्या कर्तव्य है? अपने कर्तव्य के प्रति हम कितने सजग हैं? पिछले दिनों से देश में जो चर्चा हो रही है, उससे आप अनभिज्ञ नहीं होंगे। आपको पता होगा कि भारत के ही एक प्रांत मणिपुर में आपसी हिंसा का कैसा दौर चल रहा है। क्या-क्या दुर्घटनाएँ घटी हैं। राजनीतिक पार्टियाँ अपनी रोटियाँ सेकने में लगी हुई हैं।

समाधान की चिंता किसी को नहीं है। मणिपुर जले तो जलने दो, बस दिखाना है कि मणिपुर से बहुत हमदर्दी है। खाली हमदर्दी दिखाने से काम नहीं होता है। दायित्व क्या बनता है? हिंसा को रोकने के लिए क्या प्रयत्न किया? मिलजुलकर इस पर बात होनी चाहिए थी कि हिंसा कैसे रुकेगी। यह किसी एक पार्टी या एक व्यक्ति का काम नहीं है। किसी एक व्यक्ति के लिए यह कहना ठीक नहीं है कि उसने काम ठीक से नहीं किया। अरे भाई! उसने तो ठीक नहीं किया, किंतु तुम तो समाधान बताओ। गलती बताने में जो आगे रहते हैं गलती सुधारने में उनका दिमाग काम नहीं करता। समाधान नहीं दे पाते तो किसी की गलती क्यों बतानी। ऐसे समय में खाली भारत माता की जय बोलने से काम नहीं चलेगा। दूसरी बात अपने घर की है। हमें जन्म देने वाली माता यदि दुखी हो रही है तो हम कहाँ राष्ट्र तक जाएँगे।

देवताओं में एक बार विवाद हो गया। विवाद मनुष्य में ही नहीं, देवताओं में भी होता है। आपस में युद्ध हो जाते हैं, मार-काट हो जाती है। हालांकि देवता बिना मौत के नहीं मरते हैं, किंतु चोट उनको भी लगती है। पीड़ा उनको भी होती है। वेदना उनको भी भोगनी पड़ती है। इंद्र का वज्र लग जाए तो छह महीने तक दर्द होता रहता है।

देवताओं में विवाद हुआ कि पहले किसकी पूजा होनी चाहिए। सब देव अपनी-अपनी विशेषता का बखान कर रहे थे। उनके फॉलोवर्स चाहते हैं

कि हमारे देव की पूजा पहले होनी चाहिए। सभी देवता विष्णु जी के पास पहुँचे कि आप इसका निर्णय करें। विष्णु जी ने कहा, थोड़ा समय मुझे भी चाहिए। उन्होंने कहा कि जो पृथ्वी का तीन चक्कर लगाकर सबसे पहले आएगा उसकी पूजा पहले होगी।

देवताओं को पृथ्वी की परिक्रमा करने में ज्यादा देर नहीं लगती। सभी अपने-अपने वाहन से रवाना हुए। गणेश जी वहीं बैठे रह गए। उनको कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करूँ और क्या नहीं करूँ। उन्होंने अपनी माता पार्वती के तीन चक्कर लगाए और वापस अपने स्थान पर बैठ गए। दूसरे देवता आए। सभी हर्षित हो रहे थे कि मेरा नम्बर आएगा, मेरा नम्बर आएगा।

विष्णु जी ने निर्णय दिया कि सबसे पहले गणेश की पूजा होगी। बाकी सब देवता पृथ्वी की परिक्रमा के लिए दौड़े, किंतु गणेश जी अपनी माता के तीन चक्कर लगाकर बैठ गए। माँ तीर्थ है। लोग माँ को साता नहीं पहुँचा रहे हैं और तीर्थ यात्रा करना चाहते हैं। संत दर्शन करना चाहते हैं। यात्रा के लिए पूरे संघ को ला रहे हैं, संत के दर्शन के लिए पूरे संघ को ला रहे हैं और घर में माता दुखी हो रही है। घर में माता दुखी हो, तो संत दर्शन किस काम आएंगे!

माता दुबकी सिसकी भरती, गम भरा हृदय आँखें झरती।
सुध ली या आँख मुंदाया है।। यह...

माना के दिल में गम भरा हुआ है। आँखें झर रही हैं। उसकी सुध ली क्या? आपने अपने कर्तव्य का निर्वाह किया या नहीं?

जन्म देने वाली माता यदि दुखी होती है, कष्ट पाती है तो विचार करने की बात है, सोचने की बात है।

बंधुओ! विचार करें। मुनियों के लिए भी कहा गया है कि-

प्रवचन माता का हाल कहो, उपहास कभी ना उसका हो।
सुन राम! वीर फरमाया है।। यह...

श्रावक से साधु बनना जीवन की क्रांति है। जीवन की उत्क्रांति है। उत्क्रांति से लोग भ्रांति में आ जाते हैं कि यह कैसे, वह कैसे।

संसद में एक बिल पेश हुआ है। नरेंद्र जी (गांधी) मालूम है क्या कि कौन-सा बिल पेश हुआ है?

(नरेंद्र जी गांधी बोले– शादी–विवाह में फिजूलखर्ची रोकने के लिए)

100 की संख्या और 10 आइटम के लिए संसद में बिल पेश हुआ जबकि आपको उत्क्रांति में 31 आइटम बताए तो भी कम पड़ रहे थे। अब क्या होगा? कोरोना काल में शादियाँ हुई। करोड़पति सेठ के घर शादी हुई तो भी कितने लोग आए थे? दोनों तरफ से ग्यारह लोग।

'बींद, बींद रो भाई, तीजो बामण, चौथो नाई।'

ज्यादा जरूरत ही नहीं है। दोनों तरफ से ग्यारह लोग हो सकते थे। यदि ग्यारह सौ लोग होंगे तो भी लड़की किसको मिलेगी? सबको लड़कियां नहीं मिलेंगी। ग्यारह सौ लोग जाएं या ग्यारह लोग, जिसको मिलनी है लड़की उसको ही मिलेगी। आप कहेंगे कि पैसे किसलिए कमाए। हम अपना हर्ष प्रकट भी नहीं कर सकते, तो पैसे किसलिए कमाए। कहेंगे कि शादी क्या बार–बार होती है।

आजकल शादी बार–बार भी होती है। और खाली लड़के की ही नहीं, बल्कि लड़कियों की भी बार–बार होने लगी है। लोग कहते हैं कि लड़के की शादी बार–बार नहीं होती। हाँ! जैसे तुम कर रहे हो, वैसी शादी बार–बार नहीं होती होगी। पहली शादी जोर–शोर से की और दूसरी शादी पीछे के रास्ते से हो जाती है। यह कानून पास हो गया तो हर्ष कैसे प्रकट करोगे। आप यदि 10 आइटम से ज्यादा बना देंगे तो रंग में भंग होगा। पुलिस आकर खड़ी हो जाएगी।

हम मुनियों के लिए भी कहा गया है कि प्रवचन माता की गोद में तुम पल रहे हो। तुमने प्रवचन माता की गोद में जन्म लिया है।

जयं चरे जयं चिट्ठे, जयमासे जयं सुवे।
जयं भुजंतो भासंतो, पावं कम्मं न बंधई।।

सारी क्रियाएँ यतना से होनी चाहिए। हड़बड़ी में गड़बड़ी तो नहीं हो रही है? यतना की जगह अयतना तो नहीं हो रही है? हम मुनियों को ध्यान रखने की बात है कि हमारे कारण से प्रवचन माता की आँख में आँसू नहीं हो। हमारे द्वारा उसका उपहास नहीं हो। यतना से चलें। ऐसा न हो कि चलें किसी तरफ और देखें दूसरी तरफ। वचन भी आठ दोषों का परिहार करके बोलना चाहिए।

कष्टकारी, पीड़ाकारी बात साधु को नहीं बोलनी चाहिए। साधु ऐसी भाषा का उपयोग करता है तो वह प्रवचन माता का उपहास करनेवाला होता है।

इसी प्रकार गोचरी के लिए गया है तो भिक्षा यतना से ले ताकि पीछे रहनेवालों को तकलीफ नहीं हो। यह नहीं कि गए और पातरा भरके ले आए। ऐसा नहीं सोचना चाहिए कि अपना काम हो गया। इससे प्रवचन माता की आराधना नहीं होगी। भगवान कहते हैं कि मुनि द्वारा प्रवचन माता का उपहास नहीं होना चाहिए। अपनी माता का उपहास करोगे तो क्या जीवन में साधना हो पाएगी? जो प्रवचन माता की आराधना करता है, वह साधु है। संत है। मुनि है। वह सिद्धि को प्राप्त करनेवाला बन जाता है। जो प्रवचन माता का उपहास करता है वह कितना भी तप कर ले, कितना भी जप कर ले, कितनी भी साधना कर ले, सार्थक नहीं होगा।

जैसे गणेश जी ने माता पार्वती के तीन आवर्तन किए, वैसे ही मुनि प्रवचन माता की आराधना कर लेता है तो उसके जीवन की क्रांति होगी। वह मुक्ति का अधिकारी होगा। अन्यथा कितनी भी तपस्या कर ले, कितनी भी साधना कर ले, कितने भी नवकार मंत्र गिन ले, लाखों की जगह करोड़ों जाप कर ले, जीरो बटा जीरो ही रहेगा। इसलिए हम मुनियों को भी बहुत सावधान रहने की आवश्यकता है। सावधान होकर चलेंगे तो प्रवचन माता का उपहास नहीं होगा। यह सोचकर लापरवाह होकर मत चलना कि कौन देख रहा है। सिद्ध भगवान देख रहे हैं, अरिहंत भगवान देख रहे हैं। तुम स्वयं अनुभव कर रहे होते हो।

यदि मन में यह बात आ जाए कि कौन देख रहा है तो इसका मतलब है कि अरिहंत भगवान के प्रति, सिद्ध भगवान के प्रति अविश्वासी बने हुए हैं। उनके अस्तित्व को स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं। ऐसा विचार नहीं होना चाहिए। आत्म भाव से पाँच समिति, तीन गुप्ति का पालन होना चाहिए। मन से किसी के प्रति बुरा विचार नहीं करना, बुरा नहीं सोचना। वचन से किसी के साथ बुरा बरताव नहीं करना। काया से दोष वाली प्रवृत्ति नहीं करना। तीन करण तीन योग से प्रतिज्ञा की रक्षा करते हुए कदम आगे बढ़ाएंगे तो अपने आपको धन्य बनाएंगे। मनुष्य जीवन को सार्थक बनाएंगे। अन्यथा साधु की पोशाक पहनने से कुछ नहीं होगा।

'नहीं होगा कल्याण करनी काली है,
नहीं होगा भुगतान हुंडी जाली है।'

जाली हुंडी होगी तो कैसे भुगतान होगा? नकली नोट रखने पर पकड़े गए तो क्या होगा? जेल हो जाएगी। हम भी जाली काम करेंगे तो संसार की जेल में रहेंगे। खाली पोशाक पहन लेने से साधु नहीं बन पाएंगे। पोशाक साधु की पहन ली और काम काले कर रहे हैं, तो संसार की जेल में रह जाएंगे। किए-कराए पर पानी फिर जाएगा।

इसलिए शास्त्र कहता है कि-

'जस्सट्ठाए कीरइ नग्गभावे'

अर्थात् जिसके लिए तुमने साधु जीवन स्वीकार किया उसकी आराधना हो रही है या नहीं? साधु जीवन किसलिए स्वीकार किया? घर में खाने-पीने की कमी थी क्या? पहनने की कमी थी क्या? हमने साधु जीवन किसलिए स्वीकार किया यह सोचने की बात है। यह सोचने का विषय होना चाहिए कि मैंने जिस उद्देश्य से साधु जीवन स्वीकार किया वह पूरा हो रहा है या नहीं। सोचना चाहिए कि कहीं मैं खाने-पीने में ही तो नहीं रह गया हूँ, अहंकार की गोद में तो नहीं सो गया हूँ, यश-कीर्ति की चाह में तो नहीं पड़ गया हूँ!

यदि साधु-साध्वी इन बातों में पड़ गए कि मुझमें इतना ज्ञान है, मैं व्याख्यानी हूँ, तो कल्याण नहीं होगा। इस संसार से पार होना बड़ा दुष्कर है। यहाँ से निकलना बड़ा कठिन है, दुरूह है। यहाँ से निकलने के लिए निर्लेप होना पड़ेगा। प्रवचन माता की गोद में सुरक्षित होना पड़ेगा। सुरक्षित स्थान बना लिया तो फिर संसार में रोकनेवाला कोई नहीं होगा।

श्रावक को अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए। अपने कर्तव्य पर दृढ़ रहना चाहिए। यह क्रांति दिवस कर्तव्य पालन की दिशा में आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है। अपने कर्तव्यों का पालन करें। ऐसा लक्ष्य बनाएंगे तो अपने आपमें धन्य बनेंगे। फिलहाल इतना ही कहते हुए विराम लेता हूँ।

09 अगस्त, 2023

4

आपद में ना शीश झुकाना

शांति जिन एक मुज विनति, सुणो त्रिभुवन राय रे।
शांति स्वरूप केम जाणिये, कहो मन केम परखाय रे।।
धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।

भगवान महावीर से जब यह प्रश्न पूछा गया कि धर्म की श्रद्धा पैदा होने से जीव को क्या लाभ होता है? किस फल की प्राप्ति होती है? तो भगवान ने जो उत्तर दिया उसका सार मेरी दृष्टि में इस प्रकार है कि सद् विवेकिनी प्रज्ञा जागृत होती है।

जिसकी यह प्रज्ञा जागृत होती है वह सोचता है कि सत्य क्या है असत्य क्या है, इनमें डिफरेंस क्या है, इसकी छँटनी कैसे की जाए, कौन अपना है और पराया कौन है, किसको रखना और किसको हटाना है। इस प्रकार की प्रज्ञा सद् विवेकिनी मानी जाती है। इसमें उसकी आत्म-स्थिति अलग ही बन जाती है। उसको लगता है कि इतने समय तक मैंने जिनको रत्न समझा, वे सारे कंकड़ निकले। जिनको मैंने अपना समझा, वे पराये निकले।

यह ज्ञान, यह बोध धर्म श्रद्धा से पैदा होता है। जिसे यह बोध हो जाता है, उसका अँधेरा छँट जाता है। सत्य रोशन हो जाता है। धन-वैभव के प्रति रहा लगाव, आसक्ति का भाव किनारे हो जाता है।

थोड़ी देर के लिए मान लीजिए कि आपने एक लाख दस हजार रुपए में कोई रत्न खरीदा। आपने उस रत्न को संभाल करके रखा। थोड़ी कठिनाई का क्षण आने पर आपने सोचा कि अब रत्न बेच देना चाहिए। आप रत्न बेचने के लिए गए। जौहरी ने कहा, इसकी फूटी कौड़ी भी नहीं मिल सकती, क्योंकि यह तो कंकड़ है, काँच का टुकड़ा है।

ऐसे में क्या विचार करेंगे आप?

शायद आपको जौहरी पर विश्वास नहीं होगा। आप सोचेंगे कि जौहरी ठगना चाहता है। आप दूसरे-तीसरे जौहरी के पास गए। सबसे एक ही जवाब मिला। फिर भी शायद आप विश्वास नहीं करेंगे। आप स्वयं रत्न परीक्षक बन गए। रत्न परीक्षक बनने के बाद आपने उस रत्न को देखा तो आपको पता चला कि यह तो वास्तव में कंकड़ है। अब आप उस कंकड़ को अवेर कर रखेंगे या फेंक देंगे?

(श्रोतागण बोले- हाथ से निकाल देंगे)

सहसा फेंकना मुश्किल होगा। भले ही आप फेंकेंगे नहीं, किंतु मन में होगा कि यह काम का नहीं है। वैसे ही धर्म श्रद्धा हमें यथार्थ जानने की दृष्टि देती है कि सत्य क्या है, यथार्थ क्या है।

विश्वास फल देने वाला होता है, किंतु कई बार हमारे विश्वास के साथ जब दूसरी बात टकराने लगती है तो हम उस पर विश्वास करने के लिए तैयार नहीं होते, किंतु जब दृष्टि खुलती है तो विश्वास करना ही पड़ता है।

आज निर्वाण मुनि जी ने आपको सुनाया कि धन-वैभव, पत्नी अपने नहीं हैं। आप भी समझ रहे हैं कि ये अपने नहीं हैं, किंतु जो विश्वास होना चाहिए वह अभी कारगर नहीं हो रहा है।

जंबू कुमार की दृष्टि खुल गई। सुधर्मा स्वामी का एक व्याख्यान सुनने के बाद उनकी दृष्टि एकदम स्पष्ट हो गई। उनके घर पर विवाह-शादी के गीत गाए जा रहे थे। शहनाइयाँ बज रही थीं। जंबू कुमार क्या विचार कर रहे थे? उनका विचार क्या बना? ऐसे समय में सामान्यतया कोई भी कहेगा कि अरे! तुम यह क्या कर रहे हो। जिन कन्याओं के साथ तुम्हारा संबंध हुआ उनका क्या हाल होगा। ये बातें उनके सामने भी आईं। माता-पिता और सास-ससुर के द्वारा आईं। स्वयं उन लड़कियों के द्वारा आईं कि आपको दीक्षा ही लेनी थी तो शादी के लिए तैयारी क्यों की?

जिस समय संबंध जुड़ा था, विवाह की तैयारियाँ हुई थीं उस समय उनमें वह समझ नहीं थी, किंतु सुधर्मा स्वामी द्वारा आँख का ऑपरेशन करने के बाद समझ पैदा हुई। आप कहेंगे कि आचार्य भी ऑपरेशन करते हैं क्या?

आचार्य, अज्ञान का ऑपरेशन करते हैं। अज्ञान की दृष्टि का ऑपरेशन करते हैं। सबके सामने सत्य प्रस्तुत करते हैं। आचार्य यह नहीं कहते कि हमारा कहा हुआ मान लें। भगवान महावीर का यह आग्रह नहीं रहा कि मैं जो कहूँ उसे स्वीकार करो। भगवान महावीर ने कहा–

'अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह।'

अर्थात् जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो। दुकानदार द्वारा यह बता दिया जाता है कि कपड़ा ऐसा होता है, इस कपड़े का यह गुण धर्म है। यह सोना है, यह चाँदी है। यह हीरा है, यह पन्ना है, यह मोती है। इनके ये गुण हैं, इनको धारण करने से यह–यह लाभ होता है। ये बातें बता देने के बाद निर्णय किसको करना पड़ेगा?

भगवान कहते हैं कि निर्णय स्वयं का होना चाहिए। दूसरों के निर्णय से चलने पर ठोकर लगेगी और मन में विचार पैदा हो जाएगा कि सामनेवाले ने सही रास्ता नहीं बताया, इसलिए ठोकर लग गई। स्वयं निर्णय करने से अपनी दृष्टि स्पष्ट रहेगी। तब ठोकर लगने पर संभलेंगे। क्योंकि निर्णय हमारा है, हमने रास्ता चुना है। किसी के कहने से नहीं, स्वयं से रास्ता चुना है। इसी प्रकार हमारी धर्म आराधन समझपूर्वक होनी चाहिए। नासमझी से की गई धर्म आराधना से फायदा नहीं होगा।

किसी डॉक्टर से दवाई ली, किसी वैद्य से औषधि ली और उस पर आपको विश्वास नहीं हो, भरोसा नहीं तो वह दवाई–औषधि कारगर नहीं हो पाएगी। जिस डॉक्टर पर, जिस वैद्य पर विश्वास रहता है वह राख की पुड़िया दे दे तो भी आपको लाभ मिल जाएगा।

आचार्य पूज्य गुरुदेव एक आख्यान फरमाया करते थे। एक घटना सुनाया करते थे। जमाना वह था जब टी.बी. की बीमारी आज के कैंसर के समान मानी जाती थी। आज का कैंसर तो फिर भी लाइलाज नहीं रहा। डॉक्टर कहते हैं कि कैंसर हमारी मुट्ठी में है। वैसे एड्स को आज भी लाइलाज कहा जा सकता है। एक जमाना था जब टी.बी. की बीमारी भी लाइलाज मानी जाती थी।

एक सेठ को टी.बी. हो गई। डॉक्टरों को दिखाया, एक्सरे करवाए, जाँचें करवाई। सारी जाँचें हो गईं। डॉक्टरों ने कहा, सर! आपको टी.बी. की

बीमारी है। लाइलाज बीमारी है। बीमारी इतनी आगे बढ़ गई कि अब इसका कोई इलाज होना नहीं है। सेठ को डॉक्टरों पर विश्वास नहीं हुआ। सेठ दिल्ली, मुंबई, जयपुर अलग-अलग डॉक्टरों के पास गया। जाँचें होती गईं और डॉक्टरों ने अपनी-अपनी राय दी, किंतु सभी का लगभग एक ही इशारा था कि अब इसका इलाज होना नहीं है।

सेठ ने विचार किया कि मैंने दिल्ली, मुंबई, जयपुर आदि-आदि जगह दिखा दिया, किंतु अपने मित्र डॉक्टर से कोई सलाह नहीं ली। उससे भी राय ले लेनी चाहिए। वह उस डॉक्टर के पास गया, अपनी फाइल दिखाई।

डॉक्टर ने कहा, अभी मैं व्यस्त हूँ, बाद में परामर्श दूँगा। सेठ ने कहा, ठीक है। पहले के डॉक्टरों की राय से वह अधमरा हो गया था। मन से मर गया था। मन से मर जाने का मतलब है कि मन में सोच लिया कि अब इलाज होना मुश्किल है। कुछ भी इलाज नहीं है। अब जितना समय निकालना है वह निकालना है।

एक दूसरा सेठ भी उस डॉक्टर का मित्र था। उसको भी बीमारी थी। उसकी भी फाइल आई हुई थी दोनों की फाइलें देखकर डॉक्टर ने दवाई लिख दी। डॉक्टर ने एक फाइल में लिखा, माई डियर! तुम्हें तीसरे स्टेज की टी.बी. हो गई है। इसका कोई इलाज नहीं है। भगवान का भजन करो और सुख से जीओ। दूसरी फाइल में लिखा कि तुम्हें सरदी-जुकाम हो गया है। सामान्य बीमारी है। गुड़-सोंठ का सेवन करो उससे फायदा होगा।

डॉक्टर ने ऐसा लिखकर अपने कर्मचारी को दिया कि दोनों सेठों के यहाँ पहुँचा देना। फाइल देते समय परामर्श की पर्ची बदल गई। इधर-उधर हो गई। जिस सेठ को टी.बी. थी उसके पास सामान्य बीमारी वाली पर्ची चली गई और जिसको सामान्य बीमारी थी उसके पास टी.बी. वाली पर्ची चली गई। जिस सेठ को टी.बी. की बीमारी थी उसके पास जब पर्ची पहुँची तो उस सेठ ने विचार किया कि मैं बड़े-बड़े डॉक्टरों के पास गया और सबने कहा कि इसका कोई इलाज नहीं है। सभी डॉक्टर पैसे कमाने के लिए इतनी-इतनी जाँचें करा लेते हैं। पहले ही अपने मित्र को दिखा दिया होता तो इतना फिरना नहीं पड़ता, इतने पैसे नहीं लगाने पड़ते। पहले ही पूछ लेता तो इतने चक्कर नहीं लगाने पड़ते।

यह भी एक सत्य है कि आदमी जब चारों तरफ हारता है, तब कहीं जाकर विश्वास करता है। अभी तक वह सेठ पलंग पर था, निस्तेज था। डॉक्टर का पत्र मिलते ही वह उठा और एकदम सक्रिय हो गया। वह पोतों के साथ खेलने लगा, उनको खिलाने लगा और घर वालों से कहा कि मुझे गुड़ और सोंठ खिलाओ, मैं ठीक हो जाऊँगा।

डॉक्टर ने एक बार विचार किया दोनों से मिलने का। उनका हाल लेने का। डॉक्टर पहले वाले सेठ के पास गया तो वह तो हँसी-खुशी के साथ, बड़े उत्साह के साथ हाथ मिला रहा था। वह डॉक्टर से कहता है कि तुम्हें जितना धन्यवाद दूँ कम है। बड़े-बड़े डॉक्टरों को दिखा दिया, किंतु बीमारी ठीक नहीं हुई। तुमने मेरी बीमारी ठीक कर दी। मैं स्वस्थ हो गया।

डॉक्टर को मन-ही-मन हँसी आ रही थी कि यह खेल मेरी चिट्ठी का है। चिट्ठी के कारण यह खेल हो रहा है। डॉक्टर ने अब दूसरे सेठ से मिलने का विचार किया। डॉक्टर दूसरे सेठ के वहाँ गया तो कोहराम मचा हुआ था। सेठ खाट पर सोया हुआ था कि अब तो तीसरे स्टेज की टी.बी. है। डॉक्टर ने सर्टीफिकेट दे दिया कि घर पर आराम करो। भगवान का भजन करो, सुख से रहो।

डॉक्टर ने उसे समझाया कि तुम जैसा सोच रहे हो वैसी बात नहीं है। मेरा एक और मित्र है और मैंने दोनों को चिट्ठी लिखी थी। पहले मित्र को भी चिट्ठी लिखी और आपको भी लिखी थी। वे चिट्ठियाँ इधर-उधर हो गईं। आपको टी.बी. नहीं है। आपको खाली सरदी-जुकाम है। आपको हल्का-फुल्का बुखार है।

सेठ ने कहा, तुम ठीक कह रहे हो ना?

डॉक्टर ने कहा कि मैं सही कह रहा हूँ, मेरा विश्वास करो।

मेरे कहने का आशय है कि जहाँ विश्वास होता है वहाँ गुड़ और सोंठ भी काम कर जाता है। गुड़ और हल्दी भी कारगर हो जाती है। हल्दी और सोंठ भी काम कर जाती है। जब तक विश्वास नहीं होता, तब तक कितनी भी अच्छी बात हो हम उसको स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होंगे। जब दृष्टि स्वयं की बनेगी तब विश्वास करेंगे कि सत्य क्या है, यथार्थ क्या है।

भगवान से पूछा गया कि भगवन्! धर्म की श्रद्धा से जीव को किस फल की प्राप्ति होती है?

भगवान ने जवाब दिया कि सद् विवेकिनी प्रज्ञा का जागरण होता है। यह प्रभु के उत्तर का निष्कर्ष है ऐसा समझें।

'आपद में न शीश झुकाना, यह हमने अरणक से जाना'

अरणक का जीवन वृत्तांत इसी चातुर्मास में सुनाते हुए मैंने बताया था कि अरणक समुद्र की यात्रा कर रहा था। व्यापार के लिए उसकी यात्रा चल रही थी। देव ने दो अँगुलियों पर जहाज को उठा लिया और कहने लगा कि तुम अपने धर्म को छोड़ो। तुमने जो पाँच अणुव्रत, तीन शिक्षाव्रत और चार गुणव्रत स्वीकार कर रखे हैं, उनको नहीं छोड़ोगे तो मैं जहाज को ऊपर से नीचे गिरा दूँगा। समुद्र में गिरा दूँगा, जिससे जहाज के टुकड़े-टुकड़े हो जाएंगे। तुम्हारा सारा माल समुद्र में डूब जाएगा। उनको तुम्हें छोड़ना ही पड़ेगा।

अरणक अपने धर्म ध्यान में मशगूल रहा। वह अपनी धर्म श्रद्धा पर सुदृढ़ रहा। उसका लक्ष्य स्पष्ट था कि धर्म से यदि तिरा नहीं जा सकता, तो अधर्म से तो कभी नहीं तिरा जा सकता।

तिराने वाला कौन है? तिरानेवाला धर्म है या अधर्म?

(श्रोतागण बोले- धर्म तिरानेवाला है)

हमें धर्म प्रिय है या अधर्म?

(श्रोतागण बोले- धर्म प्रिय है)

सत्य धर्म है या असत्य?

(श्रोतागण बोले- सत्य धर्म है)

हम किस पर चल रहे हैं? सत्य पर चल रहे हैं या असत्य पर?

अब मत बोलना। अब आवाज मत निकालना। अब बोलने में ज्यादा फायदा नहीं है। क्रोध धर्म है या पाप? हम तो कभी क्रोध नहीं करते? अहंकार में धर्म है या अधर्म?

(श्रोतागण बोले- अहंकार अधर्म है)

लोग किसमें जी रहे हैं?

लोग अहंकार में जी रहे हैं। लोगों को अहंकार है कि मुझमें इतना ज्ञान है। मैंने इतने आगमों का ज्ञान किया। बड़े-बड़े सेठों से भी बढ़कर मेरे पास धन है, मैंने भरपूर संपत्ति कमा ली। पता नहीं किस-किस प्रकार का

अहंकार हमारे भीतर पैदा हो जाता है। जाति का मद, कुल का मद रहता है कि मेरा खानदान ऊँचा है। मेरा परिवार बड़ा है। मैं विशेष परिवार का सदस्य हूँ। मेरा उठना-बैठना बड़े-बड़े सेठों के साथ है। राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री तक मेरी पहुँच है। मेरी समता विशेष है। ये सारे अहंकार कौन पालता है? यह धर्म है या अधर्म?

(श्रोतागण बोले- अधर्म है)

हम जानते हैं कि अहंकार और क्रोध धर्म नहीं हैं, किंतु धर्म क्या है यह नहीं जानते। हमने अभी तक यह समझा नहीं है कि धर्म क्या है। बिना समझे धर्म की समझ पैदा नहीं होगी। भगवान से पूछा गया कि धर्म की श्रद्धा से जीव को किस फल की प्राप्ति होती है, क्या लाभ होता है तो भगवान ने बताया कि '**सायासोक्खेसु रज्जमाणे विरज्जइ।**' यह ज्ञान सद् विवेकिनी प्रज्ञा से प्रकट होता है इसलिए उसे धर्म श्रद्धा का फल कह दिया गया है। उसी प्रज्ञा से यह जाना जा सकता है कि धर्म क्या है, अधर्म क्या है, सत्य क्या है, असत्य क्या है? सुख का सच्चा स्वरूप क्या है?

अरणक श्रावक सत्य को जान रहा था। धर्म को जान रहा था। उसने धर्म को जान लिया था। जिसने धर्म को जान लिया वह उसे छोड़ नहीं सकता। जिसने सिर्फ पोशाक पहनी है वह छोड़ सकता है। वह पोशाक उतार सकता है, किंतु जिसने धर्म को अपने जीवन में रमा लिया वह उसे नहीं हटा सकता। हाथ में पकड़ी हुई ग्लूकोज की बोतल छोड़ी जा सकती है, किंतु शरीर में चला गया ग्लूकोज बाहर नहीं निकाला जा सकता। जैसे शरीर में गया ग्लूकोज बाहर नहीं निकाला जा सकता, वैसे ही रोम में रोम रमा हुआ धर्म छूट नहीं सकता। देव-दानव कोई भी छुड़ाने की कोशिश कर ले, धर्म छूट नहीं सकता।

कोई कहे कि आपका हार्ट निकाल दें तो निकलवाने के लिए आप तैयार होंगे क्या? आप तैयार नहीं होंगे, क्योंकि आपको पता है कि हार्ट निकाल देने के बाद रहेगा क्या। चलो, हार्ट को छोड़ो। कोई कह दे कि आपकी किडनी-गुर्दा निकाल दें, तो आप तैयार होंगे क्या? इसको भी जाने दो। कोई कहे कि आपके शरीर में जितना भी खून है उसको निकाल दें तो क्या आपकी तैयारी होगी?

आप तैयार नहीं होंगे, क्योंकि आप जान रहे हैं कि हार्ट के बिना, गुर्दे के बिना, खून के बिना जीवित नहीं रह सकते। वैसे ही जिसने जान लिया कि धर्म मेरे प्राण हैं, वह धर्म को छोड़ नहीं सकता।

अरणक श्रावक अपने व्रत में स्थिर है। वह धर्म छोड़ने को तैयार नहीं हुआ। यह देख देव ने कहा, देख लो। देव ने तीन बार बात दोहराई, पर अरणक श्रावक का मन चंचल नहीं हुआ। देव ने अपना प्रयत्न कर लिया। डराया-धमकाया, लाभ-हानि दिखाया किंतु अरणक श्रावक झुका नहीं। वह धर्म के प्रति दृढ़ रहा।

'आपद में ना शीश झुकाना, यह हमने अरणक से जाना'

क्या जाना? किससे जाना? अरणक से जाना कि कठिनाई में भी धर्म को नहीं छोड़ना। ऐसा नहीं कि जब तक कोई कठिनाई नहीं है तब तक धर्माराधना करें और थोड़ी कठिनाई आते ही...

जैसे अभी निर्वाण मुनि जी म.सा. बता रहे थे कि पत्नी ने कहा कि क्या मिला धर्म करके। न घर है, न मकान है। यह सुनकर पति ने धर्म छोड़ दिया। धर्म छोड़ दिया, किंतु प्राप्त क्या हुआ? बंगला बन गया। बड़ी खुशी में जी रहा था और हार्ट अटैक आया तो वह व्यक्ति खत्म हो गया। अब बताओ, वह बंगला किस काम आया, किसके काम आया? किसी ने बचाया क्या? पत्नी, बच्चे, पोते ने बचाया क्या? कोई बचाने में समर्थ नहीं हो पाया।

'मौत की हवा का झोंका एक आएगा, जिंदगी का वृक्ष तेरा टूट जाएगा'

किसका वृक्ष टूट जाएगा?

जिंदगी का वृक्ष टूट जाएगा। हम सोच भी लें कि मेरी जिंदगी का वृक्ष टूटने वाला नहीं है, वृक्ष टूटेगा तो दूसरे की जिंदगी का टूटेगा। मेरे जीवन का वृक्ष गिरने वाला नहीं है। मौत की हवा का झोंका भी मेरे वृक्ष को गिराने में समर्थ नहीं होगा। क्या ऐसा सोचना सही है? मैं समझता हूँ कि ऐसी भूल आप नहीं कर रहे हैं।

यह तो आपको भी पूरा भरोसा है कि एक दिन जाना पड़ेगा। 'राम नाम सत है, सत से मुगत है' वाले मार्ग से जाना पड़ेगा। यह नहीं पता कि कौन-से चौक से निकलेंगे, किंतु एक दिन जाना ही होगा।

कल रात में उपाध्यायश्री जी प्रश्नोत्तरी के समय सुना रहे थे–

'सज-धज कर जिस दिन मौत की शहजादी आएगी,
ना सोना काम आएगा, ना चाँदी आएगी।'

जब मौत की शहजादी सज-धज के आएगी तो कुछ भी काम आने वाला नहीं है। न सोना काम आएगा और न चाँदी। मान लीजिए आपने सोने का अंबार लगा लिया किंतु वह भी खतरे से खाली नहीं है, क्योंकि मोदी जी की आँख बहुत गहरी है। वे सेटेलाइट की तरह देख रहे हैं कि धन कहाँ गड़ा हुआ है। कहाँ कितना धन है। ऐसी मशीनें भी आ गईं है जो तीन मंजिल नीचे तक की चीजें देख लेती है। वे आपको धन हजम नहीं करने देंगे। आप कितना भी इकट्ठा कर लो, किंतु जब आपकी आँखों के सामने उसे ले जाया जाएगा उस समय कलेजा फटने लगेगा कि यह क्या हो रहा है। उस समय शायद आवाज भी न निकले और आदमी धड़ाम से नीचे गिर जाए। धन गया तो गया, तन भी चला गया।

क्या रहा अपना? किसको कहें अपना? जिन्हें अपना मान रहे हैं, उस समय वे कुछ भी काम आने वाले नहीं हैं। यह बात आप भी अच्छी तरह से जान रहे हैं, किंतु जो गहरी श्रद्धा होनी चाहिए, वह अभी नहीं है। निगाह जैसी बननी चाहिए, वैसी बन नहीं पाई है। जैसी नजर जंबू कुमार की बनी थी वैसी नहीं बनी है। वैसी नजर बनेगी तो फिर इन भाटों पर नहीं बैठे रहेंगे।

आखिर में देव ने अरणक श्रावक को नमस्कार किया और कान के कुंडल भेंट कर कहा कि देवलोक में तुम्हारी धर्म दृढ़ता की चर्चा हो रही थी। मैंने सुना तो विश्वास नहीं हुआ, इसलिए मैं तुम्हारी परीक्षा करने आ गया। मैंने जितना सुना उससे भी ज्यादा प्रत्यक्ष देख लिया।

सुनंदा की कहानी चल रही है।

सुंदर हो संस्कार, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...
बात एकदा बिगड़ी ऐसे, विजय बोला विलंब कैसे।

विजय चाह रहा था कि सुनंदा, सुरेश का ध्यान नहीं रखे, किंतु प्रत्यक्ष में ज्यादा बोल नहीं पा रहा था। मन-ही-मन गुस्सा करके रह जाता था। एक दिन विजय को मौका मिल गया। 'सौ सुनार की, एक लुहार की।' एक

दिन भोजन में थोड़ी देर हुई तो विजय का गुस्सा आसमान पर चढ़ गया। विजय गुस्से में बोलने लगा कि आज इतना विलंब क्यों हुआ? क्या कारण हुआ जो अभी तक खाना तैयार नहीं हुआ?

सुनंदा ने शांत भावों से कहा कि आज सुरेश को तेज बुखार आ गया, मैं उसको संभालने में लग गई, इसलिए विलंब हो गया, किंतु अब भोजन तैयार है।

विजय बोलने लगा कि तुम्हारे पास मेरे लिए टाइम नहीं है। बस सुरेश ही तुम्हारे लिए सबकुछ है। जब देखो तब उसकी सेवा में लगी रहती हो। मैं रात-दिन मेहनत करता हूँ और समय पर भोजन तैयार नहीं होता। ऐसा नहीं चलेगा। मैं बहुत सहन कर चुका हूँ। अब मेरे भीतर सहन करने की क्षमता नहीं है। ऐसा कहते हुए उसने कहा, तुम इसको जल्दी से तैयार करो, मैं इसे अनाथालय में भरती करवा देता हूँ। 'न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी।' इसको अनाथालय में भरती करवा दूंगा फिर तुम्हें मेरे लिए समय मिल जाएगा। मेरे समय का महत्त्व तुम नहीं समझोगी। आधा घंटा भी यदि लेट हो जाऊँगा तो कितने ग्राहक इधर-उधर हो जाएंगे।

जब किसी को सुनाना ही होता है तो सच-झूठ कुछ भी सुनाया जा सकता है। सारी बातें सही ही सुनाई जाती हों, यह जरूरी नहीं है। ज्ञानीजन कहते हैं कि गुस्से में कहा हुआ सत्य भी सत्य नहीं होता। शांत भाव से कहे गए सत्य का जो प्रभाव होता है वह गुस्से में कहे हुए का नहीं होता।

शांत भाव से कही गई बात और गुस्से में कही गई बात में से किसको स्वीकार करेंगे?

शांत भाव से कही गई बात को आप मन से स्वीकार कर लेंगे किंतु गुस्से में कही गई बात को भयवश भले मान लें पर मन से स्वीकार नहीं कर पाएंगे।

विजय ने सुनंदा से कहा कि सुरेश को तैयार कर दो, मैं उसको अनाथालय ले जाऊँगा।

नाथ! गहरा चिंतन करिए, तभी कदम को आगे धरिए,
लगे प्रतिष्ठा दाँव, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...

सुनंदा ने विजय से कहा, नाथ! आप जो कह रहे हैं, मैं उसका विरोध नहीं कर रही हूँ, किंतु उस पर आप विचार करें। यथार्थ बताना मेरा फर्ज है। मैं

इस घर की सदस्य हूँ। मैं हिताहित की बात नहीं बताऊँ, यह उचित नहीं होगा। अपनी बात रखते हुए उसने कहा कि आप विचार करें कि क्या इससे हमारी प्रतिष्ठा दाँव पर नहीं लग जाएगी! लोग बोलेंगे कि एक भाई को नहीं संभाल पाया। इतना बड़ा सेठ है, इतना बड़ा घर है, इतने पैसे हैं फिर भी एक प्राणी का निर्वाह नहीं कर पाया। क्या ऐसी चर्चा सुनना अच्छा लगेगा? गुस्से के समय हितकर बात भी अच्छी नहीं लगती, सुहाती नहीं है। उस समय लगता है कि बस! जो मैंने कहा वही होना चाहिए। सुनंदा ने बहुत शांत भाव से कहा, किंतु विजय के गले बात उतरी नहीं। विजय, सुनंदा से कहता है कि तुम प्रतिष्ठा-अप्रतिष्ठा की बात रहने दो। मुझे यह रोज-रोज का लफड़ा नहीं सुहाता।

'खोल अनाथालय जन पाते, सेवा कर फल पुण्य बढ़ाते,
मूक बधिर जन तोय, भविकजन, सुन्दर हो संस्कार...

सुनंदा बोली! नाथ आप विचार कीजिए! मैं भी जो निवेदन कर रही हूँ वह बात सामान्य नहीं है। मूक बधिरों के लिए लोग अनाथाश्रम खोलते हैं। वहाँ जाकर लोग सेवा करते हैं, पुण्य कमाते हैं, लाभ उठाते हैं दूसरी तरफ आप घर में रहे हुए अपने भाई को अनाथाश्रम भेजने की बात कर रहे हो?

यह तो है भाई तुम्हारा, कर्मोदय की मार से मारा,
रहा नहीं कुछ माँग, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...

सुनंदा ने कहा कि नाथ! आप विचार कीजिए। यह आपका भाई है। लोग तो पराए को भी रखकर लाभ लेते हैं। उसकी सेवा करते हैं और यह तो माँ जाया भाई है। यह बेचारा कर्मों की मार से मारा गया है इस कारण न सुन पा रहा है, न बोल पा रहा है। आप इससे नफरत क्यों करते हैं। यह भी आपका भाई है। यदि यह सही होता तो आपसे पूरा हिस्सा माँगने का अधिकारी होता, किंतु यह कुछ भी नहीं माँग रहा है। न आप इसकी सेवा करते हैं, न देखभाल कर रहे हैं फिर भी रोष क्यों कर रहे हैं।

विजय ने आगे कहा-

मैं ना मानूँ बात तुम्हारी, इससे होती हानि हमारी,
होता है अपमान, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...

विजय, सुनंदा से कहने लगा कि मैं तुम्हारी एक भी बात सुनने वाला

नहीं हूँ। मैंने बहुत सह लिया। बहुत जहर पी लिया। अब नहीं पीऊँगा। तुमको नहीं मालूम दुनिया क्या बोलती है। लोग मुझे बोलते हैं, गुगिये रो भाई है। इससे मेरा कितना अपमान होता है। मुझे कितना अपमान सहना पड़ता है। यह मैं ही जानता हूँ, तुम घर की चहारदीवारी में बैठी हो, तुमको क्या मालूम! अत: तुम लाख कहो, किंतु अब मैं तुम्हारी एक भी सुनने वाला नहीं हूँ।

यह बात कौन बोला?

(श्रोतागण बोले- यह बात विजय बोला)

जबकि विजय को सुरेश से कोई लेना-देना नहीं था। उसने एक दिन भी उसकी सेवा नहीं की। एक दिन भी उसके पास नहीं बैठा। एक दिन भी अपने भाई की साता नहीं पूछी किंतु एक दिन खाना बनने में लेट हो गया तो उसका गुस्सा, उसका क्रोध आसमान छूने लगा। वह कहने लगा कि मैं इसे अनाथालय में भरती करवाऊँगा। यह सारी समस्याओं की जड़ है। जड़ खत्म हो जाने के बाद यह बात नहीं रहेगी।

सुनंदा, विजय को समझाने का प्रयत्न कर रही थी। सुनंदा की अंतर्भावना है कि मैं सुरेश को कभी भी अनाथाश्रम भेजने के लिए तैयार नहीं होऊँगी। सुनंदा के विचार पक्के हैं, किंतु पति के सामने क्या स्थिति बनती है, आगे क्या प्रसंग घटेगा समय के साथ सुन पाएंगे।

ऐसी विकट परिस्थितियाँ बहुतों के जीवन में आती हैं। विकट परिस्थितियों का मूल्यांकन करने के लिए हिताहित विवेकिनी सद्बुद्धि होगी तो हम सही निर्णय करने में समर्थ बनेंगे। यदि सद् विवेकिनी प्रज्ञा जागृत नहीं होगी तो कुछ भी उलटे-पुलटे निर्णय करेंगे। उसका परिणाम सुखद होना जरूरी नहीं है। आज का निर्णय कल बड़ी कठिनाई खड़ी करनेवाला हो सकता है, किंतु यह बात क्रोध व अहंकार के समय समझ में नहीं आती। ईर्ष्या और द्वेष के क्षणों में यह बात समझ में नहीं आ पाती। क्रोध में व्यक्ति की जिद रहती है कि ऐसा ही होना चाहिए। क्रोधी व्यक्ति सोचता है कि जो मैं बोल रहा हूँ वही होना ठीक है।

जिसको मलेरिया हो जाता है, उसे रोटी कड़वी लगती है। वह कहता है कि रोटी कड़वी है। रोटी कड़वी नहीं है, बीमारी के कारण उसको कड़वी

लगती है। जैसे रोटी कड़वी नहीं होती, किंतु वह मानता है कि कड़वी है, वैसे ही क्रोध में व्यक्ति को गलत बात भी सही लगती है।

क्रोध, मान, माया, लोभ, ईर्ष्या, डाह, द्वेष का चश्मा जिसकी आँख पर चढ़ जाता है, उसे हित भी अहित लगता है और अहित हित लगता है।

अब आगे विजय और सुनंदा के बीच जो वार्ता हुई, जो चर्चा हुई उस पर समय के साथ विचार करेंगे। तब तक हमारी हिताहित प्रबोधिनी बुद्धि जागृत हो जाए। जानें कि मेरा हित किसमें है। इसकी पहचान करें। आज जिसको हित मान रहे हैं वह हित है या नहीं! लोग पैसा कमाने में हित समझ रहे हैं, किंतु उसमें वास्तव में कितना हित है यह समझें।

धर्म करने के लिए फुरसत नहीं है, किंतु पैसा कमाने के लिए खूब समय है। सामायिक-प्रतिक्रमण करने के लिए समय नहीं है। मैं यह नहीं कहता कि पैसों की आवश्यकता नहीं होती। गृहस्थ जीवन में पैसों की भी आवश्यकता होती है, किंतु दिमाग में पैसा चढ़ जाने पर कौन-सी बीमारी चढ़ जाती है?

डेंगू की बीमारी माथे पर चढ़ जाती है तो क्या हाल होता है? डेंगू की तरह माथे पर पैसा चढ़ गया तो सही दिशा को भूलकर गलत दिशा में कदम आगे बढ़ेंगे। इसलिए अपनी सद् विवेकिनी प्रज्ञा को जागृत करने की आवश्यकता है। वह प्रज्ञा जागृत होगी तो सही दिशा में आगे बढ़ेंगे।

तपस्या का दौर चल रहा है। महासती श्री सुहर्षा श्री जी म.सा. की 19 की तपस्या है। और भी कई भाई-बहनों की तपस्याएँ चल रही हैं। इनसे प्रेरणा लेकर अपनी प्रज्ञा को निर्मल बनाएँ। चिंतन करें कि क्या हित है और क्या अहित। जहाँ अहित लगे उस मार्ग को छोड़कर हित मार्ग को स्वीकार करें। ऐसा लक्ष्य होगा तो एक दिन निश्चित ही आगे बढ़ने वाले बनेंगे। फिलहाल इतना ही कहते हुए विराम लेता हूँ।

10 अगस्त, 2023

5

श्रद्धा हम मजबूत बनाएं

शांति जिन एक मुज विनति, सुणो त्रिभुवन राय रे।
शांति स्वरूप केम जाणिये, कहो मन केम परखाय रे।।
धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।

प्रश्न है कि कैसे करें धर्म की आराधना?

मन चंचल हो जाता है, चपल हो जाता है, ऊहापोह में चला जाता है। अमूमन यह शिकायत सामने आती रहती है कि माला फेरने बैठते हैं तो उसमें मन नहीं लगता। सामायिक करने बैठते हैं तो उसमें मन नहीं लगता। मन कहीं दौड़ता रहता है, हम सामायिक में बैठे रहते हैं।

प्रश्न पुन: है– मन किसका है? अपना है या पराया?

(श्रोतागण बोले– मन अपना है)

मन अपना है, किंतु उस पर नियंत्रण अपना नहीं है। अपना ही मन अपने नियंत्रण में नहीं है। अपना मन अपने कंट्रोल में नहीं है। मन अपने नियंत्रण में नहीं है तो उसका कोई–न–कोई कारण होगा। इसका कारण है, पुद्गल के प्रति प्रीत होना। मन का इंद्रियों के साथ संबंध है, इंद्रियाँ विषय के प्रति आतुर रहती हैं, वे मन को उस तरफ आकृष्ट करती रहती है, यह भी एक कारण है मन के नियंत्रित नहीं होने का।

आँख का दरवाजा किधर खुलता है? अंदर की तरफ खुलता है या बाहर की तरफ?

(श्रोतागण बोले– बाहर की तरफ खुलता है)

जितने भी ऋषि–मुनियों को हमने देखा है, जाना है, समझा है, पाया

है कि जब वे ध्यानस्थ होते हैं तो उनकी आँख बंद होती है। इससे ज्ञात होता है कि अंदर उतरना है तो आँख बंद करके उतरना होगा या फिर बाहर देखना बंद होगा तो अंदर उतर पाएंगे। बाहर के दृश्य देखते हुए अंदर उतरना कठिन काम है। हाँ! बाहर का दृश्य देखकर उसी में अवगाहन करने पर, उसी की अनुप्रेक्षा चालू हो जाने पर हो सकता है कि अंदर उतर सकें।

करकंडु राजा ऐसे ही अंदर उतर पाए थे। एक बार उन्होंने एक साँड को देखा। साँड बड़ा हृष्ट-पुष्ट था। बड़ा सुंदर था। उन्होंने कहा, इसको मेरी गोशाला में रखा जाए। इसका सुंदर प्रबंधन होना चाहिए। उस साँड के लिए सोने की ठाण* और चाँदी की जंजीर बनवाई। ठाण में रत्न जड़े गए। उसको वी.आई.पी. रूप में रखा गया।

ठाण सोने की, रत्न की हो सकती है, किंतु खाना-पीना क्या होगा? किसी ने रत्न मुँह में रख लिया, निगल लिया तो क्या होगा?

(एक व्यक्ति ने कहा- राम नाम सत्य है)

देख लो रत्नों की क्या हालत है। किसी ने अँगूठी से हीरा निकाला और मुँह में रख लिया, निगल लिया तो क्या होगा? कहते हैं कि उसका मरण हो जाएगा। बाहर रहते हुए भी हीरा सुख नहीं देता और मुँह में डाल लें तो भी सुख नहीं देता। उस ठाण में साँड को अच्छे-से-अच्छा भोजन खिलाया जाने लगा। कुछ वर्षों के बाद उधर से जब सम्राट निकले तो देखा कि एक साँड निढाल पड़ा हुआ है। कौए उसकी आँख में चोंच मार रहे हैं, पूँछ के स्थान पर चोंच मार रहे हैं। उसके कान उठते हैं और वापस गिर जाते हैं। पूँछ उठती है और नीचे गिर जाती है।

सम्राट ने कहा, यह कैसा साँड है? इसे यह क्या हो गया?

दीवान ने कहा, राजन! यह वही साँड है जिसको आपने गोशाला में रखवाया था।

सम्राट ने कहा, इसकी अच्छी तरह से देखभाल नहीं की गई क्या? अच्छा खिलाया-पिलाया नहीं क्या?

दीवान ने कहा- राजन! बहुत खिलाया-पिलाया। अच्छी तरह से

* ठाण = पशुओं को चारा डालने का पात्र

देखभाल भी की, किंतु शरीर तो ढलता है। शरीर ढलता जाता है। शरीर नहीं ढलता है तो तीर्थंकर देवों का। उनका यौवन सदाबहार रहता है। बुढ़ापा उनके नजदीक नहीं आता।

क्या कारण है कि बुढ़ापा उनके नजदीक नहीं आता? क्या कारण है कि वे सदाबहार जीते हैं?

वे आपाधापी में नहीं जीते। वे चिंतामुक्त रहते हैं। तनावमुक्त रहते हैं। लोभ-लालच उनको नहीं सताते हैं। काम-विकार पर उनका कंट्रोल होता है। क्रोध, मान, माया, लोभ पर नियंत्रण वाले होने से तीर्थंकर भगवान सदा यौवन में रहते हैं। उनका यौवन सदाबहार बना रहता है। बुढ़ापा नहीं आता है।

इससे बहुत अच्छी तरह से समझा जा सकता है कि बुढ़ापे का कारण अतिचिंता, दुष्चिंता, भय, प्रलोभन, आसक्ति, तृष्णा आदि हैं। ये सारे तत्त्व बुढ़ापे की ओर ले जाने वाले हैं। आप कभी देख लेना या कभी किसी को देखा भी हो तो सोच लेना कि जो ज्यादा चिंता में जीता है वह 50 वर्ष की उम्र में ही 80 वर्ष का दिखने लग जाता है और जो निश्चिंत होकर जीता है वह 80 साल की उम्र में भी 60 साल का ही दिखता है। जो प्रसन्नता में जीता है वह जल्दी बूढ़ा नहीं होता। और जो प्रशंसा में जीता है वह क्या होता है?

ध्यान में लेना मेरी बात, यहाँ पर प्रशंसा और प्रसन्नता दोनों बात आई है। प्रशंसा और प्रसन्नता से जीने वालों में क्या फर्क है? प्रसन्नता आपको बुढ़ापा नहीं दिलाएगी और प्रशंसा आपकी प्यास बुझने नहीं देगी। प्रशंसा चाहने वाले का मन सदा आतुर रहता है। आतुर मन चंचल होता है, चपल होता है। वह बुढ़ापे की ओर ले जाने वाला होगा। आप प्रसन्नता में खुश रहते हैं या प्रशंसा में? आप भले ही कुछ बोल दें, किंतु प्रशंसा बहुत प्रिय है। भले ही बोल दें कि प्रसन्नता में जीना चाहते हैं, किंतु वास्तव में प्रशंसा प्रिय है।

प्रसन्नता में जीने वालों की चाह अलग होती है और प्रशंसा में जीने वालों की आँख कुछ और ही बोलती है। अधिकांश व्यक्ति यह समझते-जानते भी हैं कि प्रशंसा मीठा जहर है, फिर भी चाह रहती है कि प्रशंसा के दो शब्द और हो जाएं। मैं तो कहता हूँ कि प्रशंसा भूतनी है। वह जिसके पीछे लग जाती है, उसका पिंड नहीं छोड़ती। वह आदमी को निचोड़कर रख देती है,

फिर भी व्यक्ति प्रशंसा की चाह रखता है। प्रशंसा के दो शब्द कान में पड़ जाने पर लगता है कि अमृत की बूँदें कानों में आ गई।

विचार करने का विषय है कि किसी के द्वारा प्रशंसा करने पर क्या आप प्रशंसनीय हो जाएंगे? नहीं। कार्य प्रशंसनीय होना चाहिए। प्रशंसा की चाह नहीं रखते हुए, प्रशंसनीय कार्य करने की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए।

भगवान महावीर की प्रशंसा क्यों हो रही है? हरिश्चंद्र की प्रशंसा क्यों हो रही है? मर्यादा पुरुषोत्तम राम की प्रशंसा क्यों हो हो रही है? हनुमान की प्रशंसा क्यों हो रही है?

क्योंकि उन्होंने प्रशंसा को पीठ दे दी। जो प्रशंसा नहीं चाहता है उसको प्रशंसा मिलती है। उसके पीछे छाया की तरह दौड़ती है पर जो प्रशंसा चाहता है उसके आगे दौड़ती रहती है। प्रशंसा चाहने वाला उसके पीछे-पीछे दौड़ता रहता है। छाया को कोई पकड़ नहीं पाया है। छाया को पकड़ पाना इनसान के वश की बात नहीं है। इसलिए सदाबहार जीवन जीना है, मस्त जिंदगी जीनी है तो प्रशंसा की चाह मन में नहीं होनी चाहिए। कोई प्रशंसा करे तो उससे झगड़ा भी नहीं करना कि मेरी प्रशंसा क्यों कर रहे हो। झगड़ने की आवश्यकता नहीं है। तुम्हारे कान अतृप्त होने चाहिए। मन अतृप्त नहीं होना चाहिए।

अतृप्त मन की परिभाषा क्या है?

थोड़ा और मिले... थोड़ा और मिले... कोई दो शब्द और बोले... कोई प्रशंसा के दो शब्द बोल देता है तो बढ़िया लगता है। लगता है कि दो शब्द और बोल दे। दो और बोल दे तब भी लगता है कि दो और हो जाए। ऐसा लगना अतृप्ति का सूचक है। यह तृष्णा का सूचक है। मन तृप्त रहना चाहिए। कोई प्रशंसा करे तो भला, कोई नहीं करे तो भला। मन में प्रशंसा की प्यास नहीं रहनी चाहिए।

दुनिया क्या कर रही है उससे कोई मतलब नहीं रखना चाहिए। दुनिया प्रशंसा कर रही है या निंदा, इससे कोई मतलब नहीं रहे। यह देखना है कि मैं क्या कर रहा हूँ। मालूम होना चाहिए कि हमारा कार्य क्या है। देखना चाहिए कि हम सही कार्य कर रहे हैं या गलत। खुद को पता होता है कि हम कैसे हैं।

हमें हमसे ज्यादा दुनिया नहीं जानेगी।

थोड़ी राजनीतिक पर बात कर लेते हैं। अभी लोकसभा में क्या चल रहा है?

(श्रोतागण बोले- अविश्वास प्रस्ताव)

विपक्ष ने अविश्वास प्रस्ताव रखा और लोकसभाध्यक्ष ने उसको स्वीकार कर लिया। क्या मोदी जी के मन में ऊहापोह हुई? क्या उनको भय था कि मेरी सरकार गिर जाएगी? मैं जहाँ तक सोचता हूँ, वे निश्चिंत थे। यदि उनके पास सदस्य कम होते तो विचार भिन्न हो जाता। राजनीति पर चर्चा करने का मतलब यह नहीं कि राजनीति करने की बात कह रहा हूँ। विषय समझाने के लिए राजनीतिक बात कह रहा हूँ। जैसे मोदी जी निश्चिंत थे कि मेरी सरकार गिरने वाली नहीं है, वैसी ही निश्चिंतता हमारे भीतर आ जाए तो मन चंचल नहीं होगा। चपल नहीं होगा। मन में ऊहापोह पैदा नहीं होगी। निश्चिंतता नहीं होने से मन में ऊहापोह चालू हो जाती है। एक जगह स्थिर नहीं रह पाता।

'मन चंचल न चपल हो पाए, श्रद्धा हम मजबूत बनाएँ'

जिसमें धर्म श्रद्धा गहरी होगी उसका मन चंचल नहीं होगा। चपल नहीं होगा। अपने आपको तराजू पर तौलकर देखें कि हमारा मन चंचल है या नहीं! चपल है या नहीं! यदि मन चंचल और चपल है तो देखें कि हमारी धर्म श्रद्धा दृढ़ है या नहीं। हमने कल सुना था कि

'आपद में ना शीश झुकाना, यह हमने अरणक से जाना।'

क्या कारण था कि मन चंचल-चपल नहीं हुआ?

एक युवक रोज धर्म स्थान में उपस्थित होता है। वह बड़े ध्यान से, पूरी एकाग्रता से धर्म की बातों को सुनता है। सामायिक करता। वह चतुर्दशी-पूर्णिमा आदि के दिन पौषध करता है। छह प्रकार के द्रव्यों की चर्चा करता है।

छह प्रकार के द्रव्य कौन-कौन-से हैं?

'धर्मास्तिकाय...' नौ तत्त्वों की चर्चा करता है।

जिनदास सेठ ने उस युवक को देखा। सेठ उस पर मुग्ध हो गया। उसे अपनी लड़की सुभद्रा के लिए वह युवक उपयुक्त लगा।

वह चाहता था कि सुभद्रा की शादी के लिए कोई जिनधर्मी, दृढ़धर्मी

मिले। दूसरी तरफ सुभद्रा ने भी प्रतिज्ञा की थी कि किसी जिनधर्मी, समानधर्मी लड़के से ही शादी करूंगी।

जिनदास ने देखा कि लड़का एकदम धर्मनिष्ठ है, तत्त्वज्ञ है, धर्म क्रिया करनेवाला है तो एक दिन मौका देखकर उसने कहा कि आप मेरे घर भोजन के लिए पधारें, मैं आपसे निवेदन कर रहा हूँ। युवक ने कहा, मैं अभी सामायिक में हूँ। इससे जिनदास के मन में युवक के धर्मी होने की छाप और गहरी हो गई कि सामायिक का कितना ध्यान रखता है। सामायिक में सांसारिक बातें नहीं करता।

आप भी सामायिक में इधर-उधर की बातें नहीं करते होंगे? सामायिक में क्या पच्चक्खाण है? सामायिक में संसार की बातों का पच्चक्खाण है या नहीं है?

(श्रोतागण बोले- पच्चक्खाण है।

'करेमि भंते! सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि'

उक्त पच्चक्खाण में अपने आप सावद्य क्रिया का पच्चक्खाण हो गया। संसार की चर्चा सावद्य चर्चा है। इसको निर्वद्य चर्चा नहीं कहेंगे। सामायिक में स्त्री कथा, भक्त कथा, देश कथा व राज कथा में से कोई कथा की हो तो **'तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।'** इन चार कथाओं में से कोई भी विकथा करनी जायज होती तो मिच्छा मि दुक्कडं करने की आवश्यकता नहीं थी। मिच्छा मि दुक्कडं करने का मतलब है कि हमने जाने-अनजाने में भी वैसी प्रवृत्ति करली हो तो वह मिथ्या है।

जिनदास ने उस लड़के को देखकर सोचा कि यौवन में धर्म की इतनी लगन। जिनदास ने सामायिक पूरी हो जाने का इंतजार किया। सामायिक पूरी होने के बाद उस युवक ने कहा, सेठ सा! जान न पहचान और आप मुझे कह रहे हैं कि मेरे घर पर भोजन के लिए चलो, मेरा मेहमान बनो।

सेठ ने कहा, गुण व्यक्ति की पहचान कराने वाला होता है।

इस पर युवक ने कहा, सेठ साहब! मैं आपके आदेश को टाल नहीं सकता।

वह युवक भोजन करने के लिए जिनदास के घर पहुँचा। भोजन हो जाने के बाद सेठ ने अपने पास गद्दे पर उसे बिठाया और बात-ही-बात में

उन्होंने पूछ लिया कि आपका नाम क्या है? उसने कहा कि मेरा नाम बुद्धदास है। सेठ ने कहा, आपकी धर्मनिष्ठा देखकर मेरा मन प्रफुल्लित हो गया। मेरी लड़की सुभद्रा ने प्रतिज्ञा की है कि मैं धर्म श्रद्धा वाले युवक के साथ शादी करूंगी। मैं चाहता हूँ कि सुभद्रा का हाथ आपके हाथ में सौंप दिया जाए, आप उसको स्वीकार करें।

उसने कहा, सेठ साहब! मेरा-आपका कोई परिचय नहीं है फिर भी आप बुजुर्ग हैं, इसलिए मैं आपकी आज्ञा को टाल नहीं सकता, किंतु विवाह-शादी के काम अभिभावक ही करें, बड़े-बुजुर्ग ही करें, यही उचित है।

सेठ ने कहा, आप चंपानगरी में रहते हैं, मैं कहाँ आपके पिता जी से संपर्क करूंगा, आप ही इस बात को स्वीकार कर लें।

युवक ने थोड़ी मर्यादा और संस्कार की बात करके फिर स्वीकार कर लिया।

हकीकत यह थी कि उसने यह सारा खेल सुभद्रा को पाने के लिए ही खेला था। एक बार सुभद्रा को देखने पर उसके मन में आया था कि मुझे इससे शादी करनी है। उसने गाँव के लोगों से पूछा तो उसे मालूम हुआ कि वह जिनदास की लड़की है, जिसने प्रतिज्ञा कर रखी है कि जिनधर्मी लड़के से ही शादी करूंगी। यह जानने के बाद उसने जैन धर्म की क्रिया जाननी शुरू की।

किसके लिए जैन धर्म की क्रिया जाननी शुरू की?

(श्रोतागण बोले- सुभद्रा से शादी करने के लिए)

पात्रता के लिए क्रिया करनी चाहिए। पात्रता मतलब, अपने भीतर मुक्ति जाने की योग्यता प्रकट करने के लिए धर्म क्रिया करनी चाहिए। एकमात्र निर्जरा के लिए तपस्या करनी चाहिए। इहलोक में यश बढ़ने, परलोक में सुख मिलने की कामनाओं से उठकर तपस्या का लक्ष्य केवल निर्जरा ही होना चाहिए। बुद्धदास की धर्म क्रिया में कामना थी, इसलिए उसकी सारी क्रियाओं का परिणाम शून्य था। वह सुभद्रा को व उसके परिवार को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए सामायिक-पौषध कर रहा था। उसकी क्रियाएँ धार्मिक जरूर थीं, किंतु उनसे धर्म का स्पर्श नहीं हो पाया था। जब तक धर्म का स्पर्श नहीं होगा, तब तक आत्मा कुंदन नहीं बन सकेगी। सुभद्रा की शादी हो

गई और वह ससुराल गई।

ससुराल में वह '**अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि...**' का पाठ कर रही थी। दो-चार दिन बीतने पर उसकी सास ने कहा, बहू! 'अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि...' यहाँ नहीं चलेगा। यहाँ पर '**बुद्धं शरणं गच्छामि**' '**संघं शरणं गच्छामि**' बोलना होगा। सास ने कहा कि हमारा परिवार बौद्ध धर्म को मानने वाला है, बुद्ध को मानने वाला है, इसलिए यहाँ पर 'बुद्धं शरणं गच्छामि' बोलना पड़ेगा।

सुभद्रा ने सास को समझाने का प्रयत्न किया। उसने बुद्धदास से भी निवेदन किया कि आपकी तो इतनी धर्म श्रद्धा थी! तो उसने कहा, वह सब तुम्हें पाने के लिए थी। यहाँ पर तुम्हें यही करना पड़ेगा जो माँ कह रही है।

सुभद्रा ने कहा, धर्म ही मेरा प्राण है। मैं धर्म को नहीं छोड़ सकती। मेरा जीना-मरना धर्म के साथ जुड़ा हुआ है। कितनी भी कठिनाइयाँ आ जाएं, मैं धर्म से च्युत नहीं हो पाऊँगी।

बुद्धदास ने सुभद्रा के सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध बंद करवा दिए। कहा कि यहाँ पर यह नहीं करना।

सुभद्रा ने कहा, कोई बात नहीं। सामायिक नहीं करूंगी, प्रतिक्रमण-पौषध नहीं करूंगी, किंतु मेरे भीतर की धर्म श्रद्धा को कोई नहीं हिला सकता।

सुभद्रा को ससुराल में काफी कुछ उपसर्ग दिए गए। उसके सामने कठिनाइयाँ पेश की गई, किंतु उसकी सोच स्पष्ट थी कि भले ही मुझे अकेले रहना पड़ जाए, भले ही सब मुझसे रूठ जाएं, किंतु मेरा धर्म मुझसे नहीं रूठना चाहिए। धर्म रूठ गया तो जीवन ही क्या रहेगा! सुभद्रा धर्म पर दृढ़ रही।

आप विचार करें कि सुभद्रा के प्रति परिवारवालों का क्या व्यवहार रहा होगा!

संयोग ऐसा बना कि एक बार भिक्षा के लिए मुनिराज आए। जिनकल्पी मुनिराज थे। मुनिराज की आँख में फूस गिरा हुआ था। जिनकल्पी मुनिराज की मर्यादा होती है, शरीर का परिक्रम नहीं करना। मतलब, शरीर की देखभाल नहीं करना। काँटा चुभ जाए तो निकालना नहीं, आँख में फूस गिर जाए तो निकालना नहीं। मुनिराज की आँख से पानी बह रहा था। सुभद्रा ने फूस

को जीभ से बाहर निकाल दिया।

इस पर चर्चा हो सकती है कि मुनिराज को संघट्टा नहीं लगा क्या?

सुभद्रा जान रही थी कि ये जिनकल्पी मुनिराज हैं, अपने आप इलाज के लिए तैयार नहीं होंगे। सुभद्रा ने देखा कि इनको कष्ट हो रहा है, इसलिए उसने ऐसा काम कर दिया।

मुनि, भिक्षा लेकर जा रहे थे। उनके ललाट में सुभद्रा की टीकी का अंश लग गया। उससे घर में घमासान हो गया कि सुभद्रा ने कुकर्म कर लिया, कलंकित हो गई। घरवाले उसको कोसने लगे। बुद्धदास, सुभद्रा से विरक्त हो गया। उससे बात करना बंद कर दिया। कहा कि तुमने हमारे खानदान को कलंकित कर दिया।

सुभद्रा कुछ समाधान देना चाहती थी, किंतु कोई सुनने के लिए तैयार नहीं था। सुभद्रा शांत रह गई। योगानुयोग ऐसा बना कि चंपानगर के चारों दरवाजे बंद हो गए। सबका आना-जाना बंद हो गया। जैसे किसान आंदोलन में हाई-वे बंद हो गया था, वैसे ही चंपानगर में चारों दरवाजे बंद हो गए। न कोई बाहर से अंदर आ सकता था और न ही अंदर से बाहर जा सकता था। दो-चार दिन बीतने पर लोगों ने बाहर निकलने के लिए विचार किया। सम्राट ने दरवाजे खुलवाने के सारे उपक्रम करवा लिए, लेकिन कोई भी उपाय कारगर नहीं हुआ।

कहा जाता है कि देववाणी हुई कि कोई शीलवती स्त्री, सती-सावित्री, कच्चे सूत को छलनी से बाँधकर कुएं से पानी निकालकर वह पानी दरवाजों पर छिटक दे तो दरवाजे खुल जाएंगे।

कई बहनें आईं, किंतु कार्य नहीं हुआ। सम्राट ने महारानियों से कहा कि आप तो महलों में रह रही हैं, आप कोशिश करें। उन्होंने कहा, हमें रहने दीजिए, हमें रहने देना ही ठीक है। हमें कसौटी पर कसने की कोशिश मत कीजिए। यह बात सुभद्रा के कानों में भी पड़ी। उसने अपनी सास से कहा कि आपकी अनुज्ञा हो तो मैं जाना चाहती हूँ। सास ने कहा, पहले अपना चरित्र तो देख ले। समाज में हमारी बदनामी होगी। सुभद्रा ने कहा, आप अनुमति दें, सब अच्छा होगा। इतना बोलकर सुभद्रा चली कुएं के पास। सुभद्रा ने छलनी में

धागा बाँधा और उसे कुएं में डालकर पानी भरा। छलनी में पानी भर गया। उसने छलनी को भरकर बाहर निकाला।

'सुभद्रा ने तोला, चंपाद्वार खोला, फेरो एक माला...'

सुभद्रा ने छलनी से पानी निकाला, द्वार पर छिड़का और द्वार खुल गए।

इससे पहले हाथियों से द्वार खोलने की कोशिश की गई थी, किंतु दरवाजे नहीं खुले थे। ऐसा बताया जाता है कि सुभद्रा के प्रयत्न से एक-एक कर तीन दरवाजे खुल गए। बाद में आकाशवाणी हुई कि एक दरवाजा बंद ही रहने दो। यदि किसी को आजमाइश करनी होगी तो की जा सकेगी। ऐसा कहा जाता है कि वह दरवाजा अभी तक बंद ही पड़ा है।

सुभद्रा की श्रद्धा दृढ़ थी। उसके मन में किंतु-परंतु नहीं हुआ। आपसे ऐसा कहा जाए कि छलनी से पानी निकालो, तो आप तैयार हो जाओगे क्या? आप बोलोगे, म.सा. हम तो थानक में ही ठीक हैं, हमें कसौटी पर मत कसो, हमारी परीक्षा मत लो।

सुभद्रा की जय-जयकार होने लगी। सम्राट ने सुभद्रा को बहुत मान दिया। उसे हाथी के होदा पर बैठाकर जय जयकार करते हुए राज-सम्मान के साथ घर पहुँचाया गया। इस घटना के बाद परिवारवाले समझ गए कि हमने क्या समझा था और क्या हो गया। अब घरवालों का, परिवारवालों का विचार बदल गया। इसलिए कहा जाता है धर्म श्रद्धा से मान बढ़ता है, सम्मान बढ़ता है। धर्म की रक्षा करने वालों की अभिरक्षा होती है।

सुनंदा भी अपने कर्तव्य पथ पर अडिग है।

सुंदर हो संस्कार, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...
नाथ दोष है यह क्या इसका, नफरत इतनी फल ही जिसका,
है कर्मोदय खेल, भविकजन, सुन्दर हो संस्कार...

मैं पहले बोल गया था कि इंद्रियाँ बहिर्गामी हैं, विषयों की तरफ दौड़ती हैं। उसके पीछे मन भागता रहता है। अपनी आवश्यकता जितनी सीमित करोगे, उतना ही मन शांत रहेगा। जितनी इच्छाएँ बढ़ेंगी, जितनी आकांक्षाएँ बढ़ेंगी, जितनी अपेक्षाएँ बढ़ेंगी, मन उतना ही भाग-दौड़ करेगा। मन को शांत

करना है तो पहले अपनी इंद्रियों को नियंत्रित करना होगा। निर्णय करना होगा कि आज मुझे इतने द्रव्य से ज्यादा नहीं लगाना। यह एक छोटी सी बात है, किंतु उसका बहुत बड़ा परिणाम होगा। वह परिणाम मन पर असर करेगा। 11 आइटम से ज्यादा नहीं लगाना।

11 से ज्यादा आइटम आ गए तो क्या होगा?

11 से ज्यादा आइटम आने पर बोल देंगे कि मेरा नियम है कि मुझे 11 से ज्यादा आइटम नहीं खाना।

एक होता है दीर्घदर्शी और एक होता है परिणामदर्शी। दीर्घदर्शी को शुगर की बीमारी है। उसके सामने बदाम का हलवा आया, उसे पसंद भी बहुत है, किंतु वह जान रहा है कि मैं हलवा खाऊँगा तो शुगर बढ़ जाएगा। हजम नहीं होगा। दस्तें लगेंगी। इसलिए वह अपने आपको रोक लेता है और हलवा नहीं खाता। दूसरे व्यक्ति को शुगर नहीं है। उसे हलवा पसंद भी है। उसके सामने हलवा आया फिर भी उसने हलवा नहीं खाया। उसने अपने मन को इसलिए रोक लिया कि इसको खाऊँगा तो मेरी आहार संज्ञा जगेगी। बार-बार उसके प्रति मन लालायित होगा, आसक्ति बढ़ेगी। आसक्ति बढ़ेगी तो कर्मों का बंध होगा। कर्मों का बंध होगा तो कर्म भोगने पड़ेंगे, इसलिए ऐसे कर्मों का बंध नहीं करना। यह सोचना परिणामदर्शी का हुआ। वह देख रहा है कि आनेवाले समय में इसका परिणाम क्या होगा। अभी तो मैं शौक से, पसंद से, रुचि से हलवा खा लूँगा, किंतु उससे जो आसक्ति होगी, जो बंध होगा, उसका परिणाम दुख देने वाला बनेगा। इसलिए उसने हलवा नहीं खाया।

मन को चंचल-चपल होने से रोकना है तो खाने का उद्देश्य मनपसंद चीजें नहीं अपितु खाना सिर्फ शरीर के लिए हो, शरीर को टिकाने के लिए हो। वह भी शांत भावों से खाना।

सुनंदा शांत भावों में जीती है। सात्विक भावों में जीती है। उसे खाने-पीने के प्रति कोई लगाव नहीं था। वस्त्र-आभूषण के प्रति कोई लगाव नहीं था। वह यह मान रही थी कि खाना शरीर के लिए होता है और वस्त्र लज्जा ढकने के लिए। वह मान रही थी कि शील से बढ़कर कोई और आभूषण नहीं है। अपने कर्तव्य का पालन करना ही आभूषण है।

उधर सुनंदा का पति विजय कह रहा है कि मैं सुरेश को घर में नहीं रख सकता। मैं इसको अनाथाश्रम में भरती करवाऊँगा। सुनंदा कहती है, नाथ! इसने आपका क्या बिगाड़ा है कि इससे आप इतनी नफरत करते हैं? इसका दोष क्या है जिससे आपको इतनी नफरत हो रही है? इसका दोष तो मालूम पड़े जिस कारण से आप इसके प्रति आक्रोशित हो रहे हैं, नफरत कर रहे हैं। यह कर्मों का खेल है और कर्मों का खेल किसी के वश में नहीं है। जिस समय कर्म किया उस समय वश में था कि ऐसा नहीं करना, किंतु कर्म किया गया तो निकाचित कर्मों का भोग भोगना होता है। सुनंदा कहती है, नाथ! मेरी बात ध्यान में लेना, कर्म किसी के सगे नहीं हैं। आज कहीं तो कल कहीं होंगे। आज इसके साथ हैं तो कल हमारे साथ भी हो सकता है। इसलिए आप कर्मों के परिणामों को समझें और सुरेश से नफरत न करें। इसके साथ ऐसा नहीं करें। विजय कहता है, मैं कुछ भी सुनने को तैयार नहीं हूँ।

वकालात क्यों इतनी करती, इससे इतना क्यों तू डरती,
कहना मेरा मान, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...

सुनंदा द्वारा विजय को समझाने पर वह कहता है कि तू इतनी वकालत क्यों कर रही है? क्या कारण है? क्या भय है? क्यों डर रही हो? वह कहता है, तुम मेरा कहना मानो। मैं जो कह रहा हूँ उसको स्वीकार करो। सुनंदा ने बात बताई कि धर्म क्या होता है।

विजय कहने लगा कि तू जो कह रही है, मैं उसे समझता हूँ, किंतु मुझे सुरेश नहीं सुहाता। नहीं सुहाता तो नहीं सुहाता। इसलिए मैं तत्काल इसे यहाँ से हटाना चाहता हूँ। ऐसा कहते हुए वह सुरेश का हाथ पकड़कर उसको खींचता है।

सुनंदा कहने लगी, नाथ! ऐसा नहीं हो सकता। उसने विजय से सुरेश का हाथ छुड़ाने की कोशिश की। सुरेश, सुनंदा की तरफ देखता है। सुरेश बोल नहीं पा रहा था, सुन भी नहीं पा रहा था किंतु आँखों से देख तो रहा था। विजय के एक्शनों को देखते हुए वह कुछ इशारा कर रहा था। उससे पता चल रहा था कि भाभी तुम मेरी तरफ मत देखो। जो मेरा कर्म होगा, वैसा होता रहेगा। तुम भाई से दूरी मत करो, भाई की बात मान लो। सुनंदा, विजय से कहती है कि मैंने सास माँ को जुबान दी थी। मैं किसी भी हालत में सुरेश को अनाथालय में

नहीं भेज सकती। चाहे जो भी कुछ हो, मैं इसका लालन-पालन करूंगी।

बात तनने लगी, खिंचने लगी। सुनंदा अपने कर्तव्य पर अटल थी तो विजय अपनी बात मनवाने के लिए। विजय कहता है कि मैं इसको घर में नहीं रख सकता। मुझे यह सुहाता नहीं है। मुझे इससे नफरत होती है। घृणा पैदा होती है। इसका नाम आते ही मेरे कर्मों का बंध होता है। यह जैसे ही सामने आता है मेरे तेवर गर्म हो जाते हैं, आँखें चढ़ जाती हैं।

यह कर्मों का खेल है। इसलिए ज्ञानिजन कहते हैं कि कर्म करते हुए सावधान रहो। कर्म निकाचित बंध गए तो बड़े कष्टकारी होंगे।

भगवान महावीर को भी कानों में कीलें ठुकवानी पड़ीं। उनको भी सारे निकाचित कर्मों का भोग करना पड़ा। हमको भी कर्म नहीं छोड़ेंगे, वे किसी के सगे नहीं होते, किसी के दोस्त नहीं होते। कर्म किसी पर रहम नहीं करते। केवल धर्म श्रद्धा के बल पर व्यक्ति कर्मों पर विजय प्राप्त करने में समर्थ हो सकता है। धर्म श्रद्धा से संबल मिलता है। मन को बल मिलता है। मन पर नियंत्रण हो जाता है। मन चंचल नहीं हो पाता। चपल नहीं होता।

सुभद्रा के बारे में आपने सुना कि उसके मन में चंचलता नहीं थी। उसने किसी को दोष नहीं दिया। वह मान रही थी कि यह मेरे ही कर्मों का उदय है। मेरे ही कर्म उदय में आ रहे हैं। अत: धर्म श्रद्धा दृढ़ होनी चाहिए। चाहे कैसी भी परिस्थिति आ जाए व्यक्ति को शांत रहना चाहिए क्योंकि उसी के बल पर कर्मों को जीता जा सकता है। पुराने कर्मोंदय के समय हाय-हाय करेंगे तो ज्यादा दुख भोगेंगे। उससे संक्लेश होगा तो नए कर्मों का बंध होगा फिर उदय फिर ऐसी स्थिति में कर्मों का सिलसिला छूटने वाला नहीं है। लिंक टूटने वाला नहीं है। धर्म श्रद्धा ही उस लिंक को तोड़ने में समर्थ है। इसलिए कहा जाता है-

'श्रद्धा हम मजबूत बनाएं'

मन और श्रद्धा इतनी दृढ़ हो जाए, इतनी मजबूत हो जाए कि चंचल और चपल नहीं हो। कैसी भी परिस्थिति आ जाए, कोई भी कठिनाई आ जाए, मन सुदृढ़ रहे। मानें कि यह कर्मों का उदय है। कर्म बँधे हुए हैं। आज नहीं तो कल, कल नहीं तो परसों इसका भोग करना ही होगा। ऐसा करेंगे तो अपने मन को शांत बनाने में समर्थ बनेंगे। मन चंचल और चपल नहीं होगा। ऐसा करेंगे तो

धन्य बनेंगे।

महासती श्री सुहर्षा श्री जी म.सा. की 20 की तपस्या है। और भी कई भाई-बहनों में तपस्याएँ चल रही हैं। अमित गाँधी की कल 28 की तपस्या थी, आज 29 की तपस्या है। सरिता मुणोत की आज 43 की तपस्या है। कला बाई जी धींग, वनिता जी नेपालिया की कल 28 की तपस्या थी, आज 29 की संभावना है। हम भी प्रेरणा लेकर अपने आपको धन्य बनाएं। फिलहाल इतना ही कहते हुए विराम लेता हूँ।

11 अगस्त, 2023

6

जय, जय अन्तरभाव सँजो लें

शांति जिन एक मुज विनति, सुणो त्रिभुवन राय रे।
शांति स्वरूप केम जाणिये, कहो मन केम परखाय रे।।
धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।

तीर्थंकर भगवान जन्म से तीन ज्ञान के धारक होते हैं। उनकी दीक्षा का समय नजदीक आने पर देव उनको संबोधित करते हैं। एक वर्ष तक दान देने के पश्चात् वे साधु जीवन स्वीकार करने के लिए तत्पर होते हैं। उद्यत होते हैं। फिर '**नमो सिद्धाणं**' पाठ का उच्चारण करते हुए '**सव्वं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि**' से सम्पूर्ण सावद्य योगों का सर्वथा प्रकार से त्याग करते हैं।

'नमो सिद्धाणं' का उच्चारण क्यों किया जाता है?

साधना पथ पर चलने में एक आदर्श सामने होना चाहिए। एक आलंबन होना चाहिए। सिद्ध भगवान को नमस्कार करते हुए उनका आलंबन स्वीकार किया जाता है। सिद्धत्व आदर्श है। उन्हें सिद्धत्व प्राप्त करना है। जिस कार्य को करना चाहते हैं, वह आदर्श होता है तो वहाँ तक पहुँचने में समर्थ हो पाते हैं।

तीर्थंकर देव भी सिद्ध भगवान का स्मरण करते हैं। क्योंकि सिद्धत्व उनका लक्ष्य है, अनंतानंत सिद्ध भगवान जिस राह पर आगे बढ़े हैं उसी राह पर उनका आगे बढ़ने का लक्ष्य रहता है।

अनंतानंत सिद्ध भगवान किस राह से आगे बढ़े? वह डगर कौन-सी है? वह रास्ता कौन-सा है?

'सम्यग्-दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्गः'

सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चारित्र रूपी मार्ग पर वे गतिशील होते हैं। वह एक ही मार्ग है। सम्यक् दर्शन पैदा होने पर व्यक्ति अपनी पहचान कर पाता है। सम्यक् ज्ञान से उसे बोध हो पाता है कि राग और द्वेष मेरा स्वरूप नहीं है। राग-द्वेष से रहित मेरा रूप है। क्रोध, मान, माया, लोभ मेरी आत्मा के गुण नहीं हैं। कर्मों के मिलावट से ये अवस्थाएँ मेरे भीतर पैदा होती हैं। सम्यक् चरित्र से कर्मों को हटाऊँगा तो मेरा मूल स्वरूप पैदा हो पाएगा।

'वीर प्रभु की जय-जय बोलें, जय-जय अन्तर भाव संजो लें'

वीर प्रभु की जय-जय तो हम बोलते हैं, पर जय बोलते हुए हमारा विचार क्या होता है, हमारा लक्ष्य क्या होता है, हमारी भावना क्या होती है?

वीर प्रभु की जय बोलने के साथ लक्ष्य यह रहना चाहिए कि मेरे भीतर भी वीरता जगे। सत्य की पहचान करने का सामर्थ्य जगे। निज स्वरूप को उपलब्ध होने का सामर्थ्य प्रकट हो। उसके लिए मैं प्रयत्नशील बन सकूँ।

इसमें कठिनाइयाँ आएंगी। चलने वालों को कठिनाइयाँ आती हैं। कठिनाइयों का बोध करके आदमी चले ही नहीं तो मंजिल नहीं मिलेगी। व्यक्ति को निश्चित करना है कि कोई भी कठिनाई आए, मुझे अपना मार्ग तय करना है। मुझे रास्ता तय करना है, मंजिल प्राप्त करनी है। ऐसी हिम्मत जगनी चाहिए।

हमारे आदर्श भगवान महावीर हैं। भगवान महावीर ने अपने वीरत्व को जागृत किया। वैसे उनका नाम पहले महावीर नहीं था। पहले उनका नाम वर्धमान था। ऐसा माना जाता है कि जब उनका वीरत्व जागृत हुआ तो देवों ने उनका नाम महावीर रख दिया।

हम सबकी आत्मा भी अनंत शक्तियों से संपन्न है। जैसी शक्ति भगवान महावीर और भगवान ऋषभ की आत्मा में थी, वैसे ही शक्ति हमारी आत्मा में है। अंतर केवल इतना है कि हम अभी कर्मों से बँधे हुए हैं।

एक व्यक्ति के पास चंद्रकला हार था। चंद्रमा की रोशनी में उस हार के मनके चमकने लगते। उसकी ज्योत्सना अलग ही रूप दिखाती थी। समय ने पलटा खाया और वह हार गिरवी रखा गया। घर में कोई फंक्शन होने पर उस व्यक्ति को चंद्रकला हार की स्मृति आई। पहले भी कार्यक्रमों में वह उस हार

को पहना करता था। इस बार उसके पास हार नहीं था, क्योंकि वह गिरवी रखा था। हार उस व्यक्ति का है, किंतु उसमें पहनने का सामर्थ्य नहीं है, क्योंकि हार गिरवी रखा हुआ है। दूसरे के हाथ में है। वह चाहकर भी उस हार को नहीं पहन सकता।

जैसे उसका हार गिरवी रखा है, वैसे ही हमारी बहुत सारी शक्तियाँ कर्मों के अधीन बनी हुई हैं। हमने कर्मों के भरोसे अपनी शक्तियों को गिरवी रख दिया। हमारे भीतर अनंत शक्तियाँ होते हुए भी हम उनका उपयोग नहीं कर पाते। उपभोग नहीं कर पाते।

'धम्म सद्धा हृदय धरूँ'

धर्म श्रद्धा को हृदय में धारण किया जाता है तो अपूर्व उल्लास जागृत होता है। उस समय व्यक्ति सोचता है कि अब मुझे अपनी शक्तियों को प्राप्त करना है। कर्म के यहाँ गिरवी रखी शक्तियों को छुड़ाना है। अपनी मालकियत प्राप्त करनी है। फिर उस उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए व्यक्ति तत्पर हो जाता है।

वीर योद्धा किसे कहा गया है?

वीर योद्धा उसे कहा गया है जो रण में पीठ ना दिखाए। जिसमें सीने पर वार सहने की ताकत होती थी उसको वीर-योद्धा माना जाता था। यदि किसी के पीठ पर घाव होता, तलवार-भाला पीठ पर लगा होता तो उसको वीर योद्धा नहीं माना जाता था। ऐसा माना जाता था कि उसने पीठ दिखा दी, अर्थात् वह कायर है।

धन्ना अणगार ने भगवान महावीर से दीक्षा ली। दीक्षा लेने के साथ ही उन्होंने भगवान महावीर से निवेदन किया कि भगवन्! मैं बेले-बेले की तपस्या करना चाहता हूँ।

भगवान ने कहा- **'अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह।'**

अर्थात् हे देवानुप्रिय! तुम्हें जिसमें सुख है, वैसा कर सकते हो। भगवान ने यह नहीं कहा कि देखो! शरीर से साधना करनी है। शरीर का ध्यान रखो। शरीर को पोषक तत्त्व दोगे तो शरीर चलेगा।

धन्ना अणगार ने बेले-बेले की तपस्या चालू की। पारणे में वे आयंबिल तप की आराधना करते थे।

कोई आपसे पूछे कि मैं तपस्या करना चाहता हूँ, तो आप क्या सुझाव देंगे? आप तो सुझाव दे देंगे कि अभी नहीं, बाद में करना। अभी यह काम है, वह काम है। अभी तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है। अभी तुम्हारी... अभी तुम्हारी... अभी तुम्हारी...

अरे! बोलो तो सही आगे। अभी तुम्हारी...

(श्रोतागण आगे बोले– अभी तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है)

भगवान ने आज्ञा दी कि यदि तुम्हारे शरीर में रोग आ गया तो तुम आहार का त्याग करो। बहुत सारी बीमारियों का कारण खाना है, भोजन है। भोजन में अनियमितता होती है तो पेट बिगड़ता है, आँतें बिगड़ती हैं और शरीर में रोग पैदा हो जाते हैं। भगवान ने उसकी अचूक औषधि भोजन त्याग करना बताया। एक दिन, दो दिन, तीन दिन, चार दिन, जितने दिन भी हो, भोजन का त्याग करो।

आचार्य श्री गणेशलाल जी म.सा. के बारे में मैंने ऐसा सुना है कि किसी संत ने उनसे बोल दिया कि गुरुदेव! आज पेट दुख रहा है, सिर दुख रहा है, तो वे फरमाते थे कि तेला कर लो।

क्या कर लो?

(श्रोतागण बोले– तेला कर लो)

और पर्युषण में क्या करना?

(श्रोतागण बोले– अठाई करना है)

आवाज तो नहीं आ रही है। जैसे भाव अंदर बनेंगे, वैसे ही बाहर निकलेंगे।

'धम्म सद्धा हृदय धरूँ'

जैसे धर्म की श्रद्धा हृदय में धारण करना है, वैसे ही यह धारण कर लें कि मुझे पर्युषण में अठाई करनी है। तपस्या से बहुत सारी बीमारियाँ शांत हो जाती हैं। बीकानेर के एक श्रावक थे रामलाल जी रांका। बहुत तत्त्वज्ञ थे, बहुत जिज्ञासु थे। एक बार उन्हें कोई बीमारी हो गई। उन्होंने इक्कीस दिनों तक केवल एक अन्न का आयंबिल किया। एक अन्न का मतलब है कि एक ही प्रकार का अन्न लेना। उनकी बीमारी ठीक हो गई। आजकल आयंबिल में

भेल-संभेल बहुत हो गया। नाम आयंबिल होता है और आइटम इतने होते हैं कि सबका एक-एक निवाला लें तो भी पेट भर जाए।

ऐसे में जिस उद्देश्य से आयंबिल की तपस्या की जाती है वह उद्देश्य फलित नहीं हो पाता। रसनेंद्रिय पर विजय प्राप्त करने के लिए आयंबिल तप की आराधना होती है। जिसकी जीभ बिगड़ गई, उसका बिगाड़ होता जाएगा। जिसने जीभ पर कंट्रोल कर लिया उसकी साधना सध जाएगी। उसी को रस मिलता है, वही रस का भेद करती है कि यह रस स्वादिष्ट है, इसमें स्वाद अच्छा है। जिसने रस लेना बंद कर दिया, उसकी सारी इंद्रियों पर उसका असर पड़ेगा। घर का एक सदस्य जेल चला जाए तो घर के दूसरे सदस्यों पर असर पड़ता है। कभी कुछ हिंसा फैल जाती है या कुछ विवाद खड़े हो जाते हैं। दो गुटों में आपसी लड़ाई जैसी स्थिति बन जाती है। लड़ाई-झगड़े की स्थिति बनने पर पुलिस वाले आकर लाठीचार्ज करते हैं, कार्रवाई करते हैं। इससे बहुत से लोगों के मन में फर्क पड़ता है।

जैसे घर के एक सदस्य के जेल जाने पर, घर के बाकी सदस्यों पर असर पड़ता है, वैसे ही एक रसनेंद्रिय पर अटैक करने पर दूसरी इंद्रियों पर भी उसका असर होगा। इसी तरह किसी अन्य इंद्रिय पर भी अटैक करने पर अन्य इंद्रियों पर असर होता है।

कोई कहता है कि मैं खाने में पीछे नहीं रह सकता तो कोई बात नहीं। जो खाने में पीछे नहीं रह सकता वह स्पर्शेंद्रिय पर विजय प्राप्त कर ले। स्पर्शेंद्रिय पर विजय करना आसान है या रसनेंद्रिय पर?

लोग कहते हैं कि रसनेंद्रिय को जीतना बहुत कठिन है, किंतु यदि विचार करें तो स्पर्शेंद्रिय पर विजय प्राप्त करना शायद उससे भी कठिन है। दुष्कर है। आप जहाँ बैठे हैं, वहाँ पर काँटे होते तो सहज रूप में बैठे रह जाते क्या? मेरे खयाल से यह सहजता नहीं रह पाती। आप गाड़ी से या पैदल यात्रा कर रहे हैं और कहीं सड़क टूटी-फूटी है तो केवल गाड़ी को ही साइड से चलाएंगे या आप भी साइड से निकलेंगे? उखड़ी हुई मिट्टी पर चलेंगे या सड़क पर चलेंगे?

(श्रोतागण बोले- सड़क पर चलेंगे)

आप सड़क पर चलने की कोशिश करेंगे, सड़क पर चलेंगे, क्योंकि सोचेंगे कि कंकड़ नहीं चुभे।

कंकड़ चुभने की अनुभूति किससे होगी?

स्पर्शेंद्रिय के माध्यम से कंकड़ चुभने की अनुभूति होगी।

किससे मालूम पड़ेगा कि गरमी लग रही है?

(श्रोतागण बोले- स्पर्शेंद्रिय से मालूम पड़ेगा)

मेरे खयाल से जिह्वा से भी बढ़कर स्पर्शेंद्रिय पर विजय प्राप्त करना कठिन है।

भगवान महावीर ने रसनेंद्रिय पर विजय प्राप्त की, स्पर्शेंद्रिय पर विजय प्राप्त की। पाँचों इंद्रियों पर विजय प्राप्त करने का कदम उठा लिया कैसी भी स्थिति आई उन्होंने कोई प्रतिक्रिया नहीं की। कंकड़-पत्थर आ गए तो मार्ग चेंज नहीं किया, मार्ग नहीं बदला। उसी पर चलते रहे। अच्छी सड़क आ गई तो भी मन में कोई हर्ष नहीं हुआ। यह विचार नहीं हुआ कि अब रास्ता ठीक आ गया।

हमारे मन में क्या विचार पैदा हो जाते हैं?

दो सौ मीटर टूटी-फूटी सड़क आने के बाद सही सड़क मिलने पर पैर बड़े आराम से पड़ते हैं। ऐसी स्थिति में हमारे क्या विचार होते हैं? सड़क बढ़िया आ गई तो फर्क पड़ता है या नहीं?

(श्रोतागण बोले- फर्क पड़ता है)

भगवान महावीर कहते हैं कि फर्क नहीं पड़ना चाहिए। अंतर नहीं आना चाहिए। जैसी मस्ती सही सड़क पर चलने में रहती है, वैसी ही मस्ती कंकरीट वाली सड़क पर चलते समय होनी चाहिए। कंकर चुभेंगे तो बिना पैसों के इलाज होगा। लोग पैसा देकर एक्यूप्रेशर कराते हैं, कंकरीट की सड़क पर अपने आप एक्यूप्रेशर हो जाता है।

कुछ भी हो इंद्रिय विजेता बनना चाहिए। इंद्रियों पर विजय प्राप्त करने से मन पर विजय होगी। मन पर विजय प्राप्त होगी तो क्रोध, मान, माया, लोभ परेशान नहीं करेंगे।

अति शोक, अति भय, अति चिंता, अति प्रसन्नता, अति हर्ष को

आयु घटने का कारण बताया गया है। कोई अति हर्ष, अति प्रसन्नता को सहन नहीं कर पाता। वह धड़ाम से नीचे गिर जाता है और उसकी मृत्यु हो जाती है। इसलिए ऐसा नहीं समझें कि क्रोध ही दुखी करता है। अति हर्ष भी दुखी करने वाला हो जाता है।

बहुत पुरानी बात है। मोतीलाल नेहरू वकील थे। उस समय एक व्यक्ति पर आरोप लगा था कि उसने मर्डर किया है, खून किया है। मोतीलाल नेहरू आरोपी के प्रतिपक्ष के वकील थे। आरोपी ने अपने बयान में कहा कि मैंने कोई खून नहीं किया। मोतीलाल नेहरू ने एक खेल खेला। उन्होंने आरोपी को धन्यवाद ज्ञापित किया। उसका अभिनंदन करते हुए कहा कि आपका अभिनंदन है। आपको धन्यवाद देता हूँ, किंतु आगे से ऐसा काम मत करना।

यह सुनकर आरोपी अति प्रसन्न हो गया कि मेरा केस फाइनल हो रहा है। मैं बरी होने वाला हूँ। अति हर्ष में उसने कहा कि मैं पागल थोड़े ही हूँ जो दूसरी बार और मर्डर करूंगा। आरोपी की बात सुनकर लिखा जाने वाला जजमेंट बदल गया।

अब वह बरी होगा या उसको जेल होगी?

(श्रोतागण बोले- जेल होगी)

अति हर्ष में भी कई बार आदमी अलग तरीके का बयान दे देता है। अति क्रोध में भी यही हालत होती है। इन पर नियंत्रण पाने के लिए पाँचों इंद्रियों के विषयों पर नियंत्रण पाना होगा। कोई विषय प्रभावित करनेवाला नहीं होगा तो क्रोध पैदा नहीं होगा। अहंकार पैदा नहीं होगा। लोभ-लालच नहीं सताएगा। किसी पदार्थ पर लगाव होगा, आकर्षण होगा तो उसको पाने की चेष्टा होगी। पाने की चेष्टा ही लोभ-लालच है। इसलिए उत्तम यह है कि किसी भी पदार्थ के प्रति आकर्षण ही नहीं हो। चाहे कितने ही अच्छे पदार्थ हों, किंतु मन में हर्ष पैदा नहीं होने देना। मन को नियंत्रित रखने पर क्रोध, मान, माया, लोभ कभी भी पीड़ित नहीं करेंगे। पीड़ित करने का उनमें साहस नहीं होगा।

जैसे डॉक्टर डेड बॉडी पर प्रयोग करते हैं, वैसे ही भगवान महावीर ने अपने शरीर को सौंप दिया प्रयोग करने के लिए। जो जैसा चाहे प्रयोग करे। कोई गालियाँ बके तो भला, कोई प्रशंसा करे तो भला। कोई कुत्ता छोड़े तो

भला, कोई कान में कील ठोंके तो भला। भगवान महावीर ने सोच लिया कि मैं शरीर को प्रयोगशाला में दे चुका हूँ। यह शरीर मेरा नहीं है। **'इदं न मम।'** उन्होंने शरीर के साथ अपनत्व का संबंध नहीं रखा। अपनत्व का भाव, मेरेपन का भाव कठिनाई देता है।

'वीर प्रभु की जय-जय बोलें, जय-जय अन्तर भाव संजो लें'

इस जय के साथ सभी अपने भाव को जोड़ लें। वीर प्रभु की जय बोलें कड़ी में ऐसा नहीं कहा गया कि जय हो, जय हो, जय हो, वीर प्रभु की जय हो, क्योंकि भगवान महावीर की जय हो चुकी है। हमारी जय अभी हो नहीं पाई।

हमारी जय कब होगी? बोलो हमारी जय कब होगी?

हमारी जय तब होगी जब पाँच इंद्रियों पर नियंत्रण कर लेंगे। जब चार कषाय पीड़ित करने वाले नहीं बनेंगे तब हमारी भी जय हो जाएगी। इतना सामर्थ्य जिस दिन हमारे भीतर जग जाएगा, उस दिन हमारी भी जय होगी।

'जय हो, जय हो, जय हो, जय हो,
राम भक्त की सदा विजय हो'

राम भक्त की सदा जय हो, सदा विजय हो। जो भी धर्म भक्ति में लगेगा उसकी विजय होनी है। एक बार धर्म श्रद्धा को हृदय में धारण कर लिया तो विजय प्राप्त होगी।

दूध में जावण डालने पर कोई दूध जल्दी जमता है तो कोई देर में। पर्याप्त मात्रा में जावण देने पर, सही समय पर जावण देने पर, दूध जल्दी जम जाता है। वैसे ही धर्म श्रद्धा का जावण हमने अपने भीतर डाल दिया तो एक दिन विजय होनी निश्चित है।

'जय हो, जय हो, जय हो, जय हो,
राम भक्त की सदा विजय हो'

जिसने धर्म श्रद्धा धारण कर ली, धर्म श्रद्धा जिसका लक्ष्य बन गया, वह इंद्रियों पर विजय प्राप्त करेगा। क्रोध, मान, माया, लोभ से अछूता बना रहेगा।

ऋतु नय अम्बर दृग बरस, आश्विन बद की दूज,
सूर्यनगर शशि शोभता, श्रद्धा हृदय अबूझ।

6 7 0 2

'ऋतु–नय–अम्बर–दृग बरस' का मलतब क्या हुआ?

अंकों की गिनती पीछे से होती है और पढ़ते आगे से हैं। दृग का मतलब आँख होता है। यानी 2, अम्बर मतलब 0, नय मतलब 7 और ऋतु मतलब 6। 'ऋतु नय अम्बर दृग' का मतलब हुआ 2076।

'सूर्यनगर शशि शोभता, श्रद्धा हृदय अबूझ'

सूर्यनगर का मतलब है– जोधपुर। जोधपुर को सूर्यनगरी भी कहा जाता है। आकाश में चंद्रमा शोभित हो रहा था, उदित हो चुका था, उस समय भावना जगी, धर्म श्रद्धा पैदा हुई और धम्म सद्धा चालीसा की रचना हो पाई। जो इस चालीसा को हर्ष से धारण करेगा निश्चित रूप से उसका दुख दूर होगा।

हाथ में तलवार रखने मात्र से तलवार काम नहीं करती। बंदूक कंधे पर टाँगने से काम नहीं चलेगा। कंधे पर बंदूक व हाथ में तलवार रखने से आदमी डर सकता है, उससे भय खा सकता है, किंतु योद्धा को युद्ध में सफलता तब मिलेगी, जब तलवार चलेगी। जब बंदूक चलेगी। नकली बंदूक, नकली तलवार बल देने वाली नहीं होगी। नकली बंदूक, नकली तलवार होने पर योद्धा का मन भीतर ही भीतर भयभीत रहेगा कि कोई गोली न चला दे, तलवार न चला दे। असली तलवार होने पर, असली बंदूक होने पर भय नहीं लगेगा। वैसे ही शुद्ध श्रद्धा होगी तो भावना में प्रबलता रहेगी, निर्भयता रहेगी। वह निर्भयता कर्म शत्रुओं से विजय प्राप्त कराने वाली बनेगी।

सुनंदा की बात भी चलती रही है।

सुंदर हो संस्कार, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...
साँझ ढली और सुबह आई, विजय ने फिर बात सुनाई,
रखूं न घर के मांय, भविकजन, सुन्दर हो संस्कार...

सांझ ढली और सुबह आई। सुबह बीती और साँझ आई। ऐसे करते–करते, दिन–रात व्यतीत होते रहते हैं। पहले बात उठ चुकी है कि विजय ने कहा, मैं सुरेश को घर में नहीं रखूंगा, अनाथाश्रम में भरती करवाऊंगा। लेकिन सुनंदा ने समझा दिया कि ऐसा नहीं होना चाहिए, क्योंकि यह प्रतिष्ठा की बात है, उससे कुछ दिन तो शांति से निकले, किंतु जो बात दिमाग में घर कर जाती

है, वह जब तक दिमाग से नहीं निकले तब तक रह-रहकर घूमती रहती है। वह दुराग्रह का रूप ले लेती है।

पर्व-पर्युषण हमारे फालतू विचारों को डिलीट कराने के लिए आते हैं। हर वर्ष आते हैं दिमाग में भरी फालतू बातें, दिमाग के कचरे को बाहर फेंकने के लिए। दिमाग से कचरा निकाल देने पर आदमी हलका हो जाता है। उसका जीवन उन्नत दिशा में आगे बढ़ने लगता है। वह श्रेष्ठता की ओर अग्रसर हो जाता है। दिमाग में कचरा भरा रहने पर सम्यक् सोच बनना मुश्किल है।

विजय के दिमाग में भी सुरेश बसा हुआ है। एक जगह लिखा हुआ था 'हमारे दिल में जितना स्थान मित्र का नहीं होता, उतना स्थान शत्रु का होता है।' मित्र को कभी हम भूल भी सकते हैं, किंतु शत्रु को कभी भुलाया नहीं जा सकता।

भुलाना किसको चाहिए?

(श्रोतागण बोले- शत्रु को भुलाना चाहिए)

एक बात ध्यान में लेना, जिसको भुलाना चाहेंगे, वही बार-बार याद आएगा। इसलिए भुलाने का प्रयत्न मत करो। डिलीट करो।

विजय ने डिलीट नहीं किया। दो-चार दिन बीतने के बाद फिर उसके दिमाग में आ गया कि सुरेश को घर से हटाना है। एक दिन फिर उसने वह बात उठाते हुए सुनंदा से कहा कि मैं सुरेश को घर में रखनेवाला नहीं हूँ, तुम चाहे कुछ भी कहो। मेरी प्रतिष्ठा पर दाग लगे तो लगे, मुझे उसकी कोई चिंता नहीं है। रोज-रोज के तनाव से एक बार मुकाबला करना ठीक है।

ऐसा कहते हुए उसने सुरेश का हाथ पकड़ा और सुनंदा से कहा कि मैं इसे अनाथाश्रम में भरती करानेवाला हूँ। सुनंदा ने हाथ जोड़ते हुए कहा कि नाथ! आप यह क्या कह रहे हैं? कौन-सा मजाक कर रहे हैं? कौन-सी हँसी कर रहे हैं? ऐसे हँसी-मजाक करना आपके लिए अच्छी बात नहीं है।

अनाथालय है आश्रय इसका, रोके मुझको दम-खम किसका,
धारा मन में आज, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...

कई लोग ऐसा ही सोचते हैं कि मेरे दिमाग में जो बात आ गई, वही होनी चाहिए। मैंने जो कह दिया, वही होना चाहिए। इसको कहते हैं इगो। इगो

से लड़ाई-झगड़े होने लगते हैं। व्यक्ति सोचता है कि कुछ हानि भले हो जाए किंतु मेरी टेक बनी रहनी चाहिए। मेरा इगो डाउन नहीं होना चाहिए।

विजय कहता है, मैंने पक्का सोच लिया है कि इसको अनाथालय में भरती कराऊंगा। इसका स्थान अनाथालय ही है। यह घर में रहने की स्थिति में नहीं है। ऐसा कहते हुए वह कहता है कि किसमें दम-खम है जो मुझे रोक सके। मैं इसको अनाथालय में भरती कराऊंगा, कराऊंगा, कराऊंगा।

विजय कितना भी आक्रोशित हुआ, किंतु सुनंदा आक्रोश में नहीं आई। यह सुंदर संस्कार वस्तुत: ग्राह्य है। यह स्वीकार करने योग्य है कि कोई कितना भी भोंके, अपने आपको शांत रखना है। ऐसा बयान नहीं देना है कि मेरी गलती नहीं है, सामने वाले ने ऐसा बोला तो मैं भड़क गया। तुम कुत्ते नहीं हो जो भड़कोगे, भोंकोगे।

जैसे साँप की पूँछ पर पैर पड़ते ही वह फुफकार मारता है, वैसे ही अधिकांश लोग थोड़ा भी कुछ कह देने पर फुफकारने लगते हैं। हमें सोचना चाहिए हम इनसान हैं, साँप नहीं। हमें दूसरों के कथन से भड़कना नहीं चाहिए। यदि भड़क जाएंगे तो अस्तित्व क्या रहेगा। किसी ने थोड़ी सी तुल्ली लगाई और भड़क गए तो इसका मतलब कि भीतर की मानवता सोई हुई है। सोई हुई मानवता को जगाने की आवश्यकता है।

विजय बहुत ऊँची-नीची बातें कहता है। वह सुरेश का हाथ पकड़कर कहता है, किसमें ताकत है, किसमें दम-खम है जो मुझे रोक ले, किंतु सुनंदा विनय भाव से निवेदन करती है। कहती है नाथ! आप ऐसा विचार मत कीजिए। सुरेश ने आपका कुछ बिगाड़ा नहीं है। आप इस बात को दिमाग से निकाल दीजिए।

कंचन तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह,
मान बड़ाई ईर्ष्या, तुलसी दुर्लभ ऐह।

करोड़ों का दान देना बहुत आसान है। रत्नों का दान करना बहुत आसान है। हजारों-हजार गायों का दान करना बहुत आसान है। गंगा में नहा लेना बहुत आसान है, किंतु अपनी पकड़ को छोड़ना बहुत कठिन है। बहुत दुष्कर है। पकड़ छूट नहीं पाती। व्यक्ति सब मंजूर कर लेता है, किंतु अपनी

पकड़ को नहीं छोड़ पाता। कहने वाले तो यहाँ तक कह देते हैं कि भले ही मैं सातवीं नरक में चला जाऊँ, किंतु इसको छोड़ूंगा नहीं।

सातवीं नरक में जाना सरल काम है क्या? आज कोई सातवीं नरक में जाना चाहे, तो जा पाएगा क्या? अभी आपको मोहलत दी गई है आप कितनी भी उठा-पटक करें किंतु सातवीं नरक के मेहमान नहीं बन पाएंगे।

भगवान महावीर से कोणिक ने पूछा कि मैं मरकर कहाँ जाऊंगा। भगवान ने कहा तुम छठी में जाओगे। उसने दूसरा प्रश्न किया कि भगवन्! नरक कितनी होती है? उत्तर मिला, नरक सात है। कोणिक ने कहा कि जब नरक में ही जाना है तो मैं सातवीं नरक में जाऊंगा। ऐसा करके क्या उसे गिनीज बुक में नाम लिखाना था?

कोणिक ने बहुत प्रयत्न किए, किंतु मरकर वह गया छठी नरक में ही। उसका मनोभाव पूर्ण नहीं हुआ। वह चाहता था सातवीं नरक में जाना, किंतु गया छठी नरक में। वर्तमान में भरत क्षेत्र में जन्मा कोई कितनी भी कोशिश कर ले कि गिनीज बुक में नाम लिखवाने के लिए मुझे सातवीं नरक में जाना है, किंतु अभी उसे सातवीं नरक मिलने वाली नहीं है।

बंधुओ! विजय अपनी बात चला रहा है। वह अपनी बात छोड़ने को तैयार नहीं है। सुनंदा प्रयत्न कर रही है उसे समझाकर शांत करने का।

चूल्हे पर रखा दूध उफान मार रहा हो तो पानी का छींटा मारने से एक बार नीचे दब जाता है, किंतु फिर उसमें उफान आता है। जब तक चूल्हे की आँच नहीं हटाएंगे तब तक दूध उफान मारता रहेगा। आँच हटा देने पर दूध उफान नहीं मारेगा। वह शांत हो जाएगा।

विजय की आगे क्या सोच बनती है, उस पर समय के साथ विचार करेंगे।

श्री सुहर्षा श्री जी म.सा. की 21 की तपस्या है और महासती श्री बीज श्री जी म.सा. की 22 की तपस्या है। बीज श्री जी म.सा. की पहले से बेले-बेले की तपस्या चल रही थी। दीक्षा के पहले भी बेले-बेले की तपस्या चालू थी। कुंथवास में इनकी दीक्षा संपन्न हुई। आज उनकी 22 की तपस्या है। श्री सुहर्षा श्री जी म.सा. भी एकांतर कर रही थीं। एकांतर करते-करते मन में

तपस्या की लगन लग गई। आज 21 की तपस्या है। भाइयों में अमित गांधी की आज मासखमण की तपस्या संपन्न हो रही है। मासखमण के रथ पर आरूढ़ होने की तैयारी है। कला बाई जी धींग, वनिता जी भी आज मासखमण के रथ पर आरूढ़ हो रही हैं। वनिता जी ने कल 29 के पच्चक्खाण किए। उनके शरीर में थोड़ी असाता है, फिर भी मनोभाव बरकरार है कि मुझे मासखमण के रथ पर चढ़ना है।

संकल्प मजबूत होना चाहिए। संकल्प मजबूत होता है तो गाड़ी पार हो जाती है। सरिता जी मुणोत तो मासखमण से भी आगे बढ़ गईं। वे डेढ़ मासखमण के नजदीक पहुँच रही हैं। आज उनकी 44 की तपस्या है। हम भी मासखमण करें तो बहुत अच्छी बात। 45 करें तो बहुत अच्छी बात, 51 करें तो बहुत अच्छी बात। और मासखमण नहीं करें तो क्या करें?

(श्रोतागण बोले- अठाई करें)

अठाई करने वाले जोर से बोलें क्या करें?

(कुछ लोग बोले- अठाई करें)

अठाई नहीं करने वाले भी बोलें, क्या करें?

(लोग बोले- अठाई करें)

इसका मतलब है कि अठाई नहीं करने वाले भी बहुत हैं। अठाई नहीं करनेवाले बोलेंगे तो उनके मन में भी भावना जग सकती है। अब बहुत कम समय रह गया है। चिंतन-मनन का समय पूरा हो रहा है। चुनाव प्रचार बंद हो रहा है। अब चुनाव प्रचार क्या करना, अब तो वोट डालने का समय आ गया। केवल कल का दिन है, सोच लो। जिनको नौ की तपस्या करनी है, वे भी सोच लें और जिनको आठ की तपस्या करनी है, वे भी सोच लें। अपनी भावना को जागृत कर अपने आपको आगे बढ़ाएं। इतना ही कहते हुए विराम।

12 अगस्त, 2023

7

धर्म श्रद्धा मन दृढ़ बनाती

शांति जिन एक मुज विनति, सुणो त्रिभुवन राय रे।
शांति स्वरूप केम जाणिये, कहो मन केम परखाय रे।।
धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।

धर्म की आराधना कैसे करें और कैसे समझें कि धर्माराधना हो गई?

विद्यार्थी पढ़ता है, परीक्षा देता है। रिजल्ट आने पर ज्ञात होता है कि वह उत्तीर्ण हुआ या अनुत्तीर्ण। आराधना भी अध्ययन है। आध्यात्मिक अध्ययन। आध्यात्मिक पढ़ाई का परिणाम कैसा होना चाहिए? उसका रिजल्ट कैसा होना चाहिए? भौतिक अध्ययन की परीक्षा देने के लिए विद्यार्थी रात-रात भर मेहनत करता है, परिश्रम करता है। जिसकी यह तमन्ना हो कि मुझे फर्स्ट क्लास आना है, वह रात-दिन सोया रहेगा तो काम नहीं चलेगा। आध्यात्मिक अध्ययन करने वालों में भी जब यह ललक जगेगी कि मुझे प्रथम आना है तो वे उसके लिए मेहनत करेंगे।

वह मेहनत दिखावे के लिए नहीं, मन की संतुष्टि के लिए हो। मन की तृप्ति के लिए हो। मन की तृप्ति बहुत बड़ी उपलब्धि है। लोगों का मन प्राय: अतृप्त बना रहता है। अतृप्ति, अशांति की जननी है। शांति कहीं बाहर से नहीं आएगी। वह भीतर से ही प्रकट होगी।

आराधना ऐसी करें कि अपनी सारी बुराइयाँ गल कर नष्ट हो जाएं। ऐसी बात नहीं है कि हममें बुराइयाँ नहीं हैं। बहुत सारी अच्छाइयों के बावजूद हमारे भीतर बुराइयाँ भी हैं।

आचार्य पूज्य गुरुदेव फरमाया करते थे कि सोने की थाल में ताँबे की

मेख क्यों होना। कोई भोजन करने बैठे और उसके सामने आई सोने की बड़ी-सी थाल में ताँबे की मेख हो तो उसको थाल नजर आएगा या ताँबे की मेख?

(श्रोतागण बोले- ताँबे की मेख नजर आएगी)

जैसे ताँबे की मेख पर दृष्टि जाती है, वैसे ही इस सुंदर जीवन में थोड़ा भी दाग लग जाए तो लोगों की नजर उस पर जाती है। अपने जीवन में बने थोड़े भी मेख को गलाना है। उसको दूर करना है।

पर्व पर्युषण आएंगे... आएंगे... आएंगे... आ रहे हैं... आ रहे हैं... आ रहे हैं... हम सोच रहे थे कि पर्व पर्युषण आने वाले हैं, किंतु अब तो दरवाजे पर आकर खड़े हो गए। अब उनकी अगवानी की तैयारी करनी है। आज समीक्षा करनी है कि उनकी अगवानी करने के लिए कैसी तैयारी कर रहे हैं, अगवानी की कैसी तैयारी की है!

यदि मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान इस सभा में आने वाले हों, तो हम सामान्य स्थिति में रहेंगे या कुछ विशेष होगा? सामान्य दर्शनार्थी के आने और शिवराज सिंह चौहान के आने में फर्क पड़ेगा या नहीं?

(श्रोतागण बोले- फर्क पड़ेगा)

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी आ जाएं और पर्व पर्युषण आ जाए, तो फर्क पड़ेगा या नहीं पड़ेगा?

(श्रोतागण बोले- पड़ेगा, पड़ना चाहिए)

नरेंद्र मोदी आ रहे हैं तो फर्क पड़ेगा। पर्व पर्युषण आ रहा है तो पड़ना चाहिए। दोनों शब्दों में अंतर आ गया! मतलब, दूसरा वाक्य शिथिल हो गया। पड़ना तो चाहिए, किंतु पड़ेगा कितना यह मालूम नहीं है। पर्व पर्युषण आने पर फर्क पड़ना चाहिए। क्यों? आप संशय में हैं कि फर्क होगा या नहीं होगा। यह समझ से बाहर की बात हो गई। अविश्वास की बात हो गई।

विश्वास क्यों डोल गया? यहाँ पर भी वही आवाज आनी चाहिए थी कि फर्क पड़ेगा ही।

दृढ़ आवाज भी आनी चाहिए, किंतु आवाज न भी हो, हम केवल आवाज के पीछे नहीं रहने वाले। हम करके दिखाने वाले हैं।

नाना गुरु फरमाया करते थे कि मैं कहता बारह आना हूँ, किंतु करता

सोलह आना हूँ। कितने आना कहना और कितने आना करना अपनी रुचि पर है। कम करना या ज्यादा करना अपनी रुचि पर है। बोलो कम करना चाहिए या ज्यादा?

(श्रोतागण बोले– ज्यादा करना चाहिए)

बोलकर दिखाने की आवश्यकता नहीं है। अपने भीतर का परिवर्तन खुद को तो ज्ञात होगा, किंतु पड़ोसी को भी ज्ञात होना चाहिए। वह बोलने से ज्ञात नहीं होगा। वह ज्ञात होगा व्यवहार से।

पड़ोसी से आप बोल देंगे कि भाई मैं तुमसे खमतखामणा करता हूँ, आगे से ऐसा व्यवहार नहीं करूंगा पर अगले वर्ष फिर वैसा ही चलता रहेगा तो वह आपके बारे में क्या सोचेगा? इसलिए कहने के बजाय व्यवहार ऐसा होना चाहिए कि सामने वाले को पता लग जाए कि वस्तुत: परिवर्तन आया है।

पर्व पर्युषण बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। खास करके कषायों का शमन करने के लिए। जीवन व्यवहार में बहुत बार अचिंत्य प्रसंग घट जाते हैं। व्यक्ति को लगता है कि ऐसा प्रसंग नहीं घटना चाहिए था, किंतु घट जाता है। ऐसे शब्द निकल जाते हैं जो नहीं निकलने चाहिए थे। जो शब्द निकल गए वे वापस नहीं लाए जा सकते किंतु उसके बाद की शब्दावली से, व्यवहार से उसको सुधारने का मौका है। अन्य समय में मौका आए या नहीं, किंतु पर्व पर्युषण में आ जाता है। पर्व पर्युषण के समय उपशमन करने से किसी की भी हेठी नहीं लगती। शास्त्रकारों ने उपशमन करनेवाले को ऊँचा दर्जा दिया है। जो उपशमन करता है, अपने आपको शांत करता है, अपनी समाधि में जीता है, वह आराधना करनेवाला होता है।

आज बात की शुरुआत इससे हुई थी कि धर्माराधना कैसे करें। मन को शांत करने की दिशा में किए गए प्रयत्न को धर्माराधना कह सकते हैं। धार्मिक क्रियाएँ होने के बावजूद मन शांत नहीं हो, मन में संतोष नहीं आए तो समझना चाहिए कि अभी केवल पोशाक का परिवर्तन हुआ है, मन का नहीं। मन का परिवर्तन एक दिन से नहीं होता है। वह होता है अभ्यास से।

जब बच्चा जन्म लेता है, उस समय उसे एक-दो, तीन-चार भी बोलना नहीं आता है। वर्ण बोलना भी नहीं आता है। अ-आ भी बोलना नहीं

आता है। उस समय बच्चे को किताब देकर कोई कहे कि बताओ इसमें क्या लिखा हुआ है तो वह नहीं बता पाएगा, किंतु वही बच्चा अभ्यास करके पढ़ने लगता है। निरंतर अभ्यास से वह बी.ए.-एम.ए., एम.बी.ए. आदि न जाने कौन-कौन सी डिग्रियाँ प्राप्त कर लेता है। सी.ए. बन जाता है, एडवोकेट बन जाता है, प्रोफेशनल बन जाता है। वैसे ही निरंतर अभ्यास करने से शांति प्राप्त हो सकती है। समाधि प्राप्त हो सकती है।

निरंतर अभ्यास कैसे होगा?

सुनंदा चारित्र से इसकी प्रेरणा मिलती है।

सुंदर हो संस्कार, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...
दृढ़ता से तब वह यूँ बोली, मुझे न समझें इतनी भोली,
छोड़ूं इसका संग, भविकजन, सुन्दर हो संस्कार...

सुनंदा चारित्र में बात चल रही थी कि विजय अपने छोटे भाई सुरेश को घर में नहीं रखना चाहता और सुनंदा उसको घर से बाहर नहीं होने देना चाहती। सुनंदा ने अपनी सास को जुबान दी थी कि आप निश्चिंत रहिए, मैं इसकी सार-संभाल करूंगी। विजय को यह बात नहीं सुहा रही थी, इसलिए वह बार-बार घर में झंझट खड़ी करता था। विजय के मन में एक बात बार-बार आती थी कि सुरेश को घर से बाहर करूँ। अनाथाश्रम में इसका दाखिला करवा दूँ।

इस बात को लेकर एक बार जोरदार झड़प हो गई। गुस्से में आकर विजय ने सुरेश का हाथ जोर से पकड़ा और कहा, चल। सुरेश घबरा गया।

सुनंदा ने कहा, नाथ! आप ऐसा क्यों करते हैं? इसने आपका क्या बिगाड़ा है? आप इसको घर से क्यों निकालना चाहते हैं? यह मूक-वधिर है, बोल नहीं पाता है, इसलिए इसके साथ आप ऐसा व्यवहार कर रहे हैं। इसका भी घर पर हक है। इसके साथ ऐसा व्यवहार करना उचित नहीं है।

सुनंदा, सुरेश का हाथ छुड़ाकर विजय को चेतावनी देती है। कहती है कि आप मुझे इतनी भोली मत समझना। मैं स्पष्ट कर देती हूँ कि चाहे कैसी भी परिस्थिति आ जाए, मैं इसका साथ नहीं छोड़ूंगी। आप सोचते होंगे कि मैं सुरेश का साथ छोड़ दूंगी किंतु उसका साथ छोड़ने वाली नहीं हूँ। अपने कर्तव्य पर

अटल रहूंगी।

यह बात सुनते ही विजय का गुस्सा आसमान छूने लगा। उसके हाथ काँपने लगे। उसकी आँखें लाल हो गईं। भौंहें चढ़ गईं। गरदन तन गई। उसने आव देखा न ताव, गुस्से में सुनंदा को एक घूँसा लगा दिया। सुनंदा को जोर का घूँसा लगा फिर भी वह शांत खड़ी रही। विजय ने धड़ाधड़ दो-चार घूँसे और लगा दिए। न वह अपने आप रुका और न सुनंदा ने रोकने की कोशिश की। रोकने की जगह सुनंदा कहती है, नाथ! आप चाहे मारें, चाहे तारें आपकी मरजी, किंतु यह सुनिश्चित है कि सुरेश इस घर का सदस्य है और रहेगा। वह यहाँ से बाहर नहीं जा सकता। मैं उसको बाहर नहीं होने दूँगी।

विजय के ऑफिस का समय हो जाने से वह ऑफिस चला गया। वह ऑफिस चला तो गया, किंतु किसी भी कार्य में उसका मन नहीं लग रहा था।

कभी मासूम सूरत दिखती, कभी माँजी कहती दिखती,
बुनता मन से जाल, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...

सुरेश ऑफिस तो चला गया, किंतु काम में उसका मन नहीं लग रहा था। क्योंकि कभी उसके सामने सुरेश का मासूम चेहरा दिखने लगता तो कभी माँजी की आकृति कुछ कहती दिखती। विजय का मन उद्विग्न हो गया। उद्विग्न मन से वह एक बार सोचता है कि बेचारा कैसा मासूम है, किंतु तुरंत उसका इगो खड़ा हो गया कि ये बेकार की बात है। वह मासूम-वासूम कुछ नहीं है। उसने घर को बरबाद कर दिया है। उसकी वजह से घर की सारी शांति खत्म हो गई। घर-परिवार की सारी खुशियाँ लुट गईं।

खुशियाँ लूटने वाला, उसे छीनने वाला अन्य कोई नहीं है। हमारा मन ही खुशियाँ लूटता है। वही अशांत बनाता है और समाधान में भी ले जाने वाला वही है। मन को समझाना बहुत बड़ी बात है। जिसने उसे समझा लिया, वह सफल हो जाएगा। मन को समझ लेने पर बहुत से काम संपन्न हो जाएंगे। सफल हो जाएंगे।

विजय अपने सामने उभरी आकृतियाँ को देख परेशान हो गया क्योंकि कभी उसके सामने सुरेश का मासूम चेहरा आता है, तो कभी माँजी यह कहती दिखाई देती हैं कि विजय तू क्या कर रहा है! उन आकृतियों को देखते-

देखते विजय परेशान हो गया।

एक बात ध्यान में रखना कि ये आकृतियाँ तब तक दिखती रहेंगी, जब तक मन अशांत रहेगा। आकृतियाँ मन को अशांत बनाती रहेंगी।

आकृतियाँ कब हटेंगी?

डिलीट करने का तरीका आ जाएगा तो आकृतियाँ अपने आप हट जाएंगी। भगवान महावीर ने डिलीट करने का उपदेश दिया है। कहा है, उपशमन करो। उपशांत करो। अपने गुस्से को शांत करो, अपने कषायों को शांत करो। कषाय शांत होंगे तो मन की आकृतियाँ अपने आप दूर हो जाएंगी।

विजय के सामने आकृतियाँ आती रहीं, किंतु उसका इगो भी सामने आकर खड़ा हो गया। उसके कारण वह सोचता था कि नहीं, मेरी सोच गलत नहीं है। मेरी सोच सही है। विजय सोच रहा था कि उसको घर में रखने से समय बरबाद हो रहा है, शांति और सुख क्षीण हो रहा है, इसलिए इसे घर में नहीं रख सकता। घूम-फिरकर बात वहीं आ जाती है।

मानस जब-जब बोझिल होता, ऐसे विचारों में वह खोता,
मन की है यह रीत, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...

असंस्कारित मन की यह रीत है कि उसके समक्ष जो विषय आ जाता है वह उसको छोड़ नहीं पाता। उसको डिलीट नहीं कर पाता। वही विषय बार-बार घूमता रहता है कि ऐसा क्यों हुआ, कैसे हुआ।

विजय सोच रहा है कि इससे सुनंदा को क्या लेना-देना। यह तो सामान्य बात है। किसी के साथ ऐसा व्यवहार हो जाने पर मन बार-बार कहता है कि सामने वाले ने ऐसा क्यों किया, ऐसा होने के पीछे कारण क्या था। व्यक्ति सोचता है कि मेरी कोई गलती नहीं थी, सामने वाले की गलती थी। सामने वाले ने मेरे साथ बुरा बरताव किया।

इस तरह के विचार बार-बार मन में घुलते रहेंगे। इससे बाहर निकलना उसके वश की बात नहीं होगी। विजय के पास भी मन तो था, किंतु वह मन को सुसंस्कृत नहीं कर पाया। सुसंस्कृत नहीं कर पाया तो उधेड़बुन में पड़ा रहा।

सुनंदा ने अपने मन को संस्कारित किया। संस्कारित करने से उसके

सामने कैसी भी घटना घटी, उसे कितने भी घूँसे पड़े, उसके मन में कोई आकृति नहीं बनी। आकृति नहीं बनने का मतलब है कि उसका मन शांत था, समाहित था।

एक ट्रक दुर्घटना में लगभग 10-12 साल का लड़का ट्रक की चपेट में आ गया। उसको हॉस्पीटल में भरती कराया गया। उसे ठीक होने में अधिक समय लगा। चार महीने बाद डॉक्टर ने कहा कि बेटा अब तुम स्वस्थ हो, घर जा सकते हो। उसने कहा, नहीं-नहीं, मैं नहीं जा सकूंगा। डॉक्टर ने कहा, क्यों, क्या हुआ? घबराने की क्या बात है। डरने की क्या बात है। बार-बार दुर्घटना थोड़ी होती है। बार-बार एक्सीडेंट नहीं होता।

उसने कहा, डॉक्टर साहब! एक्सीडेंट का भय नहीं है। जिस ट्रक ने मुझे टक्कर मारी थी उसके पीछे लिखा था- फिर मिलेंगे। वह वापस मिल गया और फिर झटका लगा दिया तो क्या होगा। भय की यह ग्रंथि परेशान करती रहती है। पता नहीं कितने समय तक परेशान करती रहेगी, क्योंकि व्यक्ति जल्दी से उससे मुक्त नहीं हो पाता। उससे मुक्त होने का एक ही उपाय है। वह उपाय है धर्म श्रद्धा। उससे व्यक्ति को संबल मिलता है, जिससे वह सोच पाता है कि उसका मुकाबला करने की ठान लो। एक बार यदि भय का मुकाबला कर लिया तो बार-बार वह भयभीत नहीं करेगा।

गुरुदेव फरमाया करते थे कि माताएं बच्चों को भय दिखाती हैं कि हाऊ आ जाएगा, भूत आ जाएगा। एक बच्चे के ऐसे ही संस्कार पड़ गए। वह रात में एक रूम में नहीं जा पाता था। दिन में जाता तो भी घबराता। कहता, मैं नहीं जाऊंगा, वहाँ हाऊ है, भूत है।

उसके दादा ने उसका भय दूर करने का विचार किया। भय दूर करने के लिए उन्होंने उसको एक ताबीज बाँध दी और कहा कि यह ताबीज तुम्हारी रक्षा करेगा। तुम अकेले कहीं भी, किसी भी जगह जाओ, हाऊ या भूत तुम्हें परेशान नहीं करेंगे। बच्चे ने कहा, दादा जी! मुझे डर लगता है। दादा जी ने कहा कि डरो मत बेटा, मैं तुम्हारे साथ हूँ। मैं बाहर खड़ा हूँ। वह रूम में गया और कुछ नहीं हुआ। उसको ताबीज पर विश्वास हो गया कि यह मेरी रक्षा करेगा।

सालभर बाद दादा जी ने सोचा कि अब इसका भय निकल गया तो

उससे ताबीज लेकर कहा, बेटा! अब कमरे में जाओ। उसने कहा, नहीं, मैं नहीं जाऊंगा, मुझे डर लग रहा है। दादा ने कहा, किस बात का डर! मैं कह रहा हूँ ना, भूत नहीं है, हाऊ नहीं है। तुम्हारा भूत चला गया। उसने कहा, पहले मेरे पास ताबीज था, सिक्योरिटी थी, इसलिए डर नहीं लगता था।

दादा ने विचार किया कि इसको एक जगह से हटाया, तो इसने दूसरी जगह पकड़ कर ली। दादा ने कहा, चलो! मैं तुम्हारे साथ चलता हूँ। वह कमरे में गया, कमरे में उसके साथ कुछ भी नहीं हुआ। ऐसा दो-चार बार करके उसके दादा ने उसको विश्वास दिलाया। उसके भय की ग्रंथि दूर हो गई। भय की ग्रंथि को दूर करना बहुत कठिन है। व्यक्ति को भय रहता है कि मेरा क्या होगा? कल क्या होगा? मेरा भविष्य क्या होगा?

अरे भाई! भविष्य जब आएगा, तब आएगा। आज क्यों भविष्य की चिंता करना। कल की चिंता में आज के सुहावने दिन क्यों बरबाद करना। अधिकांश लोग या तो भूत में जीते हैं या भविष्य की रंगीन कल्पनाओं में। इससे वर्तमान उनके हाथ से खाली निकल जाता है। वर्तमान खाली नहीं जाए इसके लिए हमें वर्तमान में जीना है।

विजय कल (भूतकाल) में जी रहा था और सुनंदा वर्तमान में जी रही थी। सुनंदा का मन शांत था। भले ही उसको घूँसे लगे, चोट लगी, शरीर में दर्द भी हुआ होगा, किंतु उसका मन नहीं दुख रहा था। उसके मन में दर्द नहीं हो रहा था। वह सोच रही थी कि मैंने अपना कर्तव्य निभाया और भविष्य में भी अपने कर्तव्य का निर्वाह करूंगी।

बंधुओ! सबको मन मिला है। सभी इसे संस्कारित करें। मन संस्कारित नहीं होगा तो वह नरक-निगोद में कहाँ ले जाएगा, पता नहीं है। मन को संस्कारित कर लिया तो वह नरक-निगोद में फँसाने वाला नहीं बनेगा।

'मन तोहे केहि विधि कर समझाऊँ...'

हे मन! तुझको किस विधि से समझाऊँ! मन समझेगा, किंतु पहले हम मन को समझ लें। मन के स्वभाव को समझ लिया, उसकी चाल को समझ लिया तो मन को समझने में ज्यादा कठिनाई नहीं होगी किंतु मन का स्वभाव नहीं जान पाने से, उसकी चाल नहीं समझ पाने से कई बार उसके साथ

जबरदस्ती की जाने लगती है। इस कारण से व्यक्ति को हताश होना पड़ता है। निराश होना पड़ता है। परिणामस्वरूप सफलता नहीं मिल पाती। अत: मन की चाल को समझें।

पर्व पर्युषण आराधना करने का सुंदर अवसर है। इनकी आराधना करें व मन की चाल को समझने का प्रयत्न करें।

तपस्याएं भी हो रही हैं। महासती श्री बीजरुचि श्री जी म.सा. की आज 23 की तपस्या है और महासती श्री सुहर्षा श्री जी म.सा. की 22 की है। कल तीन मासखमण के पच्चक्खाण हुए थे। मालूम पड़ता है कि वनिता जी नपावलिया की भावना आगे बढ़ी है। आज 31 है। सरिता जी मुणोत की 45 है। अनेक भाई-बहन अलग से भी पच्चक्खाण कर रही हैं। यह भी मन को समझने का एक उपक्रम है। तपस्या में कई बार मन में उथल-पुथल होती होगी, पर मन की चाल को जो समझ लेता है, वह आगे बढ़ जाता है।

मन कहता है कमजोरी आ रही है, किंतु मन की चाल को समझने वाला सोचता है कि यह सब होता रहेगा। मन की उथल-पुथल चलती रहेगी। उसे मजबूत बना लिया, विचारों को दृढ़ बना लिया, संकल्प कर लिया तो मन की नहीं चलेगी।

बाहर से आनेवाले लोग केवल दर्शक बनकर नहीं रहें। मेहमान बनकर नहीं रहें। सबका लक्ष्य साधना का होना चाहिए। रात्रि संवर की आराधना होनी चाहिए। रात को कोई आदमी होटल में, कमरों में ढूँढे तो कोई भी वहाँ नहीं मिलना चाहिए। सब लोग धर्मस्थान में, धर्म ध्यान करते हुए, संवर करते हुए, स्वाध्याय करते हुए मिलें। ऐसा लक्ष्य बनेगा तो परिणाम अवश्य आएंगे। इसके लिए थोड़ा सा मोड़ लेना पड़ेगा।

होटल में नहीं, सब प्रवचन मंडप में हों। ऐसा मन बन जाए तो मन में परिवर्तन आएगा, मोड़ आएगा। मन में परिवर्तन की एक लहर चलेगी। वह लहर आगे बढ़ेगी तो मन बोलेगा-

हे प्रभु! मेरी एक पुकार, मैं भी बन जाऊँ अणगार।

घबराओ मत। अभी साधु नहीं बनाएंगे। पहले पाँच महीने 'लाभं' में रहना पड़ता है। गुरुकुल में रहना पड़ता है। परीक्षा होती है, तब साधु बनते हैं,

इसलिए बोलने में मत घबराओ।

हे प्रभु! मेरी एक पुकार, मैं भी बन जाऊँ अणगार।
छोड़ के सारे पाप अठार, मैं भी बन जाऊँ अणगार।।

कब बनेंगे अणगार?

जब घर छोड़ेंगे तब बनेंगे। जब होटल छोड़ेंगे तब बनेंगे। ए.सी., पंखा, लाइट, कूलर छोड़ेंगे तब बनेंगे। छोड़ने का अभ्यास करने के लिए अभी आठ दिन ए.सी., पंखा, कूलर उपयोग में नहीं लें।

कौन-कौन तैयार हैं? हाथ खड़े कीजिए।

(कुछ लोगों ने हाथ खड़े किए)

बस आठ ही!

अभी तो वैसे भी ठंडी हवा चल रही है। हमें रात में दरवाजा बंद करना पड़ता है। धर्म ध्यान करने के साथ अधिक-से-अधिक संवर का लक्ष्य बनाएं। ऐसा करेंगे तो अपने आपको धन्य बनाने में समर्थ बनेंगे। इतना कहते हुए विराम।

13 अगस्त, 2023

8

पर्युषण की आई रे बहार

धर्म जिनेश्वर गाऊँ रंगशुं, भंग म पड़शो हो प्रीत जिनेश्वर,
बीजो मन मंदिर आणुं नाही, ए अम कुलवट रीत जिनेश्वर।
धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।

धर्म श्रद्धा को हृदय में धारण करना आसान काम नहीं है। धर्मनाथ भगवान की स्तुति करते हुए एक बात कही गई है–

'बीजो मन मंदिर आणुं नाही'

अर्थात् एकमात्र धर्म श्रद्धा ही मुझे अभिप्रेत है। दूसरी कोई बात हृदय में स्वीकार नहीं की जाएगी। दूसरी बात से तात्पर्य है कि जो बात धर्म श्रद्धा को खंडित करने वाली है, धर्म श्रद्धा को हटाने वाली है, धर्म श्रद्धा में छेद करने वाली है, उस बात को, उस विषय को मन–मंदिर में स्थान नहीं दिया जाएगा। जो ऐसा दृढ़ प्रतिज्ञ होता है कि धर्म श्रद्धा खंडित करने वाली किसी बात को मैं अपने मन मंदिर में स्थान नहीं दूँगा, वह विकास की ओर बढ़ता है।

कार्तिक सेठ ऐसे ही दृढ़प्रतिज्ञ व्यक्ति थे, जो किसी अन्य धर्म की आकांक्षा नहीं करते थे। दुनिया में बहुत सारी चमत्कारी बातें भी होती हैं, किंतु वे उन चमत्कारों से प्रभावित नहीं होते थे।

कार्तिक सेठ जहाँ रहते थे, वहाँ के सम्राट एक धर्म प्रवर्तक से प्रभावित हुए। सम्राट ने सेठ को अपने यहाँ भोजन के लिए बुलाया। धर्म प्रवर्तक ने शर्त रखी कि कार्तिक सेठ के मौर (पीठ) पर थाली रखकर भोजन कराओगे तो करूंगा। उसका आशय था कि कार्तिक को झुकना पड़ेगा। सम्राट, उस धर्म प्रवर्तक से अंध प्रभावित था, इसलिए उसकी शर्त मानकर कार्तिक सेठ को

आदेश दे दिया। कार्तिक सेठ को राजा का आदेश मिला। राजाज्ञा अपरिहार्य होती है, इससे सेठ को लाचारी में जाना पड़ा। उस प्रवर्तक ने कार्तिक सेठ की पीठ पर थाल रखकर भोजन किया, किंतु सेठ की गरदन ऊँची रही।

कार्यक्रम पूरा होने के बाद कार्तिक सेठ के मन में विचार पैदा हुआ कि संसार में रहने से इस प्रकार के पराभवों को देखना पड़ता है, अत: उचित है कि मैं धर्म प्रज्ञप्ति स्वीकार कर लूँ। भगवान मुनि सुव्रत स्वामी का पधारना हुआ, उपदेश सुनकर उनमें निर्वेद-संवेग के भाव पैदा हो गए। उनका विचार बना कि जिससे धर्म को क्षति पहुँचे वैसा कोई काम नहीं करना। उन्होंने विचार कर लिया कि इस संसार में नहीं रहना। इस संसार में नहीं रहने का मतलब यह नहीं कि आत्महत्या कर ली जाए। उसका मतलब है साधना पथ को स्वीकार करना। उन्होंने अपने एक हजार आठ मित्र व्यापारियों को बुलाकर उन्हें अपनी बात बताई। उन सभी ने उनके साथ मुनि चर्या स्वीकार कर ली।

व्यक्ति में जब ऐसी धर्म प्रज्ञा जागृत हो जाती है तो मिथ्यात्व मोह कर्म का बंध प्राय: रुकने जैसी स्थिति बन जाती है। 18 पाप स्थान बताए गए हैं। उनमें सबसे भारी पाप मिथ्यात्व का है। नासमझी बहुत बड़ा पाप है। लोग धर्म क्रिया करते हैं, किंतु धर्म को समझने का प्रयत्न नहीं करते। गतानुगतिक चलते रहते हैं, जबकि धर्म में स्वयं से शोध करके आगे बढ़ने की बात होती है। इसलिए धर्म को खोजें। क्या है धर्म?

आचार्य श्री हुक्मीचंद जी म.सा. की बात आपने सुनी है। उनकी धर्म श्रद्धा जगी और वे व्यापार से वैराग्य की ओर बढ़ गए। हमने कभी विचार किया कि रे जीव! तुमने कितने व्याख्यान सुन लिए, किंतु तुम्हारी आत्मा क्यों नहीं झंकृत हो पाई! इतने सारे व्याख्यान सुनने के बाद भी दिल का दरवाजा क्यों नहीं खुला! दिल में झनकार पैदा क्यों नहीं हो पाई! क्या इतने भारी कर्मा जीव हैं कि वैराग्य जागृत नहीं हो रहा है!

उर्वर भूमि से फसल प्राप्त होती है। हम अपनी भूमि को उर्वर बनाएंगे तो ही उसमें धर्म के बीज बोने में सार्थक हो पाएंगे। धर्माराधना के लिए, धर्म की फसल लेने के लिए पहले अपने आपको सरल बनाना होगा।

'सोही उज्जुयभूयस्स, धम्मो सुद्धस्स चिट्ठई।'

शुद्धि सरल हृदय से होती है। हृदय सरल होगा तो शुद्धि होगी। छल-कपट होगा, कठोरता होगी तो शुद्धि मुश्किल है। बिना शुद्धि के धर्म टिकना मुश्किल है। सरलता के लिए, ऋजुता के लिए तैयारी करनी होगी।

अभी आप सुन गए सुलभ बोधि के बोलों को। उसमें अरिहंत भगवान की स्तुति करने की बात बताई गई है। स्तुति करने से हृदय ऋजुभूत बनेगा। उसमें परिवर्तन होगा। जब तक ऋजुभूतता नहीं होगी, तब तक सच्चे मायने में स्तुति नहीं हो पाएगी। जैसे बीज बोने से पूर्व जमीन को अनुकूल बनाया जाता है, वैसे ही महापुरुषों की स्तुति से हृदय को कोमल बनाया जाता है। हृदय कोमल बनेगा, ऋजुभूत बनेगा, तो उसमें डाले गए धर्म के बीज फल देने वाले होंगे। जैसे जमीन में बीज डालने के बाद उसका पल्लवन होता है, वैसे ही परिवर्तन हमारे भीतर होना चाहिए। ध्यान रखना चाहिए कि हमारी मनोभूमि में जा रहे धर्म के बीज केवल स्टॉक होकर नहीं रह जाएं। उनमें अंकुरण हो। उनमें वैराग्य प्रस्फुटित हो। उनमें संवेग-निर्वेद की भावना जगे। संवेग की ताकत शीघ्रातिशीघ्र संसार से पार कराती है।

'संवेगेणं भंते! जीवे किं जणयइ?'

संवेग से जीव को क्या लाभ होता है?

संवेग से अनुत्तर धर्म श्रद्धा की प्राप्ति होती है। उससे जीव मुक्ति की दिशा में आगे बढ़कर उसका वरण करता है। उसकी भावना केवल भावना बनकर नहीं रह जाती। उसमें अंकुरण होने लगता है। धर्म पनपने लगता है। उस स्थिति में वह धन की ओर नहीं दौड़ता। धन से पेट भरा जा सकता है, किंतु उससे मन को तृप्ति नहीं हो सकती।

कल हमने गीत गाया- 'आ रहे हैं, आ रहे हैं शुभ पर्व पर्युषण आ रहे हैं' और आज गा रहे हैं, आ गए हैं, आ गए हैं, शुभ पर्व पर्युषण आ गए हैं।'

घर का कोई सदस्य काफी समय के बाद सफर करके आ रहा हो, धन कमा करके आ रहा हो तो घर के सभी लोग बहुत खुश होते हैं। जैसे अयोध्या में राम के लौटने पर वहाँ के लोग नाचने लगे। अयोध्या को खूब सजाया गया। राम का स्वागत किया गया। उस समय वहाँ के जन-जन में कितना हर्ष रहा होगा। पर्व पर्युषण एक साल के अंतराल पर आए हैं, आपके

मन में कितनी खुशी है? आपने क्या साज सजाया? क्या विचार किया?

अठाई महोत्सव के रूप में तैयारी की होगी, किंतु केवल अठाई महोत्सव से काम नहीं चलने वाला है। उसके साथ संवर की आराधना भी होनी चाहिए अर्थात् आस्रव कर्मों को रोकने का उपक्रम होना चाहिए। आठ दिनों तक व्यापार नहीं करना। आठ दिन क्रोध, मान, माया, लोभ नहीं करना। आठ दिनों तक विवाद की कोई बात नहीं चलाना। शांत भाव से, सरल भाव से धर्माराधना करना। मैं कई बार बोलता हूँ कि तपस्या अहंकार को बढ़ाने के लिए नहीं हो, क्रोध को बढ़ाने के लिए नहीं हो। तपस्या, मन को शांत करने के लिए हो। तप से मन शांत नहीं हो, उसमें अहंकार पैदा हो तो समझना चाहिए कि तपस्या का रिएक्शन हो रहा है। उस तपस्या का परिणाम विपरीत दिशा में ले जा रहा है। अत: पर्युषण के माध्यम से कषाय उपशांत बनें। पर्युषण की बहार हमारे भीतर को आंदोलित करने वाली बने।

पर्युषण की आई रे बहार, नीमच नगरी में।
जागो-जागो करे मनुहार, नीमच नगरी में।।

पीछे बैठने वालों के मौन है क्या? पता नहीं बोल रहे या नहीं, मेरे कानों तक आवाज नहीं आ रही है। आगे की कुछ पंक्तियों में बैठने वाले बोले होंगे। दरी पर बैठने वालों की भी नींद खुली या नहीं? नींद खुलनी चाहिए।

आओ-आओ पर्व मनायें, त्याग-तप की झड़ी लगाएं
आलस दूर निवार, नीमच नगरी में...

बात समझ में आ गई ना?

न कोई कारण है, न कोई बहाना है। अन्तर्ज्योति सबको जगाना है।

गुरुदेव फरमाया करते थे कि घरवालों के ही सगरी न्योता नहीं है, पावणा सहित सगरी न्योता है। पावणा भी यदि घर में आए हों तो उनका भी न्योता है। जो जागेगा, वह पाएगा। जो सोएगा, वह खोएगा। हमने बहुत समय सोकर ही गँवा दिया। अब भी सोए रहे तो बाजी हाथ से निकल जाएगी।

'बहु बीती थोड़ी रही, थोड़ी भी अब जाय'

जिंदगी के बहुत से लम्हे निकल गए हैं। बहुत सा समय व्यतीत हो चुका है। कोई सोचे कि मैं अभी 10, 15, 20 वर्ष का ही हूँ तो जल्दी क्या है!

महत्त्व इसका नहीं है कि कौन कितने वर्ष का है। महत्त्व इस बात का है कि कौन कितने वर्ष तक जीएगा। इसका भरोसा नहीं है कि कौन कितने वर्ष तक जीएगा। इसका भरोसा है तो ठीक है, नहीं तो हर क्षण, हर पल जागृत होने की जरूरत है। अनादिकाल से संसार में भ्रमण कर रहे हैं। घूम रहे हैं। भटक रहे हैं।

किसके पीछे भटक रहे हैं?

माता के रज और पिता के वीर्य से बने शरीर पर अकड़ रहे हैं। शरीर की चमड़ी हटा दी जाए तो भीतर का दृश्य देखकर कोई भी मनुष्य शरीर पर गर्व नहीं करेगा। जब तक सिर पर अज्ञान नाचता है, मोह बोलता है, तब तक व्यक्ति घमंड करता है कि मेरा शरीर सुंदर है। आभूषण सुंदर है। मेरा बंगला श्रेष्ठ है, उत्तम है। मैं बी.एम.डब्ल्यू. में चलता हूँ। कौन-सी गाड़ी में चलता है?

(श्रोतागण बोले- बी.एम.डब्ल्यू.)

किसी भी गाड़ी में घूमें, कितना भी सुंदर शरीर हो, यदि धर्म की समझ नहीं है तो सारी सुंदरता बेकार है।

किसी ने सब्जी में मिर्च-मसाला, हल्दी, धनिया सब डाले, किंतु नमक डालना भूल गया। बिना नमक के सब्जी का स्वाद कैसा रहेगा? हलवा बनाते समय काजू-बदाम, पिस्ता डाला, किंतु शक्कर डालना भूल गया तो हलवा कितना ग्राह्य होगा? कितना स्वादिष्ट होगा? जैसे नमक और शक्कर पदार्थों में रस पैदा करने वाले होते हैं, वैसे ही धर्म, जीवन में रस पैदा करता है।

आपने गौतम कुमार व अन्य राजकुमारों का वर्णन सुना है। अंतगड सूत्र के माध्यम से 18 राजकुमारों का परिचय सामने आ चुका है। अरिष्टनेमि भगवान की देशना सुनकर उनका मन जागृत हो गया। उन सबने बहुत विषय भोगे होंगे, संसार में बहुत आनंद लिया होगा, किंतु हृदय में धर्म श्रद्धा पैदा होने के बाद धर्म, प्राण बन गया। जीवन बन गया। फिर उन्होंने सारी सुख-सुविधाओं को ठोकर मार दी।

'जे य कंते पिए भोए, लद्धे विप्पिट्ठि कुव्वई।'

उन्हें सभी सुख-सुविधा प्राप्त थी। भोग के लिए इंद्रियाँ समर्थ थीं। कोई बीमारी नहीं थी कि भोग भोगने में अंतराय आ रही हो। सारी परिस्थिति अनुकूल होते हुए भी उन्होंने समझा कि भोग, रोग की जड़ है। भोगों ने हमको

अनादिकाल से संसार में भ्रमण कराया है। यही ज्ञान गौतम कुमार आदि के मन में जगा और उन्होंने सारे भोगों को पछाड़ दिया। सबको पीठ दे दी। निर्णय कर लिया कि नहीं चाहिए हमें संसार का सुख। हमें चाहिए एकमात्र मुक्ति का सुख।

संसार के सुख कभी तृप्ति देने वाले नहीं हैं और न ही कोई जीव उनसे तृप्त हुआ है। यदि कहीं से तृप्ति मिलती है तो धर्माराधना से मिलती है। धर्माराधना तृप्त कराने वाली होती है। जिसे इसका अनुभव करना है वह धर्म श्रद्धा पैदा करे। ऐसा करने पर मालूम हो जाएगा कि मन कितना तृप्त हो गया। उसमें अभाव की अनुभूति होगी ही नहीं। जो है वह पर्याप्त है। जो मिला वह कम नहीं है। करोड़ों-अरबों रुपए खर्च करके भी कोई अपने मन के अनुकूल संतान पैदा कर पाएगा क्या?

करोड़ों-अरबों रुपए खर्च कर लेने पर भी मनचाही संतान नहीं प्राप्त कर सकते, किंतु धर्माराधना से दिव्य रूप को प्राप्त कर सकते हैं। दिव्य सौंदर्य प्राप्त हो सकता है।

कार्तिक सेठ ने दीक्षा ली। काल धर्म के समय संलेखना स्वीकार कर शरीर का त्याग किया। सुधर्म, देवलोक में शक्रेन्द्र के रूप में उत्पन्न हुए। भगवान महावीर को गोद में ले जाकर मेरु पर्वत पर ले जाने का सौभाग्य उसी इंद्र को प्राप्त हुआ। भगवान महावीर की दीक्षा की प्रभावना करने का सौभाग्य भी उसी इंद्र को मिला। भगवान महावीर से निवेदन करने का सौभाग्य उसी इंद्र को मिला कि भगवन्! मैं आपकी सेवा में रहना चाहता हूँ। अनाड़ी लोग, अज्ञानी लोग जो आपके माहात्म्य को नहीं समझ रहे हैं, वे आपको उपसर्ग दे रहे हैं, तकलीफ दे रहे हैं, आपकी साधना में बाधा पहुँचा रहे हैं, अत: आप मुझे स्वीकृति दीजिए कि मैं आपकी सेवा में रहकर उन अज्ञानियों का परिहार करते हुए उनसे आपकी साधना की रक्षा कर सकूँ। मैं आपकी अनुमति चाहता हूँ।

भगवान महावीर कहते हैं, हे इंद्र! तुम भक्ति के नाते यह बात कर रहे हो किंतु अब तक जितने भी तीर्थंकर हुए हैं वे सभी अपने बल पर ही पुरुषार्थ किए हैं। भविष्य में भी जितने होंगे, वे अपने सहारे पुरुषार्थ करेंगे, दूसरों के सहारे नहीं। इसलिए मैं अपने पुरुषार्थ से ही साधना संपन्न करना चाहता हूँ।

आपको संवर करना हो तो आप बोलेंगे, बावजी! अकेले कैसे करूँ? संवर के लिए तो कह देते हैं कि अकेले कैसे करूँ, मरने के लिए किसको याद करेंगे? मरते वक्त किसको याद करेंगे? मौत की घड़ी आएगी, तब कोई दोस्त साथ आएगा क्या? उस समय बोलेंगे कि रुको, मेरा दोस्त साथ चलेगा तो ही मैं चलूँगा?

तू भूल के अपने आप रहा कर पाप, ओ चेतन प्यारा,
दुनिया में कौन तुम्हारा...
जब मौत शीश पर आएगी, कोई चीज साथ ना जाएगी,
माँ भाई बाप ना देगा कोई सहारा, दुनिया में कौन तुम्हारा...

कौन है अपना? माता-पिता, भाई-बहन, कौन है अपना? यदि विश्वास करना हो तो अनाथी मुनि से संपर्क कर जान लीजिए कि भगवन्! आपकी पीड़ा के समय माता-पिता, भाई-बहन कितने काम आए? पत्नी सीने पर सिर रखकर रो रही थी, निरंतर झूर रही थी, आँसू बह रहे थे, किंतु किसी का वश नहीं चला।

किसी सिंह के जबड़े में मृग का बच्चा हो, हरिणी सामने देख रही हो, पर क्या वह बच्चे को बचा पाएगी? बहुत मुश्किल है बचा पाना। कदाचित हरिणी में ऐसा पॉवर आ जाए कि वह अपने बच्चे को सिंह के मुँह से बचा ले, किंतु मौत के मुँह में गए प्राणी को बचाने का सामर्थ्य किसी में नहीं है।

हमें भी एक दिन कहाँ जाना है? कौन-से रास्ते जाना है? मौत हमें भी आएगी। यह नहीं पता कि कब आएगी किंतु एक दिन आएगी जरूर।

आएगी या नहीं आएगी? बोलो आएगी या नहीं आएगी?

(श्रोतागण बोले- आएगी)

मौत से बचने का कोई उपाय नहीं है। धर्माराधना करेंगे तो प्रेम से उसका वरण कर सकेंगे। दिल से वरण कर पाएंगे। दूसरा कोई उपाय नहीं है। धर्मी मौत से कहता है कि आओ! मैं तुम्हारा आलिंगन करने को तैयार हूँ। तुम्हें स्वीकार करने की पूरी तैयारी है।

गौतम अणगार साधु बने। एक महीने की संलेखना की अर्थात् मृत्यु की तैयारी की। मृत्यु से कहा कि आ जाओ... हालांकि संलेखना में न

इहलोक की कामना होती है न परलोक की। न जीवन की कामना होती है, न मरने की। एकमात्र समभाव में रमण की भावना होती है। समभाव में रमण करने वाले को मौत कोई तकलीफ नहीं देती। कोई कठिनाई पैदा नहीं करती। क्योंकि व्यक्ति शरीर से नाता तोड़ चुका होता है। वह मानता है कि शरीर मेरा नहीं है।

जब तक शरीर से लगाव रहेगा, तब तक मौत परेशान करेगी, किंतु शरीर से नाता तोड़ लेने के बाद मौत शरीर को ले जाएगी। वह आत्मा को कष्ट देने में समर्थ नहीं हो पाएगी। शरीर को मौत ले जा सकती है, किंतु आत्मा को ले जाने का सामर्थ्य उसमें नहीं है।

सुनंदा का चारित्र भी हम सुन रहे हैं।

सुंदर हो संस्कार, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...
गलत नहीं है सोच मेरी, बजती मन में इगो भेरी,
अकड़े फिर मिजाज, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...

इगो बहुत खतरनाक होता है। '**आप डूबे पांडियो...**' इगो करनेवाला डूब जाता है। बहुत कठिन है कि इगो करनेवाला तिर जाए। संभव नहीं है कि इगो रहते हुए किसी का कल्याण हो जाए।

विजय के मन में क्या था, मैं नहीं कह सकता। धन का घमंड हो तो भी पता नहीं और भी कोई बात हो तो पता नहीं, किंतु उसका इगो आसमान छू रहा था कि मेरी सोच गलत नहीं है। मैंने जो सोचा है वह सही है। विजय ने सोचा था कि सुरेश को घर में क्यों फालतू रहने देना। उसका स्थान अनाथालय ही होना चाहिए। सुनंदा मान नहीं रही थी। बहुत विचित्र खेल है। विजय का इगो कहता था कि नहीं रखना, किंतु सुनंदा मान ही नहीं रही थी। विजय उपाय सोचता है सुनंदा को समझाने का। वह तिकड़म लगाता है।

इतने में टेलीफोन मिला। आज की भाषा में उसको चाहे मोबाइल फोन मिला हो या अन्य कोई साधन। टेलिग्राम आया कि सुनंदा की माँ बहुत सीरियस है। उनकी तबीयत खराब है, सुनंदा शीघ्र पहुँचे। यह समाचार मिलते ही विजय की बाँछें खिल गईं। उसने मन में कल्पना की कि अब मेरी योजना पूरी हो जाएगी। विजय खुश होने लगा कि बहुत सुंदर अवसर मिला है। सुनंदा को पीहर भेज दूँगा और पीछे से सुरेश को अनाथालय भेज दूँगा।

विजय सुनंदा के पास पहुँचकर कहता है, सुनंदा! बहुत बुरी खबर है?

सुनंदा ने पूछा, नाथ! क्या बुरी खबर है?

विजय ने कहा, तुम्हारी माँ बहुत सीरियस हैं। तुम्हें जल्दी-से-जल्दी बुलाया है। तुम जल्दी पहुँच जाओ।

सुनंदा पीहर जाने की तैयारी करती है। वह साथ में सुरेश को ले जाने की तैयारी भी करती है। विजय कहता है ऐसा क्यों कर रही हो। क्यों फालतू का टाइम लगा रही हो। इसको साथ ले जाने की क्या आवश्यकता है। सुनंदा ने कहा, नाथ! इसको यहाँ छोड़कर जाने का मेरा मन नहीं हो रहा है। जैसा भी होगा, यह मेरे साथ रहेगा, मेरे साथ चलेगा। विजय को बहुत गुस्सा आया। उसका मन करने लगा कि लातों से सुनंदा की मरम्मत कर दूँ, फिर भी अपने आप पर नियंत्रण किया। सुनंदा ने कहा इसको यहाँ छोड़ने के लिए मेरी अन्तरात्मा स्वीकृति नहीं दे रही है। मैं इसको यहाँ नहीं छोड़ सकती। सुनंदा पीहर पहुँची, किंतु उसकी माँ नहीं रह पाई।

पीहर पहुँची मिली ना माता, माता ही तो जग में त्राता,
बेहद होता दु:ख, भविकजन, सुंदर हो संस्कार...

जग में यदि कोई विश्राम स्थान है तो वह है माँ की गोद। माता-पिता मौजूद रहते हैं तो व्यक्ति उनके महत्त्व को नहीं समझता। उनकी अवमानना करता है, किंतु उनकी छाया हटते ही लगता है कि अरे! यह क्या हो गया! बंधुओ! सिर पर बड़ों की छाया वस्तुत: तृप्ति दिलाने वाली होती है।

सुनंदा विचार करने लगी कि माँ नहीं रही। उसकी छाया मेरे सिर से हट गई। सासु जी की छाया भी मेरे सिर से जल्दी हट गई थी। मुझे उनकी सेवा करने का मौका भी ज्यादा नहीं मिल पाया और अब माँ भी मुझे छोड़ गई।

ऐसे समय में कई लोग रोना-धोना करते हैं किंतु सुनंदा नहीं रोई। रोने की जगह वह संसार की दशा पर विचार कर रही थी।

अब आगे क्या होता है, उसका क्या लक्ष्य बनता है, सुनंदा कैसे वापस ससुराल जाती है और विजय आगे क्या खेल-खेलता है, यह समय के साथ ज्ञात कर पाएंगे। इतना अवश्य है कि हमें मनुष्य जीवन का अवसर मिला है, पाँचों इंद्रियों का सुखद संयोग मिला है, जिनेश्वर देवों का धर्म मिला है,

आराधना करने के लिए पर्व पर्युषण जैसा महान अवसर मिला है, ऐसे समय में भी हमारा मन रीता रह गया, सूखा रह गया तो पता नहीं कब बहार आएगी। इसलिए एक बार फिर हम बोलेंगे–

पर्युषण की आई रे बहार, नीमच नगरी में,
जागो-जागो रे करे मनुहार, नीमच नगरी में।

नीमच नगरी में यह सुंदर अवसर आया है। इस सुंदर अवसर पर अपने मन को पर्युषण की बहार में बहाने वाले बनें। इस समय का लाभ लिया तो धन्य-धन्य हो जाएंगे अन्यथा पर्युषण तो पहले भी कई बार आए और चले गए। यह पर्युषण भी चला जाएगा।

पर्व पर्युषण आया जाण, करो थे पारणा रे,
आनंद मंगल मोद मनाय, करो निज चावणा रे।

बात समझ में आ रही है ना? आपके मन में द्वंद्व पैदा हो गया होगा कि एक तरफ अठाई महोत्सव की बात की जा रही है और दूसरी तरफ पारणे की बात। आप विचार में पड़ गए कि क्या करें, पारणा करें या तपस्या! यदि पारणे की बात कही जा रही है तो जरूर कोई-न-कोई राज है। हर साज के पीछे कोई-न-कोई राज होता है। पारणा करें मिथ्यात्व का। अव्रत का पारणा करें। व्रत-नियम स्वीकार करें। व्यक्ति एक व्रतधारी भी हो जाता है तो उसकी रक्षा हो जाती है। जो व्रत को स्वीकार नहीं करता है उसकी दशा के बारे में मैं क्या बोलूँ। गली के कुत्ते के समान उसकी दशा हो सकती है।

नगर पालिका में कई बार ऐसे प्रसंग आ जाते हैं कि गली के कुत्तों से बीमारी फैलने की आशंका होने पर उन्हें इकट्ठा करके जंगल में छोड़ दिया जाता है। पालतू कुत्तों को नगर पालिका वाले नहीं ले जाते। पालतू कुत्तों के गले में पट्टा लगा होता है। वैसे ही व्रत-नियम का पट्टा हमारे गले में लग जाएगा तो हमारी रक्षा सुनिश्चित होगी। हमारी दुर्गति नहीं होगी।

एक व्रत हो या बारह व्रत, उनकी सही आराधना करने से देवगति निश्चित है। इसलिए अव्रत का पारणा करें, कषाय त्याग का पारणा करें, परमार्थ की आराधना करें। इसी दृष्टि से कहा जा रहा है–

पर्व पर्युषण आया जाण, करो थे पारणा रे,

आनंद मंगल मोद मनाय, करो निज चावणा रे।
पर्युषण सबने कहे पुकार, ले लो लावो मनड़ो मार,
उभो नहीं रेऊँ सरदार, चेतो चतुर सभी नर-नार, भाव शुद्ध भावना रे।।

बात समझ में आई क्या?

पर्युषण उभो करे पुकार, ले लो लावो मनड़ो मार
उभो नहीं रेऊँ सरदार।

पर्युषण कहता है कि मैं खड़ा रहने वाला नहीं हूँ। पर्युषण लगने के साथ-साथ लगभग चार घंटे का समय निकल गया। यह दिन भी निकल जाएगा। क्षण-क्षण निकल रहा है। हमारी जिंदगी के बहुत सारे क्षण निकल गए। पर्युषण के क्षण भी निकल रहे हैं। भगवान महावीर कहते हैं, '**खणं जाणाहि पंडिए**' अर्थात् जो क्षण को जान लेता है, अवसर की पहचान कर लेता है, अवसर को साध लेता है, वही पंडित पुरुष है।

हमारा पांडित्य प्रखर बने, हमारी पंडिताई जगे। ये पर्व पर्युषण खड़े रहने वाले नहीं हैं। ये बार-बार कह रहे हैं-

'चेतो चतुर सभी नर-नार, भाव शुद्ध भावना रे।'
'बीती ताहि बिसारि दे, आगे की सुधि लेहु।'

जो हो गया उसको ठीक करना मुश्किल है। उसको डिलीट करने में ही सार है। इस क्षण का लाभ लेते हुए किसी के साथ हुए राग-द्वेष को, मनमुटाव को डिलीट करना चाहिए। डिलीट करने से हृदय सरल होगा, पवित्र होगा। फिर उसमें धर्म के बीज डालेंगे तो वे पनपेंगे और उसके फल आनंद देने वाले बनेंगे। यदि तैयारी नहीं की, ये क्षण निकल गए तो रोते ही रह जाएंगे। हाथ मलते रह जाएंगे।

समय बार-बार हाथ में आने वाला नहीं है। इसलिए अपने जीवन को सरल बनाने की कोशिश करें। धर्म के उपदेश सुनने का लक्ष्य बनाएं। ऐसा करेंगे तो पर्व पर्युषण की आराधना कर पाएंगे और ये पर्व पर्युषण धन्य-धन्यकारी बनेंगे। इतना ही कहते हुए विराम।

14 अगस्त, 2023

9

करो कुछ आत्महित चिंतन

धर्म जिनेश्वर गाऊँ रंगशुं, भंग म पड़शो हो प्रीत जिनेश्वर,
बीजो मन मंदिर आणुं नाही, ए अम कुलवट रीत जिनेश्वर।

धर्मनाथ भगवान की स्तुति करते हुए एक भावना व्यक्त हुई– 'गाऊँ रंगशुं' यानी तन्मय होकर गाऊँ। लीन होकर गाऊँ। इस भावना के साथ एक भय भी है कि बनी हुई तन्मयता विखंडित न हो जाए। इसी संदर्भ में आगे कहा गया कि 'भंग म पड़शो हो प्रीत जिनेश्वर' अर्थात् हे प्रभो! जो प्रीत जगी है वह भंग न हो जाए। प्रीत शब्द आकर्षक है। सच्ची प्रीत आगे बढ़ाती है। प्रीत को नहीं समझनेवाले भ्रम में पड़ जाते हैं। वे वासना को ही प्रेम मान बैठते हैं, पर प्रीत की सच्चाई जाननेवाले अग्रसर हो जाते हैं।

पर्व पर्युषण आए हैं। पर्व पर्युषण से जिसकी सच्ची प्रीत होगी वह आगे बढ़ जाएगा।

पर्व पर्युषण है बंदे, करो कुछ आत्महित चिंतन,
किया क्या आज तक तुमने, करो इसका गहन चिंतन।

अब तक जो भी चिंतन किया है, शरीर के लिए किया है, परिवार के लिए किया है, परिजनों के लिए किया है। बहुतों के लिए कुछ विचार किए होंगे। स्वार्थ के वशीभूत होकर कई विचार और चिंतन चले होंगे। दूसरों के लिए आपने बहुत चिंतन किया होगा, किंतु आत्महितार्थ चिंतन हुआ या नहीं! आत्महित चिंतन महत्त्वपूर्ण है। अत: गीत में कहा गया है, करो कुछ आत्महित चिंतन। 'आत्महित चिंतन' अर्थात् तुम यह देखो कि तुमने आत्महित के लिए, आत्मा के हित में क्या विचार किया। क्या चिंतन किया। एक–दो दिन की बात नहीं है। जितने वर्ष निकले उनमें यह आँकड़ा लगाना कि आत्महित चिंतन में

कितना समय निकला। जो समय निकल गया, जो दिन-रात बीत गए, वे वापस आने वाले नहीं हैं।

'किया सो काम, भजा सो नाम'

जो नाम आपने ले लिए हैं, जो भजन आपने कर लिए हैं वे आपके हैं। वह थाती आपकी है। वह पूँजी आपकी है। वह आपका अपना निजी है। आत्महित में किया गया कार्य, आत्महित में किया गया चिंतन ही सच्चा कार्य होगा। दुनिया में बहुत सारे लोगों ने बहुत कार्य किए, किंतु खाली हाथ चले गए। दुनिया कुछ दिन तक उनको याद कर लेती है, किंतु बाद में कोई किसी को याद नहीं करता।

इसलिए पर्व पर्युषण के अवसर पर यह चिंतन करने की आवश्यकता है कि मैंने आत्महित चिंतन कितना किया! काम-क्रोध के वशीभूत होकर, पाप में जिंदगी को कितना लगाया! समीक्षा करनी है कि स्वार्थ के वशीभूत होकर, लोभ-लालच के वशीभूत होकर क्या-क्या दुष्कृत्य किए! इस प्रकार का आत्महित चिंतन महत्त्वपूर्ण होगा। एक ही दिशा में गति होगी तो सुधार करते जाएंगे।

हमने प्रतिक्रमण बहुत बार किया, किंतु किया नहीं है। जैसे पटरी पर से रेल निकल जाती है, वैसे ही हमारे शब्द कंठ से तालू से निकलते हुए चले गए। वे गहराइयों में नहीं उतरे। प्रतिक्रमण की भावना गहरी उतरी नहीं और अपना सुधार हो नहीं पाया। प्रतिक्रमण करने के लिए प्रतिक्रमण कर लेते हैं, यह नहीं देखते कि उससे दिल भीगा या नहीं! दिल मगसेलिया पत्थर के जैसा तो नहीं है!

मगसेलिया पत्थर पर पानी की बूँद नहीं टिकती। खूब बारिश होने के बावजूद उस पत्थर के भीतर पानी नहीं जाता। वह कोरा का कोरा रह जाता है। उसके जैसी दशा हमारी नहीं होनी चाहिए। दिल भीगना चाहिए। प्रतिक्रमण का एसेंस, उसका सार हमारे भीतर उतरना चाहिए। उसका सार भीतर उतरेगा, तभी प्रतिक्रमण सफल हो पायेगा। सार्थक हो पायेगा।

अंतगड सूत्र के माध्यम से आपने आज एक बड़ा ही मार्मिक वृत्तांत सुना। आपने सुना कि देवकी महारानी के वहाँ मुनिराज पधारे। तीन बार पधारे।

उसने तीनों सिंघाड़ों को थाल भरकर केसरी मोदक (लड्डू) बहराए। एक-दो पीस नहीं, पूरा थाल भरकर बहरा दिया। देवकी महारानी सोच रही है, '**धन घड़ी, धन भाग।**' वह सोच रही है कि ऐसा अवसर कहाँ आता है। इस संदर्भ में मैं एक प्रश्न कर लेता हूँ कि तीन थाल मोदक बहराने के बाद मोदक बचे या खत्म हो गए?

(श्रोतागण बोले- बचे)

विपुल धन होगा किसी के पास किंतु उसे विपुल दान देने का लाभ मिला या नहीं! विपुल दान देने का अवसर तब मिलेगा जब घर में प्रचुर खाना बना होगा। इसका मतलब यह मत समझ लेना कि म.सा. के लिए बना-बनाकर रखना। बड़ा परिवार होता है, तो घर में अधिक मात्रा में सामग्री बनती है। महान पुण्यवानी का योग होता है तो बड़े परिवार में रहने का मौका मिलता है। कहने को कह दिया जाता है कि 'छोटा परिवार, सुखी परिवार' किंतु उससे बढ़कर दुखी परिवार कोई नहीं होगा। बड़े परिवार में एक-दूसरे का हाथ बँटाया जाता है। कोई दिक्कत नहीं आती। एक-दूसरे के वचनों को सुनने से सहने की क्षमता बढ़ती है। सहन करने का सामर्थ्य बढ़ जाता है। छोटे परिवार में वैसी स्थिति नहीं बन पाती, जिससे सहने की क्षमता का विकास नहीं हो पाता। उन्हें यदि कोई कहे तो चार बातें सुनाने की हो जाती हैं क्योंकि गढ़े नहीं गए। गढ़ाई नहीं हुई।

एकांत में बैठकर साधना करना आसान हो सकता है, किंतु समुदाय के बीच में रहकर अपने आपको साधना बहुत बड़ी साधना है। समुदाय में दस तरफ से दस बातें आएंगी, उस समय धैर्य रखना, समाधि रखना, शांति रखना बहुत कठिन होता है। समुदाय में रहते हुए एकाकी रहने की कला आ जाए तो वह बड़ी महत्त्वपूर्ण कला होगी।

जिसने भगवान महावीर का जीवन पढ़ा होगा, उसे मालूम होगा कि भगवान की स्थिति घर में रहते हुए भी नहीं रहने जैसी थी। किसी को कुछ बोलते नहीं, कुछ कहते नहीं, कोई निर्देश नहीं देते। शांत भाव से सुनते रहते। अपने आपको साधते रहे।

साधु बनने का मतलब यह नहीं है कि कर्तव्य से भाग जाएं, कर्तव्य से

विमुख हो जाएं। साधु बनना कर्तव्य की विमुखता नहीं है, आत्महित चिंतन है। लोग संसार के मोह-माया की उलझनों में ज्यादा उलझते हैं। सुलझने के लिए ऐसा वातावरण चाहिए जिसमें साधना सही हो सके।

जब पौधा लगाया जाता है तो गाय-भैंस या पशुओं से बचाने के लिए उसके चारों तरफ बाड़ लगाई जाती है। इसी प्रकार साधना के लिए मर्यादा का घेरा होता है। दीक्षा न ले सकें तो उपाश्रय में रहते हुए भी आनंद श्रावक जैसी साधना कर सकते हैं। आनंद श्रावक एकाभवतारी बन गया। घर में रहकर जीना है तो आनंद श्रावक की तरह जीएं। कामदेव श्रावक की तरह जीएं। साधु बनकर जीना है तो धन्ना-शालिभद्र की तरह अप्रमत्त भाव में जीएं। कठिनाइयाँ आएंगी। कठिनाइयों से डरना धर्म नहीं है। उनका मुकाबला करते हुए अपने मार्ग को तय करते चलते जाना धर्म है। पुरुषार्थ होगा, मनोबल सुदृढ़ होगा तो कठिनाइयाँ क्षीण हो जाएंगी, दूर हो जाएंगी और रास्ता मिल जाएगा। बस रास्ता निकालने की कला होनी चाहिए। वह कला होगी दृढ़ मनोबल से।

व्यक्ति को चाहिए कि वह हर कठिनाई में आगे बढ़ता रहे। यह विचार जिसके भीतर होता है, उसको कहीं पर भी कठिनाई खड़ी नजर नहीं आएगी। कठिनाई को किनारे होना पड़ेगा। पर्व पर्युषण इसकी प्रेरणा देता है।

पर्व पर्युषण है बंदे, करो कुछ आत्महित चिंतन,
किया क्या आज तक तुमने, करो उसका गहन चिंतन।
मनुज तन की सफलता का, किया तुमने जतन कितना,
कर्ज सिर से हटाया या बढ़ाया और उसे कितना।। पर्व पर्युषण...

मनुज तन की सफलता का क्या उपाय सोचा?

'**पुनरपि जननं, पुनरपि मरणम्**' यानी पुनः-पुनः जन्म-मरण के चक्कर में चलते रहेंगे। जन्म लेते रहेंगे और मरते रहेंगे। उसी में डुबकियाँ लगाते रहेंगे या फिर मनुज तन को सार्थक करेंगे? मनुष्य जन्म महान है। यह मोक्ष की नींव है। चार दुर्लभ अंगों में से मनुष्य तन को प्रथम दुर्लभ अंग बताया गया है। एक सोपान हमने प्राप्त कर लिया है। आगे के सोपान छोड़ेंगे तो मनुष्य तन की सफलता सार्थक नहीं हो पाएगी। मनुष्य तन को सार्थक करने के लिए मोह-ममत्व भाव को किनारे करने की कोशिश करनी चाहिए। जितना मोह बढ़ेगा

उतना ही दुखी होते जाएंगे।

श्रावकों के लिए भगवान महावीर ने महीने में छह पौषध करने की बात बताई है। महीने में छह पौषध करने का मतलब है, परिवार से छह दिन के लिए विमुक्ति। मोह से लोहा लेने का प्रसंग, मोह को निस्तेज करने का उपाय, मोह को क्षीण करने की कोशिश, यहाँ सभा में बैठने वालों में से महीने में छह पौषध करने वाले कितने लोग हैं, हाथ खड़े करेंगे।

अतुल जी पगारिया की माता जी ने हाथ खड़ा किया। मंदसौर के शिवजी चौधरी ने हाथ खड़ा किया। नागौर के ललवाणी जी, देवीलाल जी कोठारी प्राय: पौषध करते थे। उनका मन पौषध में लगा रहता था। दीक्षा लेना बहुत अच्छी बात है, किंतु चारित्र मोह का क्षयोपशम नहीं होने से यदि दीक्षा का अवसर नहीं बनता है तो संसार में रहते हुए भी मोह को कम किया जा सकता है। परिवार की तरफ जितना ध्यान जाएगा, उतना ही मोह बढ़ेगा। धर्म ध्यान की ओर जितना ध्यान लगाएंगे, उतना ही मोह घटेगा। इसलिए कहा गया है कि पर्व पर्युषण में तो चिंतन करो। बाकी समय में आपको अवकाश मिले या नहीं मिले, किंतु पर्व पर्युषण आए हैं इनमें चिंतन करें।

आज स्वतंत्रता दिवस भी है। वह भी हमें नई प्रेरणा देता है।

'आजादी का समय सुहाना, आओ गाएं गान,
जय-जय भारत देश महान'

मेरी जानकारी में भारत ही ऐसा देश है जिसको भारत माता कहा जाता है। और किसी देश के पीछे माता लगता है क्या? यदि आप लोगों की जानकारी में हो तो बताइए। नरेंद्र जी गांधी! और कोई ऐसा देश है क्या?

(नरेंद्र जी गांधी- और कोई ऐसा देश नहीं है, भारत ही एक है)

क्या महत्त्व है भारत को माता कहने का?

यहाँ पर भिन्न-भिन्न संस्कृतियों का जन्म हुआ, आगमन हुआ। जैसे माँ का आँचल सबको समेटकर रखता है, वैसे ही भारत माता ने आने वाले हर अतिथि का स्वागत किया। हमारी संस्कृति 'मातृ देवो भव, पितृ देवो भव और अतिथि देवो भव' की रही है। इस संस्कृति के कारण हमारे राष्ट्र, हमारे देश ने माता की उपमा को प्राप्त किया है। माता सहना जानती है, कहना नहीं।

अपनी-अपनी माताओं को देख लो और अपनी तरफ देख लो। हमारी कितनी बातों और लातों को माता ने सहा होगा। हमने कितनी लातें मारी होंगी फिर भी उसने हमें सहलाया। इसीलिए भारत महान है, इसकी महानता है। आज सुबह माइक पर गीत बज रहा था। कहाँ पर बजा यह पता नहीं है, किंतु कानों में शब्द सुनाई दे रहे थे-

जहाँ डाल-डाल पर सोने की चिड़िया करती है बसेरा,
वो भारत देश है मेरा, वो भारत देश है मेरा।

अब कहाँ मिलती है चिड़िया और कहाँ मिलती हैं डालें। आपके मोबाइल टॉवरों ने चिड़ियों का सत्यानाश कर दिया, किंतु हमें तो सुविधा चाहिए। राष्ट्रभक्ति के लिए बहुतों ने कुर्बानी दी। मंगल पांडे को गाय की चरबी लगे कारतूस दिए गए, जिनको मुँह से खोलना होता था। अंग्रेजों ने धर्म से भ्रष्ट करने की चाल चली। मंगल पांडे ने उसका विरोध किया और कहा कि मैं ऐसे कारतूस नहीं खोलूंगा। विरोध करने का मतलब, मार खाना। उन्होंने मरना मंजूर किया, किंतु धर्म को नहीं छोड़ा।

'तन जाए तो जाए, मेरा सत्य धर्म नहीं जाए।'

लोग आजादी के लिए डटे रहे। कुर्बान होने वाले बहुत लोग थे, किन-किन का नाम गिनाऊँ। आपकी सुविधा के लिए भी बहुत से प्राणियों ने कुर्बानी दी है। पहले गाँवों में चिड़िया चहकती थीं। साँझ-सबेरे का बोध कराती थीं। जागरण का संदेश देती थीं। घर लौट आने का पाठ पढ़ाती थीं। अब कौन पाठ पढ़ाए।

महान पुण्य का योग होता है तो व्यक्ति को ये सारी संरचना प्राप्त होती हैं। हम अपने स्वार्थ के लिए क्या-क्या कर रहे हैं। क्या-क्या हो रहा है। आप बोलोगे, म.सा.! मैंने मोबाइल नहीं चलाया तो क्या फर्क पड़ेगा! सभी ऐसे ही सोचेंगे तो क्या नहीं हो सकता। दृढ़ता होनी चाहिए। निष्ठा होनी चाहिए। हम आजाद हो गए, किंतु हमारे भाग्य में आजादी नहीं है। हमारा पुरुषार्थ अधूरा रह गया। केवल शरीर की आजादी प्राप्त कर ली, किंतु विचार आज भी पश्चिम के चल रहे हैं।

'बोल-बोल भारत का राजा, कांई थारे मन में रे कि म्हासूँ मुण्डे बोल'

भारत का राजा कौन है?

(श्रोतागण बोले- भारत का राजा, नरेंद्र मोदी है)

ना मुर्मू है, ना प्रधानमंनी नरेंद्र मोदी है। वोट आप लोगों ने दिए हैं। राजा आप लोगों ने बनाया है। भारत का राजा, भारत की जनता है। हमने क्या पाया, क्या खोया, इस पर कभी विचार किया? हमें आजादी इतनी सस्ती नहीं मिली है।

14 अगस्त सन् 1947 के समय को याद कीजिए। क्या कुहराम मचा था। हजारों लोग मारे गए, कत्ल कर दिए गए। विषमता की आग भड़क गई। जातीय ज्वाला भड़क गई। लोगों की आँखों में अंगारे बरसने लगे। यदि सामने अमुक मिल गया तो उसे मारो-काटो। हजारों लोग बेघर हो गए। आज आप सुखद अनुभूति कर रहे होंगे, किंतु वह सुखद अनुभूति नहीं है। हमें, अपने स्वार्थ के कारण सुखद अनुभूति हो रही है। यथार्थ के धरातल पर विचार करेंगे तो स्थिति स्पष्ट हो जाएगी। मैंने कुछ दिन पहले गीत बोला था।

सादो बन जा रे भारतीया, थारे घर की हो गई लूट।
घर की हो गई लूट भारतीया, घर-घर पड़ गई फूट।। सादो...

किसके घर में लूट हो गई और किस-किसका घर नहीं लुटा?

हमारी संस्कृति को लूटा-खसोटा गया। हमारा खाना-पहनावा क्या था और क्या हो गया। हमारा खाना बदल गया, पहनावा बदल गया। तारीख के पत्तों की तरह हमारी संस्कृति बदल गई। विकृत हो गई। पता नहीं और किस-किसमें विकार आ गया।

विकार किसने किया?

यदि हम सुधरे हुए होते तो हमें पाश्चात्य संस्कृति पसंद नहीं होती। हम उसे स्वीकार नहीं करते। हमारी संस्कृति आबाद रहती। हमारी संस्कृति इतनी कच्ची नहीं है। आज भी उसकी जड़ हरी-भरी है। आज भी जीवित है।

भगवान महावीर ने कहा कि 21 हजार वर्षों तक जीवित रहेगी। कितना भी आक्रमण हो जाए, कितना भी लूट लिया जाए, फिर भी वह आबाद रहेगी।

हमारे विचार आध्यात्मिक पुट लिए हुए होने चाहिए। जिस गीत की मैं बात कर रहा था उसमें मैंने एक बात और सुनी।

जहाँ सत्य-अहिंसा और धर्म का पग-पग लगता डेरा,
वो भारत देश है मेरा, वो भारत देश है मेरा।

जहाँ सत्य-अहिंसा का पग-पग डेरा लगता है, वह भारत है। क्या आज सत्य उतना ही सार्थक है? खोजने पर भी सत्य मिलेगा? अहिंसा मिलेगी?

आज धर्म को मजहबी चादर ओढ़ा दी गई है। मजहबी चादर की ओट में कुत्सित लड़ाइयाँ लड़ी जा रही हैं। कौन-सा धर्म किसी का गला काटना सिखाता है? इसलिए भारत के राजा (जनता/मतदाता) से पूछा जा रहा है कि तुम्हारे मन में क्या है? तुम्हारी मरजी क्या है?

बोल-बोल भारत का राजा, कांई थारे मन में रे कि मासूँ मुण्डे बोल,
कितना भार बढ़ा है मुझ पर...पश्चिम चाल क्यों चलता रे।
कत्लखानों की बाढ़ डुबोती मुझ अस्मिता रे।। म्हारे...

भारत माता अपने सपूतों से पूछ रही है कि मुझ पर कितना कर्ज बढ़ा है, तुम पश्चिम की ओर क्यों चल रहे हो। एक जमाने में कहा जाता था-

मेरे देश की धरती सोना उगले, उगले हीरे मोती,
मेरे देश की धरती, हो मेरे देश की धरती।

आज भी हमारी धरती रत्न-मोती उगल रही है। धरती ने आज भी धन देना बंद नहीं किया। हमारी भारत माता क्या नहीं दे रही है, किंतु हमने उसकी रक्षा के लिए क्या किया? जहाँ कभी दूध-दही की नदियाँ बहा करती थीं, वहाँ आज खून की नदियाँ बह रही हैं। आज लोगों को विदेशी मुद्रा चाहिए। बाइक चलाने के लिए पेट्रोल चाहिए। उसके बदले में भारत से क्या जा रहा है? भारत का पशुधन खत्म होता जा रहा है। एक जमाने में 28 प्रकार का गोधन था। गायों की 28 प्रजातियाँ भारत में हुआ करती थीं। मेरी जानकारी के अनुसार आज लगभग 14-15 जातियाँ-प्रजातियाँ रह गईं हैं। बाकी खत्म हो गईं।[1]

---

1. एक जानकारी के अनुसार- भारत 70 देशों में बीफ सप्लाई करता है।
- भारत में 28200 अवैध बूचड़खाने हैं।
- 1701 बूचड़खाने पंजीकृत हैं।
- भारत 11 लाख टन भैंस का मांस बेचता है।
- भारत 5 लाख टन गाय का मांस बेचता है।
- मांस निर्यात में भारत नंबर 2 पर है।

यह श्रेय किसको जाता है? किसको शाबाशी देनी चाहिए? किसको धन्यवाद ज्ञापित किया जाना चाहिए?

लोग बोलते हैं, 'तपस्या करने वाले धन्य हों, धन्य हों।' पेट्रोल-डीजल पर जीने वालों को बोलो। आगे बोलो तो।

'बोल-बोल भारत का राजा, कांई थारे मन में रे कि म्हासूँ मुण्डे बोल'

अब आप नहीं बोलेंगे। पेट्रोल और डीजल के पीछे हजारों पशुओं का कत्ल होता है, क्योंकि पेट्रोल-डीजल देने वाले देश कहते हैं कि हमें विदेशी करेंसी चाहिए। विदेशी करेंसी नहीं है तो मांस का निर्यात करने की बात कहते हैं। पेट्रोल-डीजल के बदले विदेशी लोग हमसे मांस का आयात करते हैं। उसके लिए गाय, भैंस, बछड़े कटते जा रहे हैं, किंतु हमें कोई फिक्र नहीं है। सुबह-सुबह उठते ही सभी को चाय-दूध चाहिए। चाय में भी दूध चाहिए। सुबह, दोपहर, शाम चाय-दूध चाहिए। दिन हो या रात हो, चाय-दूध पीए बिना काम नहीं चलता। किंतु गाय-भैंस की रक्षा करने के लिए हमारे पास कोई उपाय नहीं है।

28 में से 14 प्रजातियाँ खत्म हो गईं और बाकी की 14 पता नहीं किस हालत में हैं। उनकी रक्षा कौन करेगा? आप बोलेंगे, म.सा.! हम बहुत सी गोशाला में दान देते हैं, दान दिया है। हम समझ गए कि आपने दान दिया है, देते हैं, किंतु दिए गए दान की कोई खोज-खबर ली क्या? यह पता लगाया क्या कि उस दान का क्या उपयोग हो रहा है? उससे कितनी गायों की रक्षा हो रही है? कितने गोधन का विकास हो रहा है? यदि गायों की रक्षा नहीं होगी तो आप चाय-दूध कहाँ से पीओगे। यदि इनकी रक्षा नहीं की जाएगी तो यूरिया का दूध मिलेगा।

मैं जयपुर चातुर्मास में था तो लोगों ने बताया, म.सा.! दिल्ली में हर दस में से एक व्यक्ति यूरिया वाला दूध पीता है। एफएसएसएआई (फूड सेफ्टी एंड स्टैंडर्ड अथॉरिटी ऑफ इंडिया) भी दूध में यूरिया की मात्रा 700 पार्ट पर मिलियन (पीपीएम) तक होने पर मिलावट नहीं मानता, जबकि यूरिया जहर माना जाता है। यह हमारी संस्कृति पर हमला है। सोची-समझी चाल है। हम इनके पीछे की चाल नहीं समझ रहे हैं और उसी के पीछे चलते जा रहे हैं।

मैं देवकी महारानी की बात बता रहा था कि तीनों मुनियों के सिंघाड़ों को केशरी मोदक (लड्डू) बहराए। देवकी महारानी के मन में विचार पैदा हुआ कि क्या कारण है जो मुनि एक ही घर में भिक्षा के लिए आ रहे हैं। वह समझ नहीं पाई कि मुनि एक नहीं हैं, अलग-अलग हैं। लगभग एक समान वय-त्वचा होने से उसने सोचा कि एक ही मुनि का सिंघाड़ा बार-बार आ रहा है। इसलिए उसने मुनिराज से पूछा कि मुनिराज! क्या कारण है जो इतनी बड़ी देवनगरी द्वारिका में आपको भिक्षा के लिए एक ही घर में बार-बार आना पड़ रहा है।

मुनियों को समझने में देर नहीं लगी। एक मुनि ने उत्तर दिया- हम एक ही माता (नाग गाथापति की भार्या सुलसा) के 6 पुत्र हैं। हम तीन विभाग में गोचरी के लिए निकले थे। संयोग ही समझो कि तीनों सिंघाड़े तुम्हारे घर पहुँच गए।

देवकी महारानी को प्रश्न का उत्तर मिल गया। समाधान मिल गया। समाधान तो मिल गया किंतु एक नई समस्या पैदा हो गई। देवकी ने उस समस्या का समाधान भगवान अरिष्टनेमि से लेने का विचार बनाया।

अब आगे अरिष्टनेमि से वह क्या समाधान लेती है, वे क्या समाधान देते हैं यह तो आप अंतगडदशा सूत्र के माध्यम से जान पाएंगे।

बंधुओ! पर्व पर्युषण का लाखीणा मौका मिला है।

जीवन लाखीणो हो-हो जीवन लाखीणो, इने कौड्यां में मत खोवो,
इण में बीज धर्म रा बोवो, मोह माया री नींद न सोवो, जीवन लाखीणो।। हो हो...

एक जमाने में लाख रुपये बहुत महत्त्व रखते थे और लाखों रुपये देने पर भी जीवन मिलने वाला नहीं था, इसलिए कहा गया कि यह लाखीणा जीवन मिला है, इसको कौड़ियों के भाव मत गँवाओ। कौड़ियों के मोल जीवन बीत रहा है। क्षण-क्षण निकल रहे हैं।

लाखीणा जीवन का हमने क्या महत्त्व समझा? हमने जो सुना उसका क्या उपयोग किया? ढुलता-ढुलता, घी ढुल जाएगा। जो बचा है, उसे बचाने की ताकत है तो बचा लो, नहीं तो इसका महत्त्व खत्म हो जाएगा। मनुष्य जीवन की जो सार्थकता है उसे आज ही बचा सकते हैं। सफल बना सकते हैं।

सार्थक कर सकते हैं। जीवन को मोह-माया में मत छोड़ें। इस महत्त्वपूर्ण जीवन को सही तरीके से जीने का प्रयत्न करें। यदि ऐसा भाव मन में हो जाएगा तो पर्व पर्युषण महत्त्वपूर्ण बन जाएंगे। नहीं तो पर्व पर्युषण कई बार आए और चले गए। ये भी जा रहे हैं, चले जाएंगे।

कई बार पर्व पर्युषण मनाया, मिच्छा मि दुक्कडं बोला और 'जय राम जी री, जय राम जी री' करके चले गए। हमें भी जाना है। कैसे जाना? भगतसिंह की तरह जाना या किसकी तरह? जाना तो होगा, किंतु एक नई ऊर्जा लेकर चलेंगे तो मनुष्य जीवन की सार्थकता की दिशा में आगे बढ़ेंगे। उसी खुमारी में जीते रहेंगे तो यहाँ आना सार्थक होगा। ये पर्व पर्युषण संदेश दे रहे हैं-

पर्व पर्युषण है बंदे, करो कुछ आत्महित चिंतन,
किया क्या आज तक तुमने, करो इसका गहन चिंतन।

तपस्याएँ भी चल रही हैं। कई तपस्याएँ लम्बी चल रही हैं। सरिता जी मुणोत 45 के ऊपर निकल गईं। महासती श्री सुहर्षा श्री जी म.सा. की आज 23 की तपस्या है और महासती श्री बीजरुचि श्री जी म.सा. की 24 की तपस्या है। और भी कई भाई-बहनों में तपस्याएँ चल रही हैं। 25 के पार कई तपस्या चल रही है, तो कई 25 के अंदर। नीमच संघ ने बड़ी क्रांति की, अठाई महोत्सव के रूप में पर्व पर्युषण मनाकर। ऐसा बताया जा रहा है कि 140 से अधिक लोगों ने अठाई में नाम लिखवाए। बाहर वाले भी नमक किसका खा रहे हैं? इस नमक का क्या करेंगे?

'जिसकी खाए बाजरी, उसकी बजाए हाजरी।'

आप भी तपस्या कर सकें तो बहुत अच्छी बात। आठ दिन शांति से निकले। ऐसा प्रयत्न होना चाहिए कि मन की ऊहापोह शांत हो जाए। ऐसा लक्ष्य बनेगा तो अपने आपको धन्य बनाने में समर्थ बनेंगे।

15 अगस्त, 2023

10

जगे हमारा कर्तव्य बोध

धर्म जिनेश्वर गाऊँ रंगशुं, भंग म पड़शो हो प्रीत जिनेश्वर,
बीजो मन मंदिर आणुं नाहीं, ए अम कुलवट रीत जिनेश्वर।
धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।

ये चार पद यदि जीवन में आ जाए तो कल्याण निश्चित है। ये चार पद आ जाने के बाद कोई तनाव नहीं रहेगा, कोई समस्या नहीं रहेगी। सर्वत्र आनंद-ही-आनंद बरसेगा।

पर्व पर्युषण इसकी प्रेरणा देते हैं। इससे प्रेरित होंगे तो लाभ का कारण बनेगा। नहीं तो '**जिम आए, तिम जाए**' की स्थिति होगी यानी कि सूने घर में पावणा जाएगा तो क्या खाएगा। 'जिम आए, तिम जाए' यानी जैसे आए, वैसे जाओ। इससे विपरीत बसते घर का पावणा मीठा खाएगा। मीठा भोजन करेगा। जिस घर में लोग रहते हैं वहाँ यदि पावणा पहुँचे तो उसको मीठा भोजन मिलता है। सूने घर में कोई पावणा चला जाए, तो उसको कुछ नहीं मिलेगा।

जिस तरह सूने घर में पावणा को कुछ नहीं मिलता उसी तरह दिल सूना रहेगा तो पर्युषण पर्व आयेगा और चला जाएगा। लाभान्वित नहीं हो पाएंगे।

पर्व से लाभान्वित होने के लिए दिल में भावना होनी चाहिए। भावनाओं से भावित करने पर पर्व का लाभ मिलेगा। पर्व पर्युषण के दिनों में, उन उत्तम महापुरुषों के जीवन वृत्तांत को सुना जाता है जिन्होंने चरम समय में केवलज्ञान प्राप्त किया और मुक्ति को वर लिया। जो कृत-कृत्य हो गए, जिनका कल्याण हो गया, ऐसे उत्तम पुरुषों का जीवन वृत्तांत सुनकर भीतर की

कलियाँ खिल जानी चाहिए। कली-कली खिल जानी चाहिए। हृदय रोमांचित हो जाना चाहिए। अपने आपको धन्य माना जाना चाहिए कि ऐसी उत्तम वाणी सुनने को मिल रही है।

अंतगडदशा सूत्र के माध्यम से आज जो बातें उभरकर आई हैं, उन पर थोड़ा विचार कर लेते हैं।

देवकी महारानी भगवान अरिष्टनेमि के चरणों में पहुँचती है। वहाँ उसको समाधान मिलता है कि ये मुनि सुलसा के पुत्र नहीं, तुम्हारे हैं, तुम्हारी ही कुक्षि से जन्म लिया है।

देवकी महारानी यह सुनकर रोमांचित हो गई। उसका हृदय भर गया। वह उन मुनियों के दर्शन करने पहुँची। शास्त्र कहता है कि उसको इतना हर्षातिरेक था कि उसकी कंचुकी के धागे टूट गए। उसके स्तनों से दूध बहने लगा।

माँ का हर्ष माँ ही जान सकती है, दूसरे नहीं समझेंगे। माता का हृदय बड़ा कोमल होता है। उसमें वात्सल्य भरा होता है। उस वात्सल्य से संतान का विकास होता है। वात्सल्य नहीं मिलने पर संतान प्यासी रह जाती है। जैसा विकास चाहिए वैसा हो नहीं पाता। माता सिर्फ संतान को ही जन्म नहीं देती। संतान के साथ उसके भीतर माँ का भी जन्म होता है। उसीसे उसके भीतर वात्सल्य पैदा होता है। वात्सल्य से उसके स्तनों में दूध आ जाता है।

जब तक देवकी महारानी औरत बनी रही, तब तक उसके स्तनों में दूध नहीं आया। जैसे ही वह माता बनी उसके स्तनों से दूध की धार बहने लगी। माता बनना आसान नहीं है, बहुत कठिन है।

कभी मौका लगे तो आचार्य पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. सा. के प्रवचनों की पुस्तक, 'सुबाहु कुमार' पढ़ना। उसमें बताया गया है कि माता को गर्भ का रक्षण कैसे करना चाहिए। गर्भस्थ संतान की सुरक्षा का ध्यान कैसे रखना चाहिए।

गर्भवती का पूरा जीवन आने वाले शिशु के लिए समर्पित हो जाता है। उसकी अपनी कोई खुशी नहीं रह जाती। गर्भ में संतान के आते ही उसकी साधना चालू हो जाती है, उसकी जीवनचर्या का शिशु पर, गर्भस्थ संतान पर

बहुत इफेक्ट पड़ता है। आने वाली संतान की सुरक्षा, उसके जीवन के विकास की उस पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी होती है। एक माता ही अपनी संतान को वैसा बना सकती है, जैसा वह चाहती है। यदि माता, अंजना जैसी होगी तो हनुमान जैसा पुत्र जन्मेगा। यदि माता, सीता जैसी होगी तो लव-कुश जैसी संतान जन्मेगी, अन्यथा क्या जन्म लेगा और क्या होगा, कहना कठिन है।

मृगा लोढ़ा को भी जन्म देने वाली माता थी। वह केवल एक पुतला-सा था। उसकी आँख, मुँह और कान की जगह गड्ढे से थे। उसे बहुत भूख लगती थी। उसे भस्मक रोग था। भस्मक रोगी कितना भी खाता है उसे भूख लग जाती है। ऐसी संतान को जन्म देकर माता ने उसको फेंका नहीं, बल्कि उसका लालन-पालन किया। माता महारानी थी किंतु अपनी संतान को नौकरों के भरोसे नहीं छोड़ा। स्वयं उसकी देख-रेख करती थी। स्वयं खाना पहुँचाती। माता के हृदय के समान हर किसी का हृदय नहीं हो सकता।

अपने पुत्रों के बारे में सुनकर देवकी महारानी बड़ी खुश हुई। वह सोचने लगी कि मैं धन्य हो गई, ये मुनि बन गए, पर जैसे ही वह घर पहुँची तो उसका पूरा संसार बदल गया। उसके विचार बदल गए कि मैं कैसी अभागिन माँ हूँ, जिसने सात-सात पुत्रों को जन्म दिया पर एक संतान को भी न गोद में खिलाया, न लालन-पालन किया। केवल पाप का उपार्जन किया। माता का कर्तव्य होता है संतान को संस्कारित करना किंतु मैं कैसी निमूढ़ माता बनी जो अपनी संतानों को संस्कार देने से वंचित रह गई।

इम झुरे देवकी राणी, माता पुत्र बिना बिलखाणी रे,
मैं तो सात-सात नंदन जाया, पिण एक ना गोद खिलाया रे।। इम झुरे ...

जब तक देवकी राणी का झुरना नहीं हो जाए, तब तक पर्व पर्युषण में रस नहीं आता। पर्व पर्युषण सूने-सूने लगते हैं। आप देवकी का रुदन तो सुनना चाहते हैं, पर अपनी माता को मत रुलाना।

कृष्ण वासुदेव रुदन सुनने वालों में से नहीं थे। वे तीन खंड के अधिपति थे। वे माता की चरण-वंदना करने के लिए उपस्थित हुए। वे चरण वंदना के लिए उपस्थित होते ही रहते थे। उन्होंने माता को गहन विचारों में डूबा देखा। माता की स्थिति संज्ञा शून्य जैसी देखी। ऐसी स्थिति थी जैसे लाश पड़ी हो।

कृष्ण वासुदेव ने वंदन-नमस्कार किया, माता की स्थिति देखकर कंपायमान हो गए कि मेरी माता को क्या हो गया। वे आवाज देते हैं। दो-तीन बार आवाज दिए। थोड़ा झकझोरा तो माता सचेतन हुई। वे विचार करने लगे कि माता क्यों बेचैन हो गई! उसकी स्थिति संज्ञा शून्य जैसी क्यों हो गई?

'ले लो माँ का आशीर्वाद, फले शुभकामना रे...'

देवकी महारानी गहरी सोच में अपने को धिक्कार रही है। कहती है धिक्कार है तुझे देवकी। तुम क्या माता बनी हो। तुमने एक भी संतान को घर में पालने में नहीं झुलाया।

गुरुदेव फरमाया करते थे कि पालने में सोये हुए बालक को पालना झुलाते हुए माताएँ शिक्षा दिया करती थीं-

'बालो पाँखाँ बाहर आयो, माता बेन सुनावे यूं
म्हारी कोख सराहिजे रे बाला, म्हैं थने सखरी घूँटी दूं'

माताएं कहती थीं कि मेरी कुक्षि का गौरव बढ़ाना, उज्ज्वल करना। मैं तुझे सखरी घूँटी पिलाती हूँ, तू उसका सदुपयोग करना। दुरुपयोग मत करना। सदुपयोग करने से मेरी कुक्षि उज्ज्वल बनेगी। नहीं तो बदनाम होगी। झूला झुलाते हुए माताएं कहतीं कि तुम्हें जितनी बार पालने में झुलाऊँ, तुम अपनी वीरता से उतनी बार शत्रुओं को कँपाना। अर्थात् तुम्हारे भीतर ऐसी वीरता होनी चाहिए जिससे शत्रु थर-थर काँपने लगे। दूध पिलाते हुए माताएं कहतीं, बेटा! मैं तुझे धोला दूध पिला रही हूँ, इस पर कायरता का काला दाग नहीं लगना चाहिए।

हमें यह शिक्षा मिली या नहीं?

हमें यह शिक्षा मिली होती तो दूध को धोला बनाते। मैं यह नहीं कह रहा कि आपने कायरता की, किंतु जो हिम्मत होनी चाहिए, जो वीरता होनी चाहिए, उसके दर्शन नहीं हो पाते हैं। त्याग, नियम और व्रत के लिए वीरत्व जागृत होना चाहिए। त्याग, नियम और व्रत आत्मा को संबल देने वाले होते हैं। आत्मविश्वास बढ़ाने वाले होते हैं।

देवकी महारानी का झूरना कृष्ण वासुदेव से नहीं देखा गया। वे विचार करने लगे कि धिक्कार है मुझे। मैं कैसी संतान हूँ जो अपनी माता को सांत्वना

नहीं दे सकता। माता को संतोष नहीं दे सकता। मेरे रहते हुए मेरी माता की आँखों में आँसू आए, तो धिक्कार है मुझे।

वंदन करते कृष्ण मुरार, माता मन में आर्त अपार,
कैसा पुत्र तुझे धिक्कार, जननी करती आरत ध्यान।
पूरो मन कामना रे।। ले लो...

माता को दुखी देख कृष्ण वासुदेव अपने आप को धिक्कारते हैं कि मैं कैसी संतान हूँ, जो मेरे रहते हुए मेरी माँ की आँखों में आँसू आ रहे हैं। कृष्ण वासुदेव ने अपनी माता से कहा कि मैं रोज आशीर्वाद लेने आता हूँ तो पीठ पर हाथ फिराती, सिर पर हाथ को सूंघा करती थी, वात्सल्य प्रदान करती थी, किंतु आज तुमने ऐसा कुछ नहीं किया। मुझसे क्या अपराध हो गया? क्या गलती हो गई?

माता की तंद्रा टूटी और वह कहने लगी, बेटा! मैं बड़ी दुखियारी माता हूँ। मैं नहीं चाहती कि दुनिया में कोई माँ मेरे जैसी बने।

कृष्ण वासुदेव कहते हैं, माँ! तेरा अवसाद मेरे मन में विषाद पैदा कर रहा है। मुझे लग रहा है कि धिक्कार है मुझे। मेरा पुत्र होना व्यर्थ है।

आप इतनी सी बात समझ लें कि माता का क्या कर्तव्य होता है और पुत्र का क्या दायित्व होता है। इतना समझ में आ जाए तो घर के सारे लड़ाई-झगड़े समाप्त हो जाएं। जिस माता ने जन्म दिया, जिसने लालन-पालन किया, शिक्षा से सँवारा उसके कलेजे को भी नहीं ठार सके तो क्या होगा अपने जीवन का!

दूसरी तरफ यह सुनने में आता है कि जैनियों में एबॉर्शन के केस सबसे ज्यादा हैं। बात समझ में नहीं आती कि हकीकत है या भूल-भुलैया! मेरे खयाल से भूल-भुलैया होगा। लोग जनगणना में जैन लिखवाने के बजाय अपना सर नेम लिखवा देते हैं। यदि एबॉर्शन का काम पड़ता है तो नाम पकड़ में न आए शायद इसलिए जैन लिखा देते हों। ऐसा होने से आँकड़ों में फर्क पड़ जाता है। 2010 या 2012 में सर्वे हुआ था। उसमें बताया गया था कि जैनियों ने अक्षरी ज्ञान में बहुत उन्नति प्राप्त की। सर्वे में ही बताया कि वे शरीर में कमजोर हैं और एबॉर्शन में सबसे हाई नम्बर जैनियों ने प्राप्त किया। ऐसी स्थिति में ये पूंजनी, रजोहरण, मुँहपत्ती किस काम आएंगे?

धर्मनाथ भगवान की स्तुति करते हुए कहा गया है कि '**धर्म न जाने, हो मर्म जिनेश्वर।**' पर क्या हमने धर्म का मर्म जान लिया! शायद नहीं। हम अपने कर्तव्य का निर्वाह करने के लिए तैयार नहीं हैं। लोग कहते हैं कि ज्यादा संतान हो जाएगी तो उनका लालन-पालन कैसे करेंगे। यदि ज्यादा संतान की अपेक्षा नहीं थी तो संयम रखना चाहिए था। चौथे आस्रव का सेवन क्यों किया? ब्रह्मचर्य की आराधना होती तो सामने दुविधा नहीं खड़ी होती।

गर्भ में पल रही एक संतान पर जब गाज गिरने लगी तो उसकी आवाज निकली-

म्हाने अबके बचा ले म्हांरी माय, दूजो तो किणरो आसरो...
चार गति में मिनख जमारो, संता री आवाज,
कर विश्वास अठे मैं आयो, माथे पड़ी है म्हारे गाज।। दूजो...

क्या बोला जा रहा है?

बोला जा रहा है कि माँ, इस बार तू मुझे बचा ले। मैंने बड़ी भूल की है। मैंने संतों की बात पर विश्वास कर लिया कि चार गतियों में मिनख जमारो (मनुष्य जन्म) बहुत उत्तम है, श्रेष्ठ है, किंतु यहाँ आते ही मेरे माथे पर गाज गिर रही है। यदि पहले मालूम होता कि ऐसा होगा तो मैं यहाँ क्यों आता।

एक गधा कागज लेकर जा रहा था। जंगल के किसी दूसरे पशु ने उससे पूछा कि काका! कहाँ जा रहे हो? गधे ने कहा, मैं पंचायत के ऑफिस जा रहा हूँ। शरीर की शिथिलता को देखते हुए लगता है कि तबादला होने वाला है। अत: निवेदन करने जा रहा हूँ कि मुझे कहीं भी भेज देना, किंतु भूल करके भी मनुष्य योनि में मत भेजना। गधा भी इतनी बुद्धि रखता है। वह जान रहा है कि वहाँ क्या होता है।

यहाँ की स्थिति बड़ी विचित्र है। एबॉर्शन करते समय बच्चे की हालत देख लेंगे, उसके भीतर का प्रकंपन देख लेंगे तो हम हिल जाएंगे। एबॉर्शन करने के लिए एक क्षार-सिंचन पद्धति होती है। इस पद्धति में एक मोटे से इंजेक्शन में तरल पदार्थ भरकर गर्भ के भीतर डाला जाता है। उसमें नमक जैसा खारा पदार्थ होता है। पदार्थ अंदर जाते ही गर्भ में रहे भ्रूण के शरीर में जलन होने लगती है। वह अंदर ही इधर से उधर भागता है, किंतु कौन आए बचाने को!

'माँ ओ माँ मेरी, तू बोल करे क्यों देरी।'

बच्चा माँ-माँ बोलता है, किंतु सुने कौन। माँ के कान बंद रहते हैं। वह कहता है-

माँ ओ माँ मेरी, तू बोल करे क्यों देरी,
मौन तुम्हारा दिल धड़काता, रूह काँपती मेरी।।

मानो वह पुकारता है कि माँ! तुम्हारा मौन मेरा दिल धड़का रहा है। मुझमें प्रकंपन पैदा कर रहा है। माँ तू चुप क्यों है। तुम्हारी चुप्पी से मेरी रूह काँप रही है।

वह बेचारा भीतर तड़प रहा है, किंतु कौन सुने उसकी! जैसे सूने जंगल में कोई आवाज लगाए तो कोई सुनने वाला नहीं होता, वैसे ही वहाँ माता कानों में तेल डाल लेती है। कुछ नहीं सुनती।

तू ममतालु है माता, माँ कहते दिल भर जाता,
माता-पिता गुरु तीरथ है, आगम से भी स्वीकृत है।
मुझको तेरी कोख मिली, जिससे जीवन कली खिली,
इसे सजाओ और सँवारो, भर दो रंग सुनहरी।। माँ ओ माँ...

तू ममतालु है माँ। आहा! आहा! माँ कहते ही दिल गदगद हो जाता है। माँ कहते ही मुँह भर आता है, जैसे मुँह में मिठाई पड़ी हो। जैसे कोई अमृत की घूँट पिला रहा हो। माँ शब्द का उच्चारण होते ही मुँह मधुर हो जाता है। बड़ा रम्य लगता है और तुम क्या कर रही हो। मैंने सुना माता-पिता गुरु तीर्थ हैं, आगम से भी स्वीकृत है। यह सुन मैं तुम्हारी कुक्षि में आया हूँ।

ममता तेरी यदि मरती, रह पाएगी क्या धरती,
ममता में समता भारी, खिलती उससे फुलवारी।
ओज तुम्हीं से है पाया, दीप उसी से जल पाया,
सारे जहाँ में एक सुरक्षित, यही गोद है तेरी।। माँ ओ माँ...

गर्भ में पल रही संतान कहती है, माँ! तुम्हारी ममता यदि मर गई, तो यह धरती कहाँ टिकेगी, कहाँ बचेगी, धरती का आधार क्या होगा? बात समझ में आ रही है ना?

(श्रोतागण बोले- आ रही है)

कहाँ आ रही है? दिल में या दिमाग में?

(श्रोतागण बोले- दिल में)

आप बोल दोगे, म.सा. का काम है सुनाना। हम जानते हैं हमारी समस्या क्या होती है। क्या समस्या होती है?

आप जानते हैं कि समस्या पैदा होती है, किंतु यह समस्या पैदा की किसने? क्यों पैदा की समस्या? जब आप समस्या का समाधान ही नहीं ढूँढ सकते तो समस्या पैदा की क्यों? आपके अज्ञान का परिणाम दूसरों को क्यों भोगना पड़े?

दुनिया में एक ही गोद है जहाँ बालक स्वयं को पूर्ण सुरक्षित महसूस करता है। वह गोद है माँ की। माँ की गोद में उसे सुकून मिलता है। किसी रोते हुए बालक को उसके पिता भी उठाते हैं, भाई भी उठाता है फिर भी उसका रुदन बंद नहीं होता किंतु जैसे ही माँ अपनी छाती से लगाती है वह रोना बंद कर देता है।

माँ के हृदय में, उसके दिल में क्या भरा हुआ है जो रोता हुआ बालक सुख की अनुभूति कर लेता है? माँ के हृदय में होती है ममता। उसमें होता है वात्सल्य। उसकी ममता, उसका वात्सल्य घट गया तो सूनी गोद कुछ नहीं कर पाएगी। सूनी गोद में कितना ही बालक का सिर लगा दो कुछ नहीं होगा।

एबॉर्शन के दुष्परिणाम क्या होते हैं, शायद हम नहीं समझ रहे हैं, किंतु महिला को उसके दुष्परिणाम भोगने पड़ते हैं। कमर पर अटैक होता है। कमर दर्द होने लगती है। माताओं का मन उद्विग्न रहने लगता है। कोई भी कार्य करती है तो मन चैन नहीं पाता। चैन मिलेगा कहाँ से।

सुख दिया सुख होत है, दुख दिया दुख होय,

चैन मिलेगा कहाँ से? मन ही मन बेचैन रहेगा।

डॉ. नाथन्सन ने एबॉर्शन किया। उसने उसकी सी डी बनाई। ऑपरेशन के बाद वह ऑपरेशन थिएटर से बाहर आकर सी डी देखने बैठा। सी डी देखते-देखते उसका दिल काँप गया। वह अपना हास्पिटल छोड़कर चला गया। एबॉर्शन तीन प्रकार से होते हैं। एक क्षार-सिंचन विधि से, जिसके बारे में अभी बताया गया। दूसरी विधि में एक नली गर्भ में डालकर हवा को जोर से

खींचा जाता है जिससे गर्भस्थ शिशु नली के माध्यम से बाहर आ जाता है। उसे बेदली में बंद कर दिया जाता है। वह बच्चा यदि पाइप में नहीं आए तो फिर गर्भ में कैंची जाती है जिससे उसके टुकड़े कर दिए जाते हैं और कत्ल करके बाहर निकाला जाता है। मेरी समझ के अनुसार बात कहूँ तो थोड़ी कड़वी जरूर होगी। क्या इसे कत्लखाना कहना बुरा होगा?

किसी कसाईखाने के सामने से निकलते हुए आपने किसी मुर्गी या बकरे को कटते हुए देखा होगा। उस समय आपके मन में घिन पैदा हुई होगी किंतु इस पर ध्यान नहीं जाता कि स्वयं के घर में क्या हो रहा है। कत्लखानों को बंद करने के लिए आप उपाय करते हैं, किंतु मनुष्य के कत्लखाने बंद करने के लिए क्या उपाय हो रहे हैं। कानून की दुहाई दी जा रही है, किंतु यह क्या हो रहा है। यह विचारणीय बात है। यदि यही दशा बनी रहेगी तो मानवता के धरातल की दशा क्या होगी।

मानवता की भव्य भूमि पर, बोल गए भगवान,
मानव मानव एक समान।

घर में किसी मेहमान के आने पर उसका सम्मान किया जाता है, किंतु अपनी कुक्षि से जन्म लेने वाली संतान के आते ही उसका सम्मान कैसा हो रहा है! कैसा आदर हो रहा है! कैसे उसके स्वागत की तैयारी हो रही है!

सोचो बहनो! सोचो भाइयो! क्या हो रहा है और क्या होना चाहिए। हम जैनी हैं और जैनियों की क्या स्थिति होती है। इसलिए कभी-कभी संतों के मुँह से निकल जाता है। क्या निकल जाता है?

'बोलो मित्रों बोलो किसने, जैन धर्म बदनाम किया।'

क्यों, क्या बात है? आवाज नहीं आ रही है आपकी। मैं समझ रहा हूँ कि तेले के तप के कारण से आवाज नहीं आ रही होगी। हो सकता है कि कइयों का दिल पाप से भर गया हो। अपराध किए होंगे, जिससे आवाज नहीं आ रही होगी। आज पाप को धो डालने का दिन है। अपने आपको कर्तव्य पथ पर आरूढ़ करने का दिन है, इसलिए बोलना है-

बोलो मित्रों बोलो किसने, जैन धर्म बदनाम किया,
जैनी बनकर जैन धर्म का, हमने कितना नाम किया।

एक प्रश्न खड़ा होता है कि हमने जैन धर्म को कितना रोशन किया? हमारे कार्य-कलापों से जैन धर्म की हानि हुई या उसका उत्थान हुआ है?

(सभा में चुप्पी)

बोलना मत। नहीं बोलने में ही सार है। आप बोलेंगे तो चार बातें और सुनेंगे। जो है सो आप भी समझ रहे हैं और मैं भी समझ रहा हूँ।

'बंद मुट्ठी लाख की, खुल गई तो खाक की'

बंद मुट्ठी नहीं खुले तो अच्छा है। लोग कहते हैं कि पहले जमाने में जैनियों की साख हुआ करती थी। जैनियों के बयान के सामने दूसरे बयान खारिज हो जाते थे और अब हमारी बात हमारा अपना बेटा भी नहीं मान रहा है। घर की औरतें भी बात नहीं मान रही हैं।

यहाँ पर प्रश्नवाचन चिह्न लगता है कि हमारे घर के सदस्य हमारी बात क्यों नहीं मान रहे हैं? गर्भ में रहते हुए आपने उनको क्या संस्कार दिये? आपने उनकी क्या रक्षा की?

'मटकी जैसी ठीकरी, माँ जैसी डीकरी।'

ऐसा कहा जाता है कि जैसी माँ होती है, वैसे ही उसकी बेटी होती है। यदि संतान बात नहीं मानती हो तो उसका कारण ढूँढना कि कहीं मेरी तो कमजोरी नहीं रह गई। यह शोध करने पर ज्ञात हो जाएगा कि कमी कहाँ है। ज्ञात हो जाएगा कि लालन-पालन में कहाँ कमी रही, मैंने कैसे लालन-पालन किया। यह खोज करने से समाधान हो सकता है।

माता मदालसा की बात प्रवचनों में हमने बहुत बार सुनी है। जय सिंह सम्राट कहते हैं, रानी! तुम क्या कर रही हो? तुम बच्चों को कैसी शिक्षा देती हो कि वे जवान होते ही साधु बन जाते हैं। ऐसे में क्या मैं बुढ़ापे में राज्य का भार ढोता रहूँगा? मदालसा कहती है, नाथ! यदि आपने माता की पहचान की होती तो आपको यह शिकायत नहीं होती। जो माता अपनी संतान को साधु बना सकती है वह राजा भी बना सकती है। मदालसा ने कहा कि मैं आपको ऐसी संतान दूँगी जो आपके राज्य की धुरा संभाल सके।

उसने एक संतान को ऐसी शिक्षा दी जो राज धुरी को संभाल सके। राजा के वजन को हलका कर सके। मदालसा ने उस संतान के हाथ में एक

ताबीज बाँध दिया और कहा– बेटा! कभी भी तुम्हारा मन उद्विग्न हो जाए तो यह ताबीज खोलकर देख लेना, इस ताबीज में तुम्हें उपाय मिल जाएगा।

एक बार उसका मन उद्विग्न हुआ तो उसने ताबीज खोला। उसमें एक श्लोक लिखा था–

'सिद्धोसि, बुद्धोसि निरञ्जनोसि, संसारमायापरिवर्जितोसि
संसारस्वप्नं तज मोहनिद्रां, मदालसा वाक्यमुवाच पुत्रम्'

अर्थात् तुम सिद्ध हो, बुद्ध हो, निरंजन हो। संसार का त्याग करो। माया का त्याग करो और अपने सही स्वरूप को समझो।

उसने उस उपदेश को समझा और राज्य को छोड़कर, त्यागकर साधु जीवन को स्वीकार कर लिया। बहुत सारे आख्यानों में ऐसी माताओं का वर्णन आया है।

जोधपुर के सम्राट जसवंत सिंह जी एक बार युद्ध में पीठ दिखाकर आ गए। आकर उन्होंने धीरे से दरवाजा खटखटाया। उनकी पत्नी ने कहा, कौन है? उन्होंने कहा, मैं जसवंत सिंह। पत्नी ने कहा, दरवाजा नहीं खुलेगा। मैं भगोड़े की पत्नी नहीं कहलाना चाहती। वह दरवाजा नहीं खोलती। उसकी सास आई और कहा कि बहू! मेरा बेटा रण से भागकर आया है। वहाँ से छुपकर आया है, दरवाजा खोल दो। उसने दरवाजा खोल दिया। सास ने बहू से कहा कि बहू! मेरा बेटा थका हुआ आया है इसके लिए हलवा बना दो। सास की बात मानकर वह हलवा बनाने लगी। मन मारकर हलवा बना रही थी। कड़ाही में खुरपा चला रही थी।

कैसे बनता है हलवा? आपने बनाया कभी?

आप बोलेंगे, म.सा. हलवा तो बहुत बनाया। खैर, सम्राट की पत्नी कड़ाही में खुरपा चला रही थी तो सास ने कहा, बहू! खुरपा थोड़ा धीरे फेर। मेरा बेटा शत्रुओं से युद्ध करते हुए भागकर आया है। खुरपे की आवाज उसको ऐसा न लगे कि तलवार की आवाज है। यदि ऐसा लगेगा तो वह अन्यत्र कहाँ जाएगा?

सम्राट ने कहा, माँ तुम यह क्या बोल रही हो?

माता ने कहा, सही तो बोल रही हूँ। तूने मेरा ही दूध पीया होता तो

आज यह दशा नहीं होती। तू कभी पीठ दिखाकर, भागकर नहीं आता। माता ने कहा, एक बार मुझसे बहुत बड़ी गड़बड़ी हो गई। मैंने, तुम्हें आया को सौंप रखा था। तुम रुदन करने लगे। मेरा शरीर क्लांत था। मैंने अपने शरीर को शांत करना चाहा। शरीर शांत करके तुम्हें दूध पिलाने के लिए सोच रही थी। तुम ज्यादा रो रहे थे तो आया ने तुम्हें अपना दूध पिला दिया था। मुझे मालूम पड़ा तो मैंने तुम्हारे मुँह में अंगुली डालकर उलटी करवाई, फिर भी उसका कुछ असर रह गया। वही असर दिख रहा है। उसने कहा कि यदि तुमने मेरा ही दूध पीया होता तो रणभूमि से पीठ दिखाकर कभी वापस नहीं लौटते।

सम्राट जोश में आकर पुन: युद्धभूमि में गया और विजय प्राप्त करके लौटा। ऐसी होती थीं रानियाँ, माताएं जो अपनी संतानों को शूरवीरता का पाठ पढ़ाती थीं।

आप क्या पाठ पढ़ाते हो?

'रो मत रो मत बाला, थने परणासूँ बिनणकी'

आपने अपनी संतान को गुड्डे-गुड्डी का खेल खेलाया।

बंधुओ! सोचना जरूरी है। सुधार करना जरूरी है। मन में विश्वास जगाना है कि हमें ऐसा धर्म मिला है और हमारे मन में कायरता जग रही है। हमारे भीतर तो ओज होना चाहिए।

ओज तुम्हीं से है पाया, दीप उसी से जल पाया,
सारे जहाँ में एक सुरक्षित, यही गोद है तेरी।

आज बात होती है कि औरतों को भी राजनीति में बराबर का दर्जा मिलना चाहिए। मेरा बहुत स्पष्ट मंतव्य है और मैं माताओं से कहना चाहूँगा कि न राजनीति की आवश्यकता है, न कूटनीति की। बस अपने परिवार को संभाल लो। अपने परिवार को उन्नत कर लो। अपने बच्चों को सही तरह से संस्कारित कर दो। परिवार को सुघड़ बना लो। ऐसा करने से राष्ट्र की बहुत सेवा हो जाएगी।

बच्चे मन के सच्चे, सारे जग की आँख के तारे,
ये वो नन्हें फूल हैं जो, भगवान को लगते प्यारे।

आपकी संतानें देश की रक्षा करने वाली बनें, धर्म की रक्षा करने

वाली बनें, संस्कारों की रक्षा करने वाली बनें। संतानें ऐसी बनेंगी तो सत्य-अहिंसा का पालन करते हुए राष्ट्र व धर्म की रक्षा करने में समर्थ बनेंगी।

जहाँ सत्य-अहिंसा और धर्म का, पग-पग लगता डेरा,
वह भारत देश है मेरा, वह भारत देश है मेरा।

मेरा गला तो खराब हो रहा है, आप सब का भी खराब हो रहा है क्या?

(श्रोतागण भी गीत गाने लगे)

अब आप देख लो कि आपका भारत देश कैसा है। यह बात जान लो कि मेरा भारत देश कैसा है। हमें अपने देश पर गौरव होना चाहिए। यदि औरतें अपनी संतानों को तैयार नहीं करेंगी तो संतानें सपूत नहीं कपूत होंगी। कपूत संतान धर्म की क्या रक्षा करेगी!

'जीवूँ छूँ तो धर्म ना काजे, मरवूँ छे तो धर्म ना काजे।'

मेरा जीवन धर्म की रक्षा के लिए है। धर्म की रक्षा के लिए मुझे मरना भी पड़े तो तैयार हूँ। पीछे नहीं हटना कि मेरे परिवार का क्या होगा, मेरे बच्चे का क्या होगा। सभी अपने-अपने पुण्य और अपने-अपने पाप कर्म लेकर आए हैं। पीछे देखने की आवश्यकता नहीं है। अपने पर भरोसा है तो अपनी संतान पर भी भरोसा होना चाहिए। ऐसा विश्वास जगेगा तो संतान कायर नहीं होगी। कायरता का दाग हट जाएगा। हम पर दाग लगाया गया है कि जैनी कायर होते हैं। उस दाग को धो डालना है। उसको धोने के लिए बहनें राजनीति में जाने के बजाय अपने परिवार को सुघड़ बनाएं। बच्चों को सही शिक्षा दें। ऐसा लक्ष्य बनेगा तो वे धर्म की रक्षा करने में समर्थ होंगे।

फिर तो फिजा ही बदल जाएगी। इस बदलाव की मूल भूमि माताएं हैं। यदि वे इस जिम्मेदारी का निर्वाह कर लें तो राष्ट्र बदल सकता है। आज भ्रष्टाचार के बारे में सुना जाता है।

भ्रष्टाचार आया कहाँ से। हमारी नई पीढ़ी को हमारी माताओं ने यदि अच्छे संस्कार दिए तो सारे भ्रष्टाचार खत्म हो जाएंगे। यदि हमारी माताएं दृढ़ता से कदम उठाएं और धार लें कि मेरी संतान कायर नहीं होगी, मेरी संतान भ्रष्टाचार करने वाली नहीं होगी, अन्याय का प्रतिकार करने के लिए तैयार होगी तो कोई कारण नहीं कि ऐसा न हो।

ऐसी शिक्षा अपनी संतान को देंगे तो वह कर्तव्य का पालन करेगी। धर्म की रक्षा करेगी। इसलिए आनंदघन जी की स्तुति करते हुए कहा गया– '**धर्म न जाने, हो मर्म जिनेश्वर**' अर्थात् धर्म के मर्म को जानें। खाली, सामायिक–प्रतिक्रमण करने से धर्म नहीं होगा। कर्तव्य पालन के लिए कटिबद्ध होना पड़ेगा। जिस दिन इस दिशा की ओर आगे बढ़ेंगे उस दिन नर नारायण हो जाएगा। प्रेरणा लें। आज का दिन प्रेरणा लेने का है। आज समय ज्यादा हो गया। मूल बात छूट गई।

कृष्ण वासुदेव ने तेला किया। देवता का आह्वान किया। किस प्रकार उन्होंने अपने कर्तव्य का निर्वाह किया, यह बात अंतगडदशा सूत्र में सुन गए। आप विचार करें कि माता के दुख–दर्द को कृष्ण वासुदेव ने कैसे दूर किया। तेला किया, देवता को याद किया और देवता उनके सामने आकर खड़ा हो गया। हम भी कर्तव्य का पालन करेंगे तो सारी स्थितियाँ सही होती चली जाएंगी। हम प्रेरणा लें। पर्व पर्युषण प्रेरणा देने वाले हैं। हम इनसे कितनी प्रेरणा लेते हैं और कितना सुधार करते हैं इसकी समीक्षा करने की आवश्यकता है। ऐसा करेंगे तो अपने आपमें धन्य बनेंगे। इतना ही कहते हुए विराम ले लेता हूँ।

16 अगस्त, 2023

11

वीर पथ पर कदम बढ़ाएं

धर्म जिनेश्वर गाऊँ रंगशुं, भंग म पड़शो हो प्रीत जिनेश्वर,
बीजो मन मंदिर आणुं नाहीं, ए अम कुलवट रीत जिनेश्वर।
धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।

धर्म श्रद्धा के संदर्भ में हम बहुत सुन चुके हैं। सुन रहे हैं। अंतगडदशा सूत्र धर्म श्रद्धा से भरा हुआ है। इस सूत्र के माध्यम से धर्म श्रद्धा की उच्च स्तरीय चर्चा सुन सकते हैं। सुनना एक बात है और कठिन क्षणों में स्वयं को श्रद्धानिष्ठ बनाए रखना दूसरी बात है। जब तक कोई विपत्ति नहीं आती, तब तक धर्म श्रद्धा बनी रहती है। तब तक विश्वास रहता है कि मैं धर्म पर श्रद्धा करने वाला हूँ। धर्म के प्रति मेरी अटूट आस्था है, किंतु कठिनाई के क्षण में समझ सकते हैं कि हमारी धर्म श्रद्धा क्या है।

देवकी महारानी के मन में एक बार विचार जरूर आया कि मुनि की भाषा अन्यथा कैसे हो गई। वह संशय में नहीं रही। उसने अरिष्टनेमि भगवान से समाधान लिया। बहुत से लोग संशय में झूलते रहते हैं। संशय, श्रद्धा समाप्त करने वाला होता है।

नीति में कहा गया है, '**संशयात्मा विनश्यति**' अर्थात् संशय, आत्मा का विनाश करने वाला है। इसलिए संशय में नहीं रहना चाहिए। संशय का निराकरण करना चाहिए। उसका निवारण करना चाहिए। देवकी महारानी ने अरिष्टनेमि भगवान से समाधान लिया और उसका चित्त शांत हो गया। कालांतर में गजसुकुमाल का जन्म हुआ। कोमल गात्र होने से उनका नाम गजसुकुमाल रखा गया। गजसुकुमाल का शरीर हाथी के तालु के समान कोमल था।

हम विचार कर सकते हैं कि जो माता सात-सात पुत्रों को जन्म देने के बाद एक पुत्र को भी लाड लडाने का मौका नहीं पाए वह अपनी आठवीं संतान के प्रति कितना वात्सल्य उड़ेलेगी। उस माता के बारे में केवल कल्पना कर सकते हैं। अनुमान लगा सकते हैं।

देवकी के लिए गजसुकुमाल सबकुछ हो गए। गजुसककुमाल का लालन-पालन, शिक्षा से जीवन उत्थान होता रहा। सारा खेल चलता रहा। अरिष्टनेमि भगवान का आगमन हुआ। कृष्ण वासुदेव, भगवान की पर्युपासना में जाने को तत्पर हुए तो गजसुकुमाल ने कहा, भैय्या! कहाँ पधार रहे हो? कृष्ण वासुदेव ने कहा, अरिष्टनेमि भगवान के दर्शन करने जा रहा हूँ। गजसुकुमाल ने कहा, मैं भी साथ चलना चाहता हूँ। कृष्ण वासुदेव को देव ने पहले ही बता दिया था कि यौवन में प्रवेश करते ही वे अरिष्टनेमि भगवान के पास दीक्षित हो जाएंगे। यह जानने के बावजूद उन्होंने ऐसा नहीं कहा कि नहीं! तुम यहीं रहो, तुम्हें साथ नहीं ले जाऊँगा, अपितु वे साथ में ले गए।

अरिष्टनेमि की वाणी सुनने में गजसुकुमाल तन्मय हो गए। वाणी का ऐसा अद्‌भुत चमत्कार हुआ कि गजसुकुमाल की आत्मा ने कहा कि मुझे इस संसार में नहीं रहना। मुझे साधु जीवन की आराधना करनी है। अरिष्टनेमि भगवान की चरण-शरण प्राप्त करनी है। गजसुकुमाल वहीं बैठे रहे। कृष्ण वासुदेव वापस चले गए।

अब महत्त्व की बात समझना। श्रावक किसी को धर्म की ओर ले तो जाता है किंतु धर्म में लगे हुए व्यक्ति को ऐसा नहीं कहता कि चलो, तुमको चलना पड़ेगा। ऐसा उसको फोर्स नहीं करता। देशना के बाद गजसुकुमाल, अरिष्टनेमि भगवान से निवेदन करते हैं और माता के पास आते हैं।

माता मैं एक सुनाता हूँ, प्रभु नेम चरण में जाता हूँ,
ये चरण मुझे मन भाए हैं, श्री गजसुकुमाल जी आए हैं...

उन्होंने कोई लाग-लपेट नहीं की। कोई भूमिका नहीं बाँधी। एकदम स्पष्ट बात कही कि मैंने अरिष्टनेमि भगवान की देशना सुनी है और मेरा मन उनके चरणों में रम गया है। मैं साधु जीवन स्वीकार करना चाहता हूँ।

गजसुकुमाल की बात सुनकर देवकी महारानी बेहोश होकर धड़ाम से

नीचे गिर पड़ी। देवकी महारानी के गिरने के बाद भी गजसुकुमाल शांत भावों से खड़े रहे। उनके मन में ऊहापोह नहीं हुआ। उनके मन में यह भी नहीं आया कि अरे! माँ को क्या हो गया। वे निश्चल रहे। अडोल रहे। वे संसार के संबंधों की नश्वरता को, क्षणभंगुरता को समझ चुके थे। मोह का आवृत उन पर बेअसर हो गया। भगवान की वाणी का माहात्म्य बताते हुए कहा गया है–

'वीर हिमाचल से निकसी, गुरु गौतम के श्रुत कुंड ढली है
मोह महाचल भेद चली, जग की जड़ता सब दूर टरी है'

क्या बात है, कोई गाने वाला नहीं है क्या? पहले हमारे संतों के व्याख्यान इसी से प्रारंभ होते थे। यह श्रुत गंगा, ज्ञान गंगा वीर हिमाचल से निकली और गणधर गौतम के कानों में ढली। वही ज्ञान गंग वहाँ से बहती हुई आगे बढ़ी।

हिमालय पर चढ़ना संभव है या असंभव? हिमालय के शिखर को छूना संभव है या असंभव?

(श्रोतागण बोले– संभव है)

कायरों के लिए, हिम्मत हारनेवालों के लिए असंभव है। रामायण के एक प्रसंग में बताया गया है कि सीता की खोज करके टीम वापस लौटी। अंगद उस टीम के मुखिया थे। उनसे पूछा गया कि भाई! लंका यहाँ से कितनी दूर है?

'आलसियो आगी घणी, हिम्मत हाथ हुजूर'

आलसियों के लिए लंका बहुत दूर है। कहा जाता है कि दिल्ली दूर है, किंतु अंगद कहते हैं, हिम्मतवालों के लिए अगला हाथ, अगला कदम लंका है। **'चरैवेति... चरैवेति...'** यानी चलते रहो, चलते रहो...

निरंतर चलनेवालों के लिए मंजिल दूर नहीं हो सकती। नक्शे पर चलनेवालों के लिए मंजिल दूर ही रहती है। हिम्मत से कदम बढ़ानेवालों के चरण सफलता चूमती है।

खैर, देवकी महारानी होश में आती हैं। वे विलखती हैं। रोते-रोते बोलती हैं–

संयम लेना कोई खेल नहीं, तेरी वय का भी कोई मेल नहीं,
मैंने भी स्वप्न संजोए हैं, श्री गजसुकुमाल जी आए हैं...

देवकी महारानी ने कहा, बेटा! तू साधु जीवन की बात कह रहा है, संयम की बात कह रहा है किंतु साधु बनना कोई खेल की बात नहीं है।

यह बात सही हो सकती है कि साधु बनना कोई खेल नहीं है, किंतु इस बात में कोई संदेह नहीं कि वीरों की क्रीड़ास्थली संयम ही है। संयम पथ पर, संयम के खेल में, संयम के मैदान में वीर पुरुष ही आ पाते हैं। कायरों का कलेजा कंपायमान रहता है। कायर कभी हिम्मत नहीं कर सकते। वे विचार भी नहीं कर सकते। ऐसे लोग यही कहेंगे कि संयम कोई खेल नहीं है।

संयम कोई खेल नहीं, जो टी.वी. पे दिखाते हैं,
मोम के ये दांत कोमल, चने लोहे के चबाने है।

हमारा मन यह सोचता है कि संयम, टी.वी. पर देखने वाला खेल नहीं है। टी.वी. पर दिखाए जाने वाले खेलों जैसा आसान नहीं है। छोटी सड़कों पर चलने वाले बहुत से लोग नेशनल हाई-वे, भारत माला रोड और बड़ी-बड़ी सड़कों पर चलने की हिम्मत नहीं कर पाते। वे भयभीत हो जाते हैं कि इतनी भीड़ वाली सड़क पर चलूँगा तो एक्सीडेंट हो जाएगा।

'रोवतो जावे, तो मरोड़ा समाचार लावे'

रोता हुआ जानेवाला मरे हुए का समाचार लाता है। जिसके दिमाग में सफलता के प्रति पहले ही संदेह उत्पन्न हो जाता है, उसे सफलता नहीं मिलती। जिसका दिल बुलंदियों पर होता है वही हिमालय पर चढ़ने में समर्थ होता है। वैसे ही मोह रूपी हिमालय पर वीर ही चढ़ने का साहस करते हैं। वे ही चढ़ने की हिम्मत अपने भीतर पैदा कर सकते हैं।

गजसुकुमाल कहते हैं, माँ! तुम कह रही हो कि संयम कोई खेल नहीं है, किंतु मैं वीर माता का पुत्र हूँ। मेरे लिए संयम कोई कठिन बात नहीं है। माँ कहती है, बेटा! मैंने स्वप्न सँजोए हैं। गजसुकुमाल कहते हैं, सपने तो सपने ही होते हैं। सपने कभी अपने नहीं होते।

हम भी सपने बहुत देखते हैं। चुनाव सामने आ रहे हैं। चंडालिया[1] जी सोच रहे होंगे कि हमें टिकट मिल जाए। मैं यह नहीं कहता कि राजनीति में नहीं जाना। राजनीति को अच्छे लोगों ने छोड़ दिया, इसलिए वहाँ ऐसे लोगों का

1. अशोक जी चंडालिया (कपासन)

प्रवेश हो गया जिनको नहीं होना चाहिए था।

जावद के ओमप्रकाश जी सकलेचा विधायक भी हैं और मंत्री भी। वे एक दिन अपना दुख व्यक्त कर रहे थे कि ''जैनियों को आपस में लड़ने से फुरसत नहीं है। आपस में बहुत लड़ेंगे। यदि कोई दूसरा समुदाय लड़ने के लिए आ जाए तो घर में घुस जाएंगे। एक जमाने में भारत की लोकसभा-राज्यसभा में पाँच-पाँच, सात-सात जैन हुआ करते थे। अब वैसी स्थिति नहीं है।'' आपके मध्यप्रदेश में भी जैनी मुख्य मंत्री बना करते थे, बने थे। विधानसभा में भी पाँच, सात, दस जैनी हुआ करते थे। अब धीरे-धीरे सूपड़ा साफ हो रहा है। आप सोच रहे हैं कि राजनीति बहुत गंदी है, इससे हमें क्या लेना।

हमने राजनीति गलत लोगों के भरोसे छोड़ दी, इसलिए वह गंदी हो गई या फिर अँगूर खट्टे हैं, इसलिए कह रहे हैं कि राजनीति गंदी है। राजनीति गंदी नहीं है, किंतु आपका वश नहीं चल रहा है तो कह रहे हैं कि राजनीति खराब हो गई। गंदी हो गई। 'गंदी हो गई' कहने का मतलब है कि गंदी थी नहीं, हो गई। एक जमाने में राजसत्ता जैनों के हाथ में हुआ करती थी। चक्रवर्ती, वासुदेव आदि भी भगवान की भक्ति करने वाले होते थे। प्रजातंत्र में भी जैन पीछे नहीं थे। आजादी के आंदोलन में भी जैनों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया था। स्पष्ट है कि हिम्मत होनी चाहिए। व्यक्ति पहले ही हिम्मत हार जाए तो उसको टिकट कहाँ से मिलेगा और टिकट मिल भी जाए तो जीतेगा कैसे! आधे-अधूरे मन से किया गया काम कभी सफल नहीं होता। दृढ़ मनोबल से कदम आगे बढ़ाने वाला सफलता प्राप्त करता है।

माँ और बेटे की चर्चा बहुत लंबी है। अंततोगत्वा गजसुकुमाल को अनुमति प्राप्त हो गई। देवकी महारानी और कृष्ण वासुदेव, गजसुकुमाल को लेकर अरिष्टनेमि भगवान के चरणों में पहुँचे और कहा, भगवन्! यह गजसुकुमाल हमारा प्रिय है, लाडला है, कलेजे की कोर है, आँखों का तारा है, सितारा है। इसका नाम और गोत्र श्रवण भी दुर्लभ है। यह आज साधु जीवन को स्वीकार करने के लिए तत्पर है। अत: भगवन्! हमारी तरफ से यह शिष्य भिक्षा स्वीकार कीजिए।

भगवान अरिष्टनेमि ने गजसुकुमाल को दीक्षित किया। मुंडित एवं

शिक्षित किया। कुँवर गजसुकुमाल, गजसुकुमाल मुनि बन गए। वे अरिष्टनेमि भगवान से कहते हैं, भगवन्! शीघ्र मुक्ति का मार्ग बताइए। जल्दी-से-जल्दी मोक्ष जाने का मार्ग बताइए जिससे मैं मोक्ष पहुँच सकूँ।

भगवान ने महाकाल श्मशान में भिक्षु की प्रतिमा स्वीकार करना बताते हुए कहा कि यह शीघ्र पहुँचने वाला मार्ग है। कहते हैं कि भिक्षु प्रतिमा की आराधना करने वाला यदि सम्यक् रूप से आराधना करता है तो उसे अवधिज्ञान, मन:पर्यवज्ञान या केवलज्ञान में से कोई भी ज्ञान प्रकट होता है। वह यदि बीच में भ्रमित हो जाए, संकटों से घबरा जाए तो डिप्रेशन में चला जाएगा, पागल हो जाएगा। दीर्घकालिक रोग से आतंकित हो जाएगा। शिखर पर चढ़ने वाले का पाँव फिसल जाए तो वह कहाँ गिरेगा, कहाँ रुकेगा, पता नहीं पड़ेगा।

गजसुकुमाल मुनि कहाँ पहुँच गए?

(श्रोतागण बोले- महाकाल श्मशान में पहुँच गए)

बहुत लंबा विवरण है। आपने अंतगडदशा सूत्र में पढ़ा होगा, सुना होगा। गजसुकुमाल ध्यान में खड़े हो गए। सोमा नाम की लड़की को गजसुकुमाल के लिए कृष्ण वासुदेव ने मँगनी करके उसे अविवाहित अन्त:पुर में रखवाया। अविवाहित कन्याओं के रहने की जगह को अविवाहित अन्त:पुर कहा जाता है। सोमिल ब्राह्मण सोमा का पिता था। उसने जैसे ही गजसुकुमाल को मुनि रूप में देखा उसे रोष आ गया। उसे तीव्र गुस्सा आ गया। वह गुस्से में बड़बड़ाने लगा कि अकाल मृत्यु को चाहने वाला, निर्लज्ज, मेरी लड़की से शादी के विचार को त्याग साधु बनकर खड़ा हो गया।

उसी गुस्से में उबलते हुए उसने तालाब से मिट्टी लाकर, मुनि के शिर पर उसकी पाल बनाई। पाल बनाकर श्मशान में धधकते हुए खेर के अंगारे लाकर गजसुकुमाल के सिर पर रख दिए।

अंगारे सिर पर धधक रहे, समभाव से गजसुकुमाल सहे,
कैवल्य ज्योति प्रकटाए हैं, श्री गजसुकुमाल जी आए हैं...

बंधुओ! गजसुकुमाल जवानी में पैर धर ही रहे थे कि वैराग आया और मुनि बन गए। उन्हें यह ललक लगी कि मुझे शीघ्र-से-शीघ्र मुक्ति को वरना है। ऐसी तीव्र भावना बहुत कम बार ही मन में पैदा होती है। दूसरे विचार,

दूसरी भावनाएँ पैदा होती रहती हैं, किंतु मुक्ति के विचार विरलों के मन में ही पैदा होते हैं। धनपति बनने के स्वप्न हमने बहुत बार देखे होंगे। बहुत बार मन में विचार भी पैदा हुए होंगे कि मेरा स्टेटस हो, मेरे पास धन का अंबार हो। टेन टॉप में मेरी पहुँच हो जाए।

कितने लोगों के मन में ऐसी भावना प्रकट हुई कि मैं भी साधु बन जाऊँ? हाथ खड़े कीजिए। हाथ खड़े नहीं हो रहे हैं। डर लगता है।

(उपाध्यायश्री जी बोले– चंडालिया जी ने हाथ खड़े किए)

ये तो मेवाड़ के हैं। अतुल जी हाथ खड़ा करके छुपा रहे हैं कि कोई देख न ले। भय लगता है समाज के लोगों से। बोलेंगे कि व्याख्यान में हाथ खड़ा कर दिया।

'मन ढीला तो आटा गीला'

मन स्ट्रांग है, तो कोई भी बाधा खड़ी नहीं होगी। सारी बाधाएं दूर हो जाएंगी। इसलिए मन मजबूत होना चाहिए। मन में संशय नहीं रहेगा तो उसमें दृढ़ता बरकरार रह सकती है। मन में ऐसा भाव पैदा हो कि अमुक तारीख को जिंदा रह गया तो साधु जीवन में मिलूँगा। हाथ खड़ा कीजिए, कौन–कौन तिथि फाइनल करने वाले हैं? कितनी तारीख को साधु जीवन स्वीकार करेंगे? कोई बात नहीं, मत बताओ, पर लिख तो लो। किस तारीख को दीक्षा लेंगे? 30 फरवरी को? क्या तारीख लिखी, 30 फरवरी। 30 फरवरी को या 31 सितंबर को?

खैर, जो भी तारीख लिखी हो, वह चूकनी नहीं चाहिए। विचार दृढ़ रहेंगे तो कार्य सिद्ध होगा। कोई भी बाधा खड़ी नहीं होगी। पुण्य होगा, सौभाग्य होगा तो मन में ऐसा भाव जगेगा। पुण्यहीन व्यक्ति के मन में ऐसा भाव पैदा होना बहुत मुश्किल है। उसको भय लगेगा। वह कहेगा कि बावजी! साधु बनना, म्हारे भाग्य में कोनी। साधु बनना मेरे वश की बात नहीं है। यह बताओ! पशु साधु बनता है या मनुष्य?

(श्रोतागण बोले– मनुष्य बनता है)

हम कौन हैं?

(श्रोतागण बोले– हम मनुष्य हैं)

मनुष्य हैं तो फिर वह ताकत क्यों नहीं है। अपनी शक्ति की पहचान

नहीं है। अपने ताकत की पहचान नहीं है। जिस दिन अपने शक्ति की पहचान हो जाएगी कि मेरे भीतर वह ताकत है कि मैं भी आगे बढ़ सकता हूँ, तो मैं जहाँ तक सोचता हूँ, उस दिन पिछड़ने की कोई बात नहीं होगी।

हनुमान जी की शक्ति कब जगी?

जामवंत ने कहा, हनुमान! तुम्हारे भीतर इतनी शक्ति है कि तुम चाहो तो समुद्र लाँघ सकते हो। यह जानकर देखते-ही-देखते उनकी शक्ति जागृत हो गई। वैसे ही हर इनसान में शक्ति है, ताकत है। केवल अपनी शक्ति की पहचान करनी बाकी है।

उठ जाग रे चेतन, नींदिया उड़ा ले मोह राग की,
कौन कहाँ से आया है तू, जाना कौन मुकाम।
किन संबंधों में उलझा है, सोच अरे नादान रे।। उठ...

व्यक्ति संबंधों में उलझा हुआ है। यह मेरा पुत्र है, यह मेरी पत्नी है, यह मेरा बंगला है, यह मेरी गाड़ी है मानकर वह परिवार, लड़की-लड़का, बंगला, गाड़ी में उलझा है। यह उलझन जीवन के साथ निरंतर बनी हुई है। अरे! मनुष्य जीवन सुलझने के लिए मिला है। उलझी गुत्थी को सुलझाने के लिए मिला है। उलझी गुत्थी को सुलझाने के बाद भीतर आनंद का स्रोत प्रवाहित होने लगेगा। जिस दिन गुत्थी सुलझ जाएगी उस दिन देखना क्या होता है।

गजसुकुमाल पर माता देवकी का प्यार कम था क्या? क्या गजसुकुमाल को दुलार नहीं मिला?

जब अध्यात्म केंद्र जागृत हो जाते हैं, तो वहाँ से शक्ति प्रवाहित होने लगती है। कई लोग कुंडली जागरण की बात कहते हैं। वह जागरण जब हो जाएगा, तब साधक अद्‌भुत रसायन प्राप्त करेगा। आनंदघन जी ने कहा है-

गगन मंडल के अधबीच कुआँ, जहां है अमी का वासा।
सगुरा हो तो चख-चख जाए, नगुरा जाए प्यासा।।

बात समझ में आई क्या? गगनमंडल, आकाशमंडल के अधबीच में एक कुआँ है। उस कुएँ में अमृत भरा हुआ है। कहाँ मिलेगा अमृत? गगनमंडल के बीच, आकाशमंडल के बीच एक कुआँ है, उसमें अमृत मिलेगा। कौन ढूँढेगा उस अमृत को? किसे मिलेगा वह अमृत? गुरु से ज्ञान प्राप्त करनेवाला

अमृत चख लेता है। जो बिना गुरु के दौड़ता-भागता है वह उस कुएँ के इर्द-गिर्द चक्कर लगाता रहेगा, किंतु उसे अमृत नहीं मिलेगा। भीतर की केंद्र शक्तियाँ जागृत होंगी तो अमृत मिलेगा। अमृत मिल गया तो सारी चर्या बदल जाएगी।

वैरागी हूँ, वैरागी को न धन चाहिए, न घर चाहिए,
एक वीर प्रभु की शरण चाहिए।

धन के पीछे लोग मार-काट करते हैं। कोर्ट-कचहरी जाते हैं। क्या मिलेगा इन सबसे? इनका परिणाम क्या होगा? सत्ता के पीछे दौड़ने पर, संपत्ति और वैभव के पीछे पागलों की तरह दौड़ने पर शांति से मरना नहीं होगा। जब इन सबको छोड़कर जाना पड़ेगा तब आदमी रोएगा कि हाय छोड़कर जाना पड़ रहा है।

ए.टी.एम. कार्ड साथ में ले जाओगे क्या? साथ में ले भी जाओगे तो वहाँ कहाँ मिलेगा ए.टी.एम.? साथ कुछ भी जाने वाला नहीं है। यहाँ से जाएंगे तो हाथ खाली के खाली रहेंगे।

एक डॉक्टर सर्जरी करने में बहुत माहिर था, किंतु उतना ही आड़ू स्वभाव था। वह किसी से सीधे मुँह बात नहीं करता। किसी ने कहा कि डॉक्टर मुझे यह तकलीफ है तो उसको कह दिया कि ऑपरेशन करना होगा। व्यक्ति यदि कहता कि डॉक्टर साहब! बिना ऑपरेशन के काम नहीं चलेगा क्या? तो उससे कहता, चलो निकलो यहाँ से। वापस मेरे द्वार पर मत आना। वापस आ गया तो ऑपरेशन नहीं करूंगा। ऑपरेशन कराना है तो इस खटिया पर सो जा, सुबह तुम्हारा ऑपरेशन पहले हो जाएगा। उसका हाथ बहुत साफ था। वह-ऑपरेशन करने में ही नहीं, पॉकेट साफ करने में भी माहिर था। कोई रियायत नहीं करता। अमीर हो या गरीब, पैसे होने चाहिए। नकली नोट नहीं, असली नोट होने चाहिए। अलंकृत भाषा में कहा जाए, तो 'पहले पेट में चीरा, फिर पॉकेट में चीरा।'

कैसा भी इलाज हो, कैसा भी ऑपरेशन हो बहुत जल्दी करता। कोई किसी दूसरे सर्जन के लिए कहता कि वह सर्जन अच्छा है तो कहता, मुझसे बढ़िया कोई नहीं है। जो हूँ, मैं ही हूँ। वह किसी और की नहीं मानता था। केवल अपने आपकी मानता। उसकी पत्नी बहुत बार समझाती कि अपने

स्वभाव को बदलो तो कहता, मेरा स्वभाव सुधरा हुआ ही है। मैं बिगड़ा कब?

एक बार उसकी पत्नी किसी बाबा के पास गई। बाबा ने कहा कि मैं रक्षासूत्र दे दूँगा, पर उसको बाँधेगा कौन? पत्नी ने कहा, मैं उनको आपके पास ही लाती हूँ। वह गई अपने पति को लेकर। बाबा ने उसको समझाने की बहुत कोशिश की किंतु समझा नहीं सके, बल्कि खुद असमंजस में पड़ गए। डॉक्टर साहब का माइंड वॉश नहीं हुआ, पर दो घंटे की मुलाकात ने बाबा को हिला दिया।

घर आकर पत्नी ने कहा, आपने आज अच्छा नहीं किया। आप कब सुधरेंगे। उसने कहा, मैं सब जान रहा हूँ, किंतु सुधरूंगा जरूर। किसी के कहने से सुधरने वाला नहीं हूँ। जिस दिन मेरे भीतर झटका लगेगा, उस दिन मैं सुधर जाऊँगा। दिन निकले, रातें निकलीं, महीने निकले। एक बार डॉक्टर साहब बाथरूम में स्नान करके निवृत्त हुए। उन्होंने देखा कि तौलिया नहीं है तो पत्नी को आवाज लगाई; हेमा, सुन तो। अरे! हेमली सुनती है या नहीं। जोर-जोर से दरवाजा बजाया। हेमा रसोई बना रही थी। वह दौड़ती हुई आई और पूछा क्या हुआ, क्यों चिल्ला रहे हो? डॉक्टर ने कहा, तौलिया दे। उसने बाहर से तौलिया दिया। डॉक्टर जब शरीर पोंछने लगा तो देखा कि शरीर का सारा पानी सूख गया। उसको झटका लगा कि मेरे शरीर में इतनी गर्मी है जिससे शरीर का पानी सूख गया।

उसमें परिवर्तन आ गया। अब किसी के साथ रूखा व्यवहार नहीं करता। यह नहीं कहता कि तुम्हें इतना पैसा देना पड़ेगा। पैसा मिले तो ठीक, नहीं मिले तो भी ठीक। उसमें ऐसा परिर्वतन हुआ कि लोग उसे संत डॉक्टर कहने लगे। डॉक्टरी करते हुए उसने 300 करोड़ की संपत्ति इकट्ठी की थी। सारी संपत्ति उसने पुण्य में बहा दी। पहले कोई माँगने आता तो कहता, चले जाओ यहाँ से। आउट हो जाओ यहाँ से। परिवर्तन होने के पहले एक बार तीन ड्राइवरों को साथ लेकर अहमदाबाद गया और तीन नई गाड़ियाँ खरीदकर लाया। यदि गाड़ी में कोई खराबी हो जाती तो उसे बेच देता, कहता मैं मैकेनिक के पास नहीं जाऊंगा। पहले समाज के लिए, धर्म के लिए कुछ नहीं देता, किंतु जीवन बदला तो सब बदल गया। वैसे ही हमारी स्थिति है। हमें भी जब कोई झटका लगेगा तो शायद हमारा जागरण हो जाए।

गजसुकुमाल मुनि केवलज्ञानी हो गए। उन्हें मोक्ष हो गया। दूसरे दिन कृष्ण वासुदेव, भगवान अरिष्टिनेमि के चरणों में पहुँचकर मुनियों को वंदना-नमस्कार करते हैं, किंतु उनकी आँखें गजसुकुमाल को ढूँढ रही थीं। गजसुकुमाल कहीं नजर नहीं आए तो भगवान अरिष्टनेमि से पूछा, भगवन्! गजसुकुमाल मुनि कहाँ हैं? भगवान ने कहा, तुमने रास्ते में एक वृद्ध पुरुष को सहायता दी। उसका काम जल्दी से संपन्न हुआ, वैसे ही गजसुकुमाल को सहयोग देने वाला मिल गया और उनका कार्य सफल हो गया। वे मोक्ष चले गए। यह सारा वृत्तांत आपने सुना है, पढ़ा है। आप सोचें कि हमें ऐसा अवसर कब मिलेगा!

'अपूर्व अवसर एवो क्यारे आवशे? क्यारे थइशुं बाह्यांतर निर्ग्रंथ जो।'

विचार करें कि मेरे जीवन में वह अपूर्व अवसर कब आएगा, जब मैं बाह्य और आभ्यंतर निर्ग्रंथ बनूंगा। साधु बनूंगा। केवल भावों से नहीं, द्रव्य से भी साधु जीवन स्वीकार करूंगा। वह दिन मेरे लिए धन्य होगा। हे प्रभु! वह दिन मेरा धन्य होगा जिस दिन, आरंभ-समारंभ छोड़कर निर्ग्रंथ प्रव्रज्या को स्वीकार करूंगा। ऐसी भावना भाएं और अपनी शक्ति को जगाएं। शक्ति भीतर रही हुई है, उसको जगाने की हिम्मत करनी है। जिस दिन यह शक्ति जगेगी उस दिन सफलता मिल जाएगी। इस दिशा में कदम आगे बढ़ाएंगे तो धन्य बनेंगे।

तपस्वी आत्माएं तपस्या में निरंतर गतिशील हैं। महासती श्री मल्लिका श्री जी म.सा. की आज 39 की तपस्या है। महासती श्री सुहर्षा श्री जी की 26 और महासती श्री बीजरुचि श्री जी की 27 की तपस्या है। बहनों में सरिता जी मुणोत की 49 की तपस्या है। सरिता जी नागौरी की 25 की तपस्या है। दिनेश जी गांधी की 26 की तपस्या है। संगीता जी की भी 26 व प्रेम बाई की 28 की तपस्या है। इन्होंने मासखमण का पच्चक्खाण ले लिया।

तपस्वी आत्माओं से प्रेरणा लें। तप, त्याग, नियम के लिए मन को मजबूत बनाएं और साधु जीवन स्वीकार करने के लिए अपनी शक्ति जगाएं। इतना ही कहते हुए विराम ले लेता हूँ।

17 अगस्त, 2023

12

आपकी भावना फले

धर्म जिनेश्वर गाऊँ रंगशुं, भंग म पड़शो हो प्रीत जिनेश्वर,
बीजो मन मंदिर आणुं नाहीं, ए अम कुलवट रीत जिनेश्वर।।
धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।

क्या है धर्म? किसे कहें धर्म श्रद्धा?

थोड़ा हट के बात करूँ, तो अपने आप पर विश्वास होना धर्म श्रद्धा है। अपनी पहचान हो गई कि मैं आत्मा हूँ। आत्मा पर दृढ़ विश्वास होना, श्रद्धा होना धर्म श्रद्धा कही जा सकती है। यह कहना अयुक्त नहीं है, क्योंकि धर्म से ही आत्मबोध जागृत होता है। आत्मबोध पर जो मजबूती होती है वही श्रद्धा होती है। बिना तत्त्व को जाने हुई श्रद्धा बिना अनुभूति की है। वह श्रद्धा महापुरुषों के वचनों को सुनने से, आगमों को पढ़ने से हो पाई है। ऐसी श्रद्धा कभी भी डिग सकती है किंतु अनुभूति से हुई श्रद्धा हिलेगी नहीं, डोलायमान नहीं होगी। इसीलिए अपने आप पर श्रद्धा होने को धर्म श्रद्धा कहा जा सकता है या कहा जाता है।

पर्व पर्युषण आत्मबोध को जागृत करने वाले हैं। तैयारी होगी तो आत्मबोध जगेगा। तैयारी नहीं होगी तो पर्व आया है, चला जाएगा। इससे लाभान्वित नहीं हो पाएंगे। हमारी मनोभूमि इनसे पावन और पवित्र नहीं हो पाएगी।

अरिष्टनेमि भगवान का द्वारिका पधारना हुआ। एक बार नहीं, बार-बार पधारना हुआ। उनमें से एक प्रसंग बताया जा रहा है।

अरिष्टनेमि की धर्मसभा में, पहुँचे श्री नर-नाथ,
नगर-नागरिक परिजन सारे, पहुँचे उनके साथ जी।। करी धर्म...

आज हमने अंतगड़ सूत्र में मुख्य रूप से दो बातों को सुना, दो विषयों के बारे में सुना। एक प्रसंग धर्म दलाली का और दूसरा प्रसंग द्वारिका विनाश का।

अरिष्टनेमि भगवान से पूछा गया कि भगवन्! इस द्वारिका का विनाश किस हेतु से होगा? भगवान ने बताया कि मुख्य तीन कारणों से द्वारिका नगरी का विनाश होगा; '**सुरा, अग्नि, द्वेपायन।**' उन्होंने पहला कारण शराब को बताया।

यह आपके-हमारे मुँह की बात नहीं है। सर्वज्ञ-सर्वदर्शी, अरिष्टनेमि भगवान के मुँह से निकली हुई वाणी है कि द्वारिका के विनाश का मूल शराब होगी। अग्नि और द्वेपायन उसके निमित बनेंगे। आज शराब का बोलबाला कितना बढ़ गया। जिस शहर में पहुँचिए, जिस गाँव में पहुँचिए वहाँ शराब की दुकानें मिलेंगी। गाँवों में कम मिलेंगी पर शहरों में प्राय: पहले शराब की दुकानों के दर्शन होंगे। लिखा मिलेगा देशी शराब-अंग्रेजी शराब। इस शराब ने न जाने कितने बिगाड़ किए। आज भी लोग आँख मींचकर सो रहे हैं। घर के घर उजड़ गए शराब से। घर-परिवार, समाज-राष्ट्र की दुर्दशा हो रही है फिर भी हम निरुपाय बने हुए हैं। लगता है कि हमारे हाथ में कुछ नहीं है। कुछ भी करने में समर्थ नहीं हैं। हम चाहते हैं कि सरकार शराब पर रोक लगा दे। सरकार रोक लगाती है, किंतु हमारे काले कारनामे शराब प्राप्त कर लेते हैं।

विहार करते हुए एक गाँव में जाना हुआ। गाँव का नाम याद नहीं है। वहाँ पर रात्रि व्याख्यान में उपदेश दिया गया। सामान्यत: गाँव में यही व्याख्यान दिए जाते थे कि नशा-पता नहीं होना चाहिए। गाँव वालों ने कहा, म.सा.! हमारे गाँव में कोई नशा-पता नहीं कर सकता। बाहर का मेहमान भी यहाँ आकर सिगरेट-तंबाकू नहीं खा पाएगा। हमारे यहाँ पर ऐसी कोई दुकान नहीं है। न बाहर से लाते हैं और न यहाँ पर सेवन कर सकते हैं।

इसी प्रकार कर्नाटक के एक गाँव में पहुँचे। काफी बड़ा गाँव था। उस एरिया में मांस का सेवन सामान्य बात है। उस गाँव के लोगों ने कहा कि हमारे यहाँ पर कोई मांस नहीं खा सकता। कोई मांस की दुकान नहीं है और न कोई बाहर से ला सकता है। अभी भी ऐसे गाँव हैं जहाँ पर सतयुग की बहार देखी जा सकती है।

मैं पहले जिस गाँव की बात कर रहा था वह गाँव बहुत समृद्ध था। मकान भी बड़े-बड़े बने हुए थे। प्राय: घरों में ट्रेक्टर, ट्रेलर, भैंसे थीं। क्यों हुआ ऐसा? क्योंकि उन्होंने शराब में पैसे नहीं बहाए। वे सुखी थे, संपन्न थे, समृद्ध थे। शराब के प्रति कुछ लोगों की सोच है कि 'ऊँचे लोगों की ऊँची पहचान।' हकीकत में पैसों से वे ऊँचे हो गए होंगे, किंतु विचारों से, आध्यात्मिक भावों से उनकी ऊँचाई को नहीं मापा जा सकता। उनकी ऊँचाई होगी ही नहीं तो क्या मापेंगे!

जैन समाज, सभ्य समाज है। शालीन समाज है। सात्विक समाज है, किंतु उसमें भी कहीं-कहीं नशे ने दस्तक दे दी है। नशा कोई भी हो, नशा ही होता है। चाहे गुटखा हो या पान-पराग।

अमेरिका में साढ़े तेरह हजार लोगों पर एक सर्वे किया गया। उस सर्वे में 50 प्रतिशत अपराधी ऐसे मिले जिनमें एक समानता थी कि उनके अपराध का कारण नशा था। एक प्रकार के लोगों का कहना था कि नशे में बेभान होकर अपराध कर दिए या नशे के साधनों को पाने के लिए अपराध किए। लगभग 50 प्रतिशत लोग नशे के कारण अपराधी बने। 50 वर्षों का आँकड़ा मिलाया जाए तो पता चलेगा कि 50 वर्ष पहले भारत में कितने अपराध होते थे और आज कितने अपराध हो रहे हैं?

अपराध को हटाने का प्रयत्न किया जा रहा है। अपराधियों को जेल में ठूँसा जा रहा है, लेकिन अपराध के मूल कारण पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। नशा, नाश का द्वार है। जब तक नशे की स्थितियाँ बनी रहेंगी, तब तक अपराध को कम नहीं किया जा सकता। नशे के साथ अपराध का चोली-दामन का संबंध है।

एक जैन भाई को हेरोइन की लत थी। गुरुदेव के रहते हुए, मैंने उदयपुर में नशे पर व्याख्यान दिया था। वह भाई ऊपर आया और बोला, गुरुदेव! आपने सही चित्रण किया। मैं भुक्तभोगी हूँ। मुझे नशा करने के लिए पैसे की जरूरत होती थी। बिना हेरोइन के अँतड़ियां खिंच जाती थी। बिना हेरोइन के नहीं रह पाता था। उसने ही बताया कि एक बार मेरे पास हेरोइन के लिए पैसा नहीं था तो मैं माता से पैसा लेने के लिए रिवॉल्वर निकालकर उसके सीने

पर चढ़ गया और कहा पैसे निकालो। उस व्यक्ति ने अपने मुँह से यह बात कही। हालांकि बाद वह पूना में नशा मुक्ति केंद्र में रहने लगा। उसने यह भी बताया कि जब तक नशा मुक्ति केंद्र में रहता हूँ, तब तक ऐसी बात दिमाग में नहीं आती क्योंकि वहाँ पर वैसा ही अभ्यास कराया जाता है।

उस व्यक्ति की बात से आप जान सकते हैं कि नशे की लत कितनी बुरी होती है। केवल शराब की ही नहीं, सिगरेट-तंबाकू, पान पराग की लत भी बुरी ही है। हजारों-लाखों लोगों के मुँह खराब हो गए। जहाँ तक मुझे स्मृति में है नशे की वजह से पाँच लाख लोग रोटी नहीं चबा पा रहे हैं। रोटी नहीं खा पा रहे हैं। चम्मच से लिक्विड लेकर काम चलाते हैं। मुँह केवल एक अंगुल जितना ही खुलता है। हमारा मुँह इतना खुलता है कि चारों अंगुलियां अंदर चली जाएं। शायद उसी के अनुसार मुँहपत्ती का माप बनाया गया है। मुँहपत्ती से मुँह बंद रहेगा तो तीव्र गति से आने वाली वायु सीधी नहीं निकलेगी। और भी कुछ कारण रहे होंगे, किंतु मेरी दृष्टि में यह भी एक कारण होगा।

चार अंगुल मुँह खुलता है तो कवल आराम से लिया जा सकता है, किंतु जब मुँह की मांसपेशियाँ इनती सख्त हो जाती हैं कि बड़ी मुश्किल से एक अंगुल ही मुँह खुल रहा हो तो खाना कैसे खाया जाएगा। बहुत से लोगों ने ऑपरेशन करवाए, किंतु हालत कितनी सुधरी, मैं नहीं कह सकता। गालों में ग्लेज होता है वह कम पड़ जाता है। इस कारण से मुँह पूरा नहीं खुल पाता। यह जानते हुए भी लोग धड़ल्ले से नशीली वस्तुओं का सेवन कर रहे हैं। कहीं-कहीं सरकारों ने बंदिश लगा दी, तो गैर कानूनी तरीके से उसका उपयोग करके काम चलाते हैं। व्यक्ति सोचता है कि जीवन बरबाद हो जाए, किंतु नशा नहीं छूटना चाहिए। नशेड़ी मस्ती में बोलता है-

जरा सी और पिला दे भंग, कि देख के आया रंग,
मेरा मन डोला, जय बम भोला।

(श्रोतागण हँसने लगे)

क्या बात है, आप हँस रहे हो?

भंग पीना एक बात है, किंतु जब उसकी लहरें आती हैं, तब मालूम पड़ता है कि भंग का क्या असर होता है। एक घटना है।

होली के दिन लोगों ने मसखरी करते हुए एक बहन को भंग पिला दी। उस बहन ने पहले कभी भंग पी नहीं थी। लोगों ने कहा, भाभी जी! ठंडाई है, पी लो। भाभी जी ने ठंडाई समझकर पी ली। उनको लहरें आनी लगीं। वह घर पर गई। उसके एक छोटा बच्चा था। वह रोने लगा तो उसे गोद में लेकर स्तनपान कराने लगीं। भंग के लहर में उसने एक कील लेकर बच्चे के माथे पर ठोक दी। यह नशे की बात है।

भंग माँगे भूँगड़ा, गांजो माँगे घी,
दारू मांगे जूतियां, मन भाए तो पी।

भंग पीनेवालों का नशा भूँगड़ों से कम हो जाता है। गाँजा पीनेवालों का नशा घी पीने से दूर हो जाता है और शराब का नशा तब तक नहीं उतरता जब तक पीनेवाले को जूते नहीं मारे जाएं। सबसे बड़ी बात ये है कि नशीले पदार्थ मांसपेशियों को शिथिल करते हैं। हमारे नर्वस सिस्टम को छिन्न-भिन्न कर देते हैं। उसमें एक बार उत्तेजना आती है, किंतु बाद में शिथिल हो जाती है।

पूज्य गुरुदेव भीनासर विराज रहे थे। उस समय अखबार में एक समाचार निकला कि छिपकली के पूँछ को काटकर, उसको सुखाकर, पाउडर बनाकर गुटखे के साथ मिलाया जाता है। उसमें उक्त पाउडर मिलाने का कारण बताया कि जिससे व्यक्ति के भीतर उसकी तलब बनी रहे कि और खाऊँ और खाऊँ। कुछ समय पूर्व नागपुर में भी ऐसा गुटखा पकड़ा गया जिसमें कीटनाशक दवाइयों का प्रयोग किया गया था। वह काफी समय तक चर्चा का विषय था।

बंधुओ! विचार करना। नशा, नाश का द्वार है। यह जीवन, परिवार, समाज एवं राष्ट्र को हानि पहुँचाता है।

अभी बात हुई थी द्वारिका के विनाश के कारण की। द्वारिका के विनाश के तीन कारणों में शराब को एक प्रधान कारण बताया गया। यह जानकर कृष्ण वासुदेव ने द्वारिका में शराब लाना और पीना प्रतिबंधित कर दिया। यही नहीं पहले से उपलब्ध शराब को जंगल में फिंकवाया।

दूसरी बात उस समय की है जब जाली, मयाली, उवयाली आदि राजकुमार दीक्षित हो रहे थे। कृष्ण वासुदेव अनुज्ञा दे रहे थे। उस समय उनका मन उद्विग्न हो गया। उन्होंने कहा, भगवान! ये छोटे-छोटे राजकुमार आपकी

वाणी सुनकर वैराग भाव से दीक्षित हो रहे हैं। मैं इतना भारीकर्मा जीव हूँ कि मेरे भीतर दीक्षा के भाव पैदा नहीं हो रहे हैं। उन्होंने भगवान से इसका कारण पूछा।

आप विचार करें, कृष्ण वासुदेव का मन उद्विग्न हो रहा था, मचल रहा था। उनका मन खिलौने रूप धन-संपत्ति या पद-प्रतिष्ठा के लिए नहीं मचल रहा था। उनका मन मचल रहा था कि मेरे भीतर वैराग क्यों नहीं जगता और वैराग जग जाता है तो दिशा ही बदल जाती है।

अमरचंद जी पामेचा (पिपलिया मंडी) की भावना दीक्षा लेने की बनी। कस्तूर बाई पामेचा भी साथ में दीक्षा लेने के लिए तैयार हुईं। समरथ जी दो साल के रहे होंगे। परिवारवालों ने रुकावट पैदा करने के लिए कहा कि बच्चे को कौन संभालेगा। पहले मारवाड़ बगड़ी की निवासी, बाद में रायपुर (छत्तीसगढ़) में रहने वाली लक्ष्मीबाई जी धाड़ीवाल ने कहा कि परिवारवाले नहीं संभालेंगे तो मैं संभाल लूँगी। उन्होंने कहा कि परिवारवालों के नहीं संभालने पर मेरी जिम्मेदारी रहेगी किंतु दीक्षा में अंतराय नहीं होना चाहिए। चंदनबाला जी की उम्र उस समय सात साल की रही होगी। चंदनबाला जी और समरथ जी को छोड़कर वे दोनों दीक्षित हुए।

सुमित मुनि जी म.सा. आपके सामने बैठे हुए हैं। इनकी दीक्षा से पूर्व पूरे भारत में ही नहीं, विदेश में भी आवाज उठ गई कि छोटी बच्ची को छोड़कर दीक्षा कैसे ले रहे हैं। मानव अधिकार आयोग कहने लगा कि यह दीक्षा कैसे हो सकती है। रात को डेढ़-दो बजे तक पुलिसवाले हमारे पास बैठे रहे। हमने कहा, हम परिवार की अनुमति के बिना दीक्षा नहीं देते हैं। पता नहीं कौन-कौन-सी मीडिया सुबह उपस्थिति हो गई। मीडियावाले खड़े थे। संघवालों ने उनसे पहले ही कह दिया कि आपको अंदर प्रवेश की अनुमति नहीं देंगे। आप बाहर खड़े रह सकते हैं। सभी यह जानने को उत्सुक थे कि भीतर क्या हो रहा। जब लोग बाहर निकले तब उनसे पूछा कि क्या हुआ तो लोगों ने कहा, जो होना था हो गया।

वैराग्य, कपूर की डली नहीं है कि हवा लगते ही उड़ जाए। वैराग्य हल्दी का रंग नहीं है जो थोड़ी धूप लगे और उड़ जाए। वैराग को किरमची रंग बताया गया है। इमली के भीतर जो बीज होता है, उसको कितनी बार ही रगड़ा

जाय, उसका रंग नहीं जाता है। वैसा ही वैराग्य होता है।

जयश्री जी म.सा. आपके सामने विराज रही हैं। धर्मेश जी धोका से इनकी शादी हुई थी। इन्होंने कहा कि मेरी तो इच्छा दीक्षा लेने की थी, किंतु घरवालों के सामने मुँह खुल नहीं पाया। मुँह खुल नहीं पाया, यानी संकोच रह गया। धर्मेश जी कहने लगे कि भावना तो मेरी भी थी। अब क्या हो गया, अब ही सहीं दोनों गुरुदेव के पास आए और कहा, गुरुदेव! शीलव्रत की प्रतिज्ञा करवा दीजिए। गुरुदेव ने कहा, ठहरो! क्या बात है? उनको मालूम था कि नई-नई शादी हुई है। वे जानना चाहते थे कि अभी शीलव्रत क्यों ले रहे हैं, क्या कारण है। कहीं भावुकता तो नहीं है।

गुरुदेव ने पूछा तो उन्होंने बताया कि हमारी भावना दीक्षा की है, इसलिए शीलव्रत स्वीकार करना चाहते हैं। ज्यादा जानकारी करनी हो तो जयश्री जी म.सा. से कर सकते हैं। मैं तो सुनी हुई बात बता रहा हूँ। उनकी अनुभूति है और अनुभूति की बात अनुभूति की होती है। वैराग्य कब-कैसे आता है, कौन-से रास्ते से आता है यह मालूम नहीं पड़ता, किंतु कुछ अलग-अलग लगने लगता है।

संसार खारो लागे, वैराग प्यारो लागे,
म्हारे छोटे से वैरागी ने, संसार खारो लागे।।

वैराग्य का भाव आने पर संसार में रुकने की इच्छा नहीं होती। संसार सुहाता नहीं। मन गमता नहीं। मन को अच्छा नहीं लगता। संसार के किसी भी कार्य में हाथ डालते हुए वैरागी को लगता है कि ओहो, मैं कितने जीवों की घात कर रहा हूँ। मेरे द्वारा कितने जीवों की घात हो रही है। अपने जीवन को चलाने के लिए, परिवार को चलाने के लिए प्रतिदिन असंख्येय जीवों की घात करनी होती है। पानी की एक बूँद में असंख्येय जीव होने की बात बताई जाती है। पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय की हिंसा होती है। यदि लीलन-फूलन की बात करें तो अनंतानंत जीवों की घात होती है।

'एक जिह्वा रे कारणे कोई देवे नरक में नींव'

यदि आसक्ति जुड़ जाएगी तो नरक का द्वार स्वागत करेगा। कहेगा कि 'आइए, आपका स्वागत है।' जानेवाले बड़े आराम से जाएंगे कि नरक जा रहा

हूँ, किंतु वहाँ जाने के बाद जब ऊपर से चोट पड़ेगी तो बोलेंगे- **'म्हाने अबके बचा लो जिनराज, दूजो तो किणरो आसरो।'**

ऊपर से चोट पड़ती है तो जीव भगवान को याद करता है। कहता है कि भगवन्! मुझे बचा लो। एक बार बचा लो। व्यक्ति विचार करता है कि ''मुझे गुरुदेव ने, म.सा. ने उपदेश दिया था, समझाया था, किंतु मैं समझा नहीं। उनकी बातें समझ नहीं पाया।'' मद्य-मांस का सेवन दुर्गति का हेतु होता है, उसका सेवन नहीं करना चाहिए। रौद्र ध्यान में नहीं जाना चाहिए। रौद्र ध्यान में जाने से नरक की स्थितियाँ मिलेंगी। वहाँ जाने के बाद जब चोट पड़ती है तो समझ में आता है कि मैं कहाँ आ गया! वह सोचता है कि यह दुख कहाँ तक पालता रहूंगा, किंतु किए हुए पापों का परिणाम भोगना ही पड़ेगा।

दिया वा राओ वा सुत्ते वा जागरमाणे वा
एगओ वा परिसागओ वा

चाहे दिन में, रात में, एकांत में, चाहे सभी के बीच में या सोते-जागते हुए जो भी कर्म किए हैं उनका परिणाम भोगना ही पड़ेगा।

कृष्ण वासुदेव उद्विग्न हो रहे थे कि मेरे भीतर वैराग्य क्यों नहीं जग रहा है। हम भी विचार करें। अपने आपको टटोलें कि रे जीव! तुमने कितने कठोर कर्मों का बंधन किया है। पहले हमारे संत और सतियां जी गीत गाया करते थे-

'दुरतनो जी तेरा काठिया जी...'

तेरा काठिया मतलब, तेरह प्रकार से चिकने कर्म बाँध लिए। ऐसे चिकने कर्म कब बाँध लिए कि मनुष्य जीवन पाकर, पाँचों इंद्रियाँ प्राप्त होने पर साथ-साथ धर्म मिल जाने पर भी धर्म में जो उद्यम होना चाहिए, जो पुरुषार्थ होना चाहिए, वह नहीं हो रहा है। इसलिए चिंतन करने की बात है, आत्म अनुप्रेक्षा की बात है कि रे जीव! तुमने कौनसे कांठिए, कर्म बांधे हैं जो तुम्हारी आत्मा जागृत नहीं हो पा रही है। ऐसा बार-बार चिंतन-अनुचिंतन करेंगे तो आत्मा जागृत हो सकती है।

जैसे चूल्हे में पड़ी हुई अग्नि (खीरे) को बार-बार फूँकनी से फूँक लगाने पर अग्नि प्रज्वलित हो जाती है, वैसे ही बार-बार चिंतन करने से भीतर सोई हुई शक्ति, वैराग्य की शक्ति जागृत हो पाएगी।

जाली, मयाली, उवयाली ने दीक्षा ली। नेपथ्य में मानों गीत गाया जा रहा हो– 'वैरागी आए, दीक्षा लेने के उत्कृष्ट भाव से'। अरिष्टनेमि भगवान ने उनको दीक्षित, मुंडित और शिक्षित किया। यह देखकर कृष्ण वासुदेव उदास हो गए, उद्विग्न हो गए। उनका मन मुरझा रहा था। अरिष्टनेमि भगवान ने उनसे कहा, हे कृष्ण! जितने भी वासुदेव होते हैं वे निदानकृत होते हैं। यानी उनके पैर में फेविकोल लगा रहता है। उनके भावों में फेविकोल लगा रहता है। वे कितने ही प्रयत्न कर लें, किंतु दीक्षा स्वीकार करने में समर्थ नहीं हो पाते। अरिष्टनेमि भगवान ने कृष्ण वासुदेव से उनके भविष्य का कथन करते हुए कहा कि तुम उद्विग्न मत बनो। आने वाले समय में तुम तीर्थंकर बनोगे। तीर्थ की स्थापना करोगे।

यह बात सुनकर कृष्ण वासुदेव को बड़ा हर्ष हुआ। वे प्रसन्न हुए। उनकी भुजाएं फड़फड़ाने लगीं। हर्ष में भी आदमी की भुजाएं फड़फड़ाती हैं और गर्व होने पर भी फड़फड़ाती हैं। कृष्ण वासुदेव ने चारित्र धर्म की महत्ता को जानकर विचार किया कि मुझे इस धर्म की दलाली करनी चाहिए।

'करी धर्म दलाली, गोत्र तीर्थंकर बांध्यो मुरार जी।'

उन्होंने पूरी द्वारिका नगरी में उद्घोषणा करवाई कि कोई भी व्यक्ति यदि अरिष्टनेमि भगवान के चरणों में दीक्षित होना चाहता है, तो हो सकता है। उसकी हर तकलीफ मैं दूर करूंगा। यदि किसी को लग रहा हो कि मेरे बुजुर्ग माता-पिता की सेवा कौन करेगा, तो मैं उनकी सेवा करने के लिए तैयार हूँ। यदि कोई अपने छोटे बच्चों को देखकर दीक्षा नहीं ले पा रहा है, तो उसकी व्यवस्था मैं करूंगा। व्यवस्था को लेकर कोई दीक्षा से वंचित मत रहे। इस प्रकार की उद्घोषणा सुनकर बहुत से लोगों ने दीक्षा ले ली। इस प्रकार से कृष्ण वासुदेव ने महत्तम धर्म की दलाली की।

'करी धर्म दलाली, गोत्र तीर्थंकर बांध्यो मुरार जी।'

भाइयो! आप भी अपना दिल खोल लें। दीक्षा नहीं ले सकते तो अनुमोदना का लाभ तो लें। अनुमोदन में तो सहयोगी बनें। एक बार जोर से इस कड़ी को दुहराना है–

'करी धर्म दलाली, गोत्र तीर्थंकर बांध्यो मुरार जी।'

(श्रोतागण दुहराने लगे)

मजा नहीं आया। तपस्या वालों की तपस्या होगी, किंतु ज्यादातर लोगों का पारणा हो गया होगा, फिर बोलने में क्या दिक्कत है? यदि किसी के चलाए चल रहे हो तो मत बोलना। यदि पत्नी के चलाए चल रहे हो तो मत बोलना। बहनें किसी के चलाने से चल रही हों तो मत बोलें। जो स्वयं निर्णय करते हैं वे बोलने में पीछे नहीं रहें।

'करी धर्म दलाली, गोत्र तीर्थंकर बांध्यो मुरार जी।'

(श्रोतागण भी उच्चतर स्वर में गाने लगे)

पहले ही बोल देते तो इतने बोल क्यों सुनने पड़ते। आप बोलोगे, म.सा.! आपके मुँह से सुनने का मौका कब मिलेगा। मैं तो वैसे ही बहुत सुनाता हूँ, किंतु सुना हुआ सार्थक करेंगे तो फायदा होगा।

महेश जी क्या विकल्प बोलते हैं?

साधु बन सकें तो बनें, नहीं तो अच्छे श्रावक बनें। आपके सामने दो ऑप्शन हैं, आप कौन-सा स्वीकार करेंगे? हम लोगों को नियम दिलाते हैं तो पूछते हैं कि रोजाना सामायिक करनी है या सप्ताह में एक? लोग कहते हैं, म.सा.! सप्ताह में एक। आपको कौन-सा ऑप्शन स्वीकार करना है? भीतर बोलने की क्षमता होनी चाहिए कि म.सा! दो-तीन दिन नहीं, मैं जिंदगीभर रोजाना सामायिक करूंगा।

'कायरा रो कांपे कलेजो, माता मोरी ए,
शूरां ने लागे वचन ताजणो'

जो वीर होता है उसको वाणी लग जाती है। धन्ना जी को कैसे लगी वाणी!

'ले आज बता दूँ, मेरी माँ ने कैसा दूध पिलाया।'

बोतल का दूध पिलाया, डेयरी का दूध पिलाया, बकरी का दूध पिलाया या भैंस का दूध पिलाया? कौन-सा दूध पिलाया बताओ। आप कौन-सा दूध पिला रहे हैं अपने बच्चे को? बोतल हाथ में दे देने से बोतल के संस्कार पड़ गए। पानी पीएगा तो बोतल से और शराब पीएगा तो भी बोतल से। धड़ल्ले से पी रहे हो। कोका कोला, थम्सअप, पेप्सी। पता नहीं क्या-क्या नाम

है। जो भी नाम हो मुझे पूरा नहीं पता। पता नहीं क्या-क्या पी रहे हैं। ये शरीर के लिए हानिकारक हैं। आप भी जान रहे हैं कि ये शरीर के लिए घातक हैं, फिर भी पी रहे हैं। लोगों को लगता है कि इससे प्यास बुझ जाती है और एक बार स्फूर्ति आ जाती है।

बंधुओ! यह पर्व पर्युषण आत्मा का जागरण करने के लिए है। आत्मा को जगाने के लिए है। अपने आत्मबोध को व्याप्त करने के लिए है। अपनी बोधि को आरोग्य बनाने के लिए है। आप बोलते हैं, '**आरुग्गबोहिलाभं**' अर्थात् मेरी बोधि- मेरी समकित, मेरा ज्ञान, मेरा चारित्र, निरोग हो। शंका-कांक्षा आदि पैदा नहीं हो। ऐसा दृढ़ अपने आपको बनाएंगे तो कदम स्वत: ही आगे बढ़ेंगे। अपनी धर्म चेतना को जागृत करेंगे, ज्ञान चेतना को जागृत करेंगे तो धन्य-धन्य बनेंगे।

'निज ज्ञान चेतना जागृत करनी है चातुर्मास में...'

पृथ्वीकाय, अप्काय, वायुकाय, तेउकाय, वनस्पतिकाय में रहते हुए अँधेरे में रहे। अनादिकाल से अँधेरे में रहे, किंतु मनुष्य जन्म मिला तो तेरा-मेरा करने में बहुत-सा समय निकाल दिया। हमें मनुष्य जन्म मिला, तीर्थंकर देवों का शासन मिला। ऐसे समय में भी यदि ज्ञान चेतना जागृत नहीं हो पाई तो पता नहीं आगे किस जन्म में जागृत हो पाएगी। आने वाला जन्म यदि मनुष्य का मिल भी गया किंतु किसी कसाई के घर में जन्म हो गया, तो वहाँ उस वातावरण में कट-कट-कट करते रहोगे। उस स्थिति में कर्म बँधेंगे या हलके होंगे?

(श्रोतागण बोले- कर्म बँधेंगे)

मौका आज का है, मौका अभी का है, मौका वर्तमान का है। इस समय चूक गए तो भावी की आशा छोड़ दें। गोद वाले का तो ध्यान ही नहीं है, पेट वाले की आश कर रहे हैं। जो गोद में है पहले उसकी सुरक्षा कर लें। जो मौजूद है उसका तो लाभ उठा लें। अनादिकाल से अंधकार में समय बीता है। बड़ी मुश्किल से प्रकाश पाया है। बड़ी मुश्किल से रोशनी मिली है। इस रोशनी में-

'धर्म री गंगा में हाथ धोय लेनी रे,
चानणो हुयो है मोती पोय लेनी रे'

कमल जी हीरावत! कमल जी हीरावत! क्या हुआ कम सुनते हो क्या? हाँ! आपको ही बोल रहा हूँ। कौन-से मोती पिरोने हैं? मन रूपी मोती को ज्ञान के धागे में पिरोना है। मन रूपी मोती को ज्ञान के धागे में पिरो लिया तो कल्याण ही कल्याण है। आनंद ही आनंद है। फिर तो पाँचों अँगुलियां घी में होंगी। आप बोलोगे, म.सा.! अभी घी की बात मत करो। संवत्सरी आ रही है। आज पाँचवाँ दिन है। तीन दिन बाद संवत्सरी है। (आठवें दिन संवत्सरी है।)

बंधुओ! यह सुंदर अवसर आया है। **'अपूर्व अवसर एवो क्यारे आवशे?'** ऐसा अवसर मिलना दुर्लभ है। जो समय निकल गया वह हाथ में नहीं है किंतु वर्तमान अपने हाथ में है। वर्तमान को सुधार लिया तो भविष्य सुधर जाएगा। वर्तमान नहीं सुधरेगा तो भविष्य की आशा छोड़ दें।

'निज ज्ञान चेतना जागृत करनी है चातुर्मास में...।'

मेरा पुत्र, मेरी पत्नी, मेरा घर, मेरा परिवार, मेरा धन, मेरा वैभव करते हुए हमने कितनी तकरार की है। हम भूल गए हैं कि हमने मनुष्य जन्म प्राप्त किया है। कैसा उत्तम कुल प्राप्त हुआ है। इन सबको प्राप्त होने के बाद भी मदोन्मत्त हाथी की तरह कुपथ में चले जाएंगे तो कौन रक्षा करेगा? इसलिए-

'निज ज्ञान चेतना जागृत करनी है चातुर्मास में...'

ज्ञान चेतना जगने पर क्या बोलेंगे?

दीक्षा आप लीजिए, औरों को दिलवाइए,
जो भी लेते होंवे दीक्षा, उनका साथ दीजिए। दीक्षा...

देखा! आपने क्या बोला? आपने बोला दीक्षा आप लीजिए यानी दीक्षा आपको लेनी है। इसलिए मैं बोल रहा हूँ-

दीक्षा आप लीजिए, औरों को दिलवाइए,
जो भी लेते होंवे दीक्षा, उनका साथ दीजिए।

गोयल जी (पुष्पमुनि जी म.सा. के पोते) का क्या नाम है? कितनी बार बोलने पर दिल में बात चली जाएगी? अतुल जी पगारिया! कितनी बार बोलने से बात दिल में जाएगी? अशोक जी चंडालिया! ध्यान रखना, बाप का कर्जा बाकी पड़ा है और कर्जा रखकर जाना नहीं है। कमल जी तो पत्नी के कहने में हैं। मैंने देख लिया इनको कलकत्ता में खड़ा करके।

(किसी ने कहा– तिल में तेल नहीं है)

तिल में तो तेल है, किंतु घाणी काम की नहीं है।

आज का पच्चक्खाण जो करना है वह तो करना ही है, किंतु मैं अलग से एक पच्चक्खाण करवा रहा हूँ। आज 27 बार बोलना है कि 'मैं दीक्षा लूँगा, मैं दीक्षा लूँगा, मैं दीक्षा लूँगा।' दूसरा प्रश्न अपने आपसे पूछना है कि दीक्षा कब लेनी है? मेरी आवाज पहुँच रही है ना?

(श्रोतागण बोले– आ रही है)

बहनों को मेरी आवाज सुनाई नहीं दे रही है क्या?

(बहनें बोलीं– आवाज सुनाई दे रही है)

फिर भी वह आवाज नहीं है। पीछे वाली बहनों की आवाज नहीं आ रही है। घरवाले बैठे हैं क्या यहाँ पर? आज 27 बार बोलना है कि 'मैं दीक्षा लूँगी, मैं दीक्षा लूँगी, मैं दीक्षा लूँगी। फिर अपने आपसे पूछना कि कब लेनी है? यह आज का पच्चक्खाण है। याद रह जाएगा ना?

(श्रोतागण बोले– याद रह जाएगा)

करोड़ों की आमदनी नहीं भूलते, तो ये तो भूलोगे ही क्या। करोड़ों की आमदनी से भी ज्यादा यह महत्त्वपूर्ण है। 27 बार बोलना है कि मैं दीक्षा लूँगा और फिर पूछना कब लूँगा। आपकी भावना फले। इतना ही कहते हुए विराम ले लेता हूँ।

18 अगस्त, 2023

13

समभाव मुक्ति का मार्ग

धर्म जिनेश्वर गाऊँ रंगशुं, भंग म पड़शो हो प्रीत जिनेश्वर,
बीजो मन मंदिर आणुं नाहीं, ए अम कुलवट रीत जिनेश्वर।।
धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।
'सदा धर्म की करना रक्षा, उससे होगी निज अभिरक्षा।'

शब्द बहुत सामान्य है। शब्द हल्के-फुल्के हैं, किंतु बात गहरी है। 'सदा धर्म की करना रक्षा।' जिस समय अवसर सामने आता है उसी समय ज्ञात होता है कि धर्म की रक्षा करने में हम कितने तत्पर हैं। आज आपने अंतकृत दशा सूत्र के माध्यम से सेठ सुदर्शन की बात सुनी है। क्या श्रद्धा थी धर्म के प्रति उसकी। धर्म के प्रति कितनी दृढ़ आस्था थी उसकी। हर वर्ष पर्व पर्युषण के दिनों में सेठ सुदर्शन की चर्या को सुनते हैं। पढ़ते हैं। श्रवण करते हैं।

है पर्व पर्युषण जयकारी, जयकारी मंगलकारी,
हिंसा जो निश दिन करता था, पापों से गगरी भरता था।
वह अर्जुन था मालाकारी।। है पर्व...

जयकारी अर्थात् जय दिलानेवाला। मंगलकारी अर्थात् पापों को गलाने वाला। जब उत्तम पुरुषों का चारित्र सुनते हैं, उस पर विचार करते हैं तो अध्यवसाय निर्मल होते हैं। कर्मों की निर्जरा होती है। पाप गलते हैं। सेठ सुदर्शन की बात आपने सुनी कि माता-पिता की अनुमति प्राप्त करके वह भगवान की देशना श्रवण करने चले। व्यंग्य कसने वाले व्यंग्य कस रहे थे। ताना मारने वाले ताना मार रहे थे किंतु सुदर्शन को कोई फर्क नहीं पड़ रहा था कि लोग क्या बोल रहे हैं। लोगों के शब्दों पर ध्यान देने पर जीना हराम हो जाएगा।

लोग घोड़े पर चढ़े हुए पर भी हँसते हैं और पैदल चलने वाले पर भी।

संसार की चाल दुरंगी है। कोई प्रशंसा करने वाला मिलेगा तो कोई ताना मारनेवाला भी। यह चलता रहेगा। अपने आपको सुरक्षित करना है तो इन बातों को अपने दिमाग में नहीं भरना है। बातें करनेवाले बहुत होते हैं। जीवन जीनेवाले विरले होते हैं। सेठ सुदर्शन जीवन जीनेवाले थे। उनमें धर्म की श्रद्धा गहरी थी। उनकी धर्मनिष्ठा गहरी थी। कोई चलाकर देखे तो चले नहीं। कोई हिलाकर देखे तो हिले नहीं। ऐसी गहरी आस्था थी।

उनको अर्जुन के उपद्रव की जानकारी थी। प्राय: सब जानते थे कि नगर के बाहर अर्जुन निरंतर उपद्रव करता हुआ चल रहा है। सेठ सुदर्शन जैसे ही नगर से बाहर निकले, आगे बढ़े तो सामने अर्जुन आता हुआ नजर आया। अर्जुन, अपने शिकार को शिकंजे में लेने के लिए मुद्गर हिलाता हुआ, धम-धम करता हुआ आ रहा था। सेठ सुदर्शन ने उसको दूर से ही देखा। उसने आत्मरक्षा के लिए दौड़-भाग नहीं की, बल्कि शांत भावों से, प्रसन्न भावों से जमीन का परिमार्जन किया, आसन बिछाया और सागारी संथारा स्वीकार कर लिया।

उसकी आँखें खुली थी या बंद? उस समय आँखें बंद रही होंगी, किंतु अर्जुन को देख चुके थे। ऐसी स्थिति में मन में भय व्याप्त होना स्वाभाविक है, किंतु भय को जीतना कठिन नहीं है। भय जीता जाता है।

'मनवा अभय भाव विकसाले,
भय का भार उठा क्यों चलता, साँच को आँच नहीं है।
झूठी शान में है भय पलता, झूठ को श्रेय नहीं है।। मनवा...

हे मन! अभय की भावना को विकसा ले। भय का भार उठाकर क्यों चल रहा है। झूठी शान भय का कारण है, भय का हेतु है। ऊपर का दिखावा भय का हेतु है। सरल-स्पष्ट जीवन निर्भयता का सूचक है। सेठ सुदर्शन में कोई बनावटी बात नहीं थी। अर्जुन माली को आते हुए देखकर भी उनके मन में भय नहीं आया। जिन्होंने अभय साधना कर ली हो उसके पास भय कहाँ फटकेगा। अभी मैं बोल गया था-

'सदा धर्म की करना रक्षा, उससे होगी निज अभिरक्षा।'

सेठ सुदर्शन धर्म की रक्षा करते थे। धर्म की रक्षा का मतलब है, अपने मन को पवित्र बनाए रखते थे। मन को दूषित नहीं होने देते थे। फालतू की बातों से मन दूषित होता है। व्यर्थ की बातों से मन कमजोर होता है। आल-पंपाल की बातों से मन क्षुब्ध होता है। मन को शांत बनाए रखना, मन को समाधि में बनाए रखना धर्म का परिणाम है। यह धर्म की रक्षा है। क्या होगा मन के पवित्र होने से?

प्रत्येक व्यक्ति के भीतर भावनाओं के आधार पर एक औरा बनता है। औरा मतलब आभामंडल। जिसकी भावना जितनी पवित्र होती है, मन जितना पवित्र होता है, उसका आभामंडल उतना ही सघन होता है। महापुरुषों के फोटो में उनके मस्तिष्क के पीछे के भाग में एक गोल मंडल होता है, जिसको आभामंडल कहते हैं। आभामंडल में इतनी ताकत होती है कि कोई भी शस्त्र उसको भेदकर उसके शरीर को क्षत-विक्षत नहीं कर सकता। आभामंडल, सुरक्षा घेरा है। उसको जितना सशक्त रखा जाएगा उतनी ही रक्षा होने वाली है।

सेठ सुदर्शन सागारी संथारा ग्रहण करके बैठ गए। उनको कोई भय नहीं हुआ, कोई तनाव नहीं हुआ। वह घर से जिन विचारों से निकले थे, जिन भावों से चले थे उन्हीं शांत भावों से, शांत मुद्रा से भगवान महावीर को नमस्कार करके बैठ गए।

नमस्कार करने का मतलब क्या है?

आप बोलते हैं, '**तिक्खुत्तो, आयाहिणं, पयाहिणं।**' वंदना क्यों की जाती है?

इसके बहुत सारे उत्तर होंगे। अपने आपको परमात्मा से जोड़ने का यह सूत्र है। जिनको वंदन किया जा रहा है उनके साथ संबंध जुड़ने की प्रक्रिया है। तिक्खुतो आयाहिणं बोलते हुए पयाहिणं अर्थात् जो प्रदक्षिणा दी जाती है उसका अर्थ है, मैं आपसे संबंध जोड़ रहा हूँ।

सेठ सुदर्शन ने भगवान महावीर से संबंध जोड़ लिया। उन्हें विश्वास था कि भगवान महावीर मेरे साथ हैं, फिर भय किस बात का। ऐसा विश्वास आपको रहता है या नहीं, मैं नहीं कह सकता।

भगवान से संबंध जोड़ने के कारण मुद्गरपाणि यक्ष, सेठ सुदर्शन का

कुछ भी बिगाड़ करने में समर्थ नहीं हो पाया। अर्जुन माली ने मुद्गर घुमाकर जोर से पटकने की कोशिश की, किंतु उसका हाथ ऊपर ही स्तंभित रह गया। हाथ नीचे नहीं आया। इससे स्पष्ट है कि सात्विक शक्ति के सामने तामसिक शक्ति कभी टिक नहीं पाती।

'धर्मी मात कभी न पाता, जब भी पाता वह जय पाता।'

धर्मी कभी भी मात नहीं खाता। किसी की हिम्मत नहीं है कि उसको पराजित कर दे। यदि कभी वह पराजित होता है तो स्वयं से ही। उसका मन विचलित हो जाए तो वह पराजित हो जाएगा। मन कमजोर होने का कारण है भीतर की कमजोरियाँ। भीतर कमजोरी नहीं है तो मन विचलित नहीं हो सकता। मन श्रद्धा से सुदृढ़ बना रहेगा। भक्तामर स्तोत्र में बताया गया है–

'कल्पान्तकाल-मरुता चलिताचलेन
किं मन्दराद्रि-शिखरं चलितं कदाचित्'

कल्पांत काल की हवा भी चले तो वह उस श्रद्धाशील मन को विचलित नहीं कर पाएगी। भगवान ऋषभदेव के लिए यह बात कही गई कि मेरु पर्वत हिल जाए, किंतु भगवान ऋषभदेव का दिल नहीं हिल सकता। अर्थात् मन इतना सशक्त हो सकता है।

मन सशक्त कैसे होता है? सत्यमय जीवन जीने से सशक्त होता है। सत्य से जिन्होंने जीवन जीया है उनका मन अडोल रहेगा, निष्प्रकंप रहेगा। कितनी भी बाधाएं आ जाएं, कल्पांत काल की हवाएं चल जाएं, तूफान आ जाए, भूकंप आ जाए उसका कुछ भी बिगाड़ होने वाला नहीं है। हमारा मन चंचल और चपल बन जाता है, क्योंकि हमने धर्म की खाल ओढ़ी है। धर्म का लबादा ओढ़ा है, धर्म को जीया नहीं है। बात बहुत छोटी सी है।

अभी आप सुन गए मुनि श्री घासीलाल जी म.सा. के बारे में। उनको मुनि श्री गणेशलाल जी म.सा. से ईर्ष्या हो गई। ईर्ष्या क्यों हो गई? उनकी आकांक्षा उनको प्रेरित कर रही थी। आकांक्षा अतृप्त होने पर व्यक्ति सिरफिरा हो जाता है। सही दिमाग भी बिगड़ जाता है। विकृत हो जाता है। वैसा व्यक्ति किसी बात को सही तरह से स्वीकार नहीं कर पाता। श्री घासीलाल जी म. सा. ने भी रोड़े अटकाने शुरू कर दिए। वे हर व्यवस्था में बाधा पहुँचाने लगे।

गुरुदेव के समय भी ऐसा प्रसंग बना था। जब उन्होंने मुनिप्रवर और युवाचार्य की घोषणा की तो उस समय भी बाधाएं खड़ी होने लगी। व्यवस्था में सहयोग नहीं करने की बात होने लगी। यह स्वाभाविक है। अपने मन के विपरीत बात को सहन करने की क्षमता नहीं होने पर मन विपरीत चलने लगता है। मन की गति को विरले ही समझ पाते हैं। जब तक अपने अनुसार अनुकूलताएं मिलती रहती हैं, तब तक सबकुछ अच्छा चलता रहता है। मन के प्रतिकूल कुछ हो जाने पर मन को स्थिर रख पाना बहुत टेढ़ी खीर है। ऐसी मन:स्थिति से कभी उन्नति नहीं होगी, कभी प्रगति नहीं होगी।

आज घर, परिवार, संघ, समाज हर जगह यही मुद्दे ज्यादा मिलते हैं। समझदार की पोशाक में नासमझी पलती रहती है। सत्य की आड़ में असत्य पलता रहता है। सरलता की आड़ में माया का घेरा रहता है। निष्पृहता की ओट में लोभ-लालच पलता रहता है।

कंचन तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह।
मान बड़ाई ईर्ष्या, तुलसी दुर्लभ एह।।

लाखों-करोड़ों का दान देना आसान है, किंतु अपने बड़प्पन का त्याग करना दुर्लभ है। कोई सज्जन पुरुष ही बड़प्पन का त्याग कर पाता है। बड़प्पन की हुँकार मन में उठने से दूसरे का बिगाड़ हो या न हो, अपना बिगाड़ अवश्य होता है। इससे दूसरों की नजरों में गिरें या नहीं, किंतु अपनी नजर से बच पाना बहुत मुश्किल है। अपनी नजरों में गिरने वाला भी समझता तो है कि मैं अच्छा काम नहीं कर रहा हूँ किंतु अहंकारवश समझते हुए भी समझना नहीं चाहता।

श्री घासीलाल जी म.सा. नासमझ नहीं थे, किंतु जहाँ इगो उपस्थित हो जाता है, जहाँ बड़प्पन का भाव आ जाता है, वहाँ व्यक्ति की समझदारी काम नहीं आती। समझदारी, समझदारों के पास ही आती है। जो समझने के लिए तैयार होते हैं, समझदारी उन्हीं के काम की है। जिसको समझना ही नहीं है वह समझेगा नहीं।

साथियो! सेठ सुदर्शन पर विचार करें। उनके मन में कोई कुंठा नहीं थी। न मृत्यु का भय ही था, क्योंकि उन्होंने परमात्मा से नाता जोड़ लिया था।

वह निर्भयता से बैठ गए। ऐसा बैठे, जैसे कुछ हुआ ही नहीं हो। कुछ घटा ही नहीं हो। ऐसी दृढ़ता धर्म से ही पैदा होती है। धर्म श्रद्धा अचूक है, किंतु इस बात को समझे कौन। जब तक मन स्वस्थ नहीं होगा, तब तक ऐसी समझ पैदा नहीं हो पाएगा। जिसका मन स्वस्थ होगा, वही समझ पाएगा कि धर्म श्रद्धा क्या होती है।

जैसे एक म्यान में दो तलवारें नहीं रहतीं, वैसे ही कुंठा और पवित्रता का एक साथ रहना मुश्किल है, बहुत कठिन है। दोनों में से किसी एक को चुनना होगा। कुंठा को चुनना है तो उसे चुनो, यदि पवित्रता का चयन करना है तो कुंठा को विदाई देनी पड़ेगी। दोनों को एक साथ लेकर नहीं चला जा सकता।

सेठ सुदर्शन शांत भावों से अपनी आत्मलीनता, आत्मरमणता में लगे हुए थे। अर्जुन की ओर उनका ध्यान ही नहीं गया कि वह क्या कर रहा है।

हमारे साथ ऐसी घटना घट जाए तो मन कहने लगेगा– हे अब आया, अब आया मुद्गरपाणि यक्ष। हमारे सामने वह आकृति बनी रहेगी। सेठ सुदर्शन के सामने उसकी आकृति नहीं रही। वह अपने में लीन हो गया। बहुत ऊँची बात है, बहुत बड़ी बात है। यह काम इतना सरल नहीं है, किंतु असंभव भी नहीं है। अपने आपको साध लेने से कार्य सिद्ध होंगे। भावना पवित्र होगी तो सारे कार्य सिद्ध होंगे। सिद्धि मिलेगी। कुटिल भावों से सिद्धि नहीं मिलेगी। मिल भी गई तो टिक नहीं पाएगी। हम विचार करें कि सेठ सुदर्शन ने अपना जीवन कैसे जीया।

महासती श्री कर्णिका श्री जी म.सा. ने कहा कि जैनियों का खाना क्या है। मुझे नहीं मालूम कि पिज्जा, बरगर, चाउमिन क्या होते हैं।

'जैसा खाए अन्न, वैसा रहे मन'

किंतु आप कैसा अन्न खा रहे हैं? मन की पवित्रता भोजन के साथ भी जुड़ी हुई है, रहन-सहन के साथ जुड़ी हुई है। ऐसा नहीं है कि पवित्रता केवल मन में ही है।

सेठ सुदर्शन ने अपने जीवन को सात्विक बनाया। वह सदाचार में जीए। व्यर्थ के आल-पंपाल में मन की शक्ति को खर्च नहीं किया। उसी का

परिणाम था कि मुद्गरपाणि यक्ष उसका कुछ भी बिगाड़ पाने में समर्थ नहीं हुआ। उसका हाथ ऊपर का ऊपर रह गया। यक्ष ने जान लिया कि यहाँ मेरी दाल गलने वाली नहीं है। मेरी ताकत, सामने वाली ताकत से मुकाबला करने में समर्थ नहीं है। यक्ष मुद्गर ले वहाँ से भाग गया। उसके भागने से अर्जुन माली धड़ाम से नीचे गिर गया।

उपसर्ग समाप्त हुआ जानकर सेठ ने सागारी संथारा की पालना की। एकदम शांत भाव से। मन में गर्व नहीं हुआ कि आया था मेरे सामने। कोई ओछी बात नहीं की। पवित्र मन में ओछी बातें पैदा नहीं होती हैं।

उजड़ जमीन में घास पैदा होती है। फसल वाले खेत में फसल पैदा होती है। पवित्र मन, उत्तम फल, उत्तम फसल देने वाला होता है। शांत भाव से सेठ सुदर्शन ने अर्जुन माली को निहारा। आँखें चार हुईं। निरीह बना हुआ अर्जुन पूछता है कि आप कौन हो? सेठ सुदर्शन ने कहा, मैं श्रमणोपासक हूँ।

आप कैसा बोलते हैं- मत्थेण वंदामि, मैं शौकीन मुणोत, मैं नाहर सिंह राठौर। सेठ सुदर्शन श्रमणोपासक रूप का परिचय देता है कि मैं श्रमणों का उपासक हूँ, श्रमणों की पूजा करने वाला हूँ। यह गौरव नहीं, लघुता का भाव है। लोग आते हैं, मत्थेण वंदामि, म.सा.! मुझे पहचाना? क्या करेंगे म.सा. आपकी पहचान करके। अगर म.सा. ने पूछा लिया कि तुम अपने आपको जानते हो या नहीं तो... फिर तुम पहचान कर पाओगे कि मैं कौन हूँ। जिसको अपनी पहचान हो जाएगी उसको अपनी पहचान कराने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

सेठ सुदर्शन ने यह नहीं कहा कि मैं नगर का बहुत बड़ा सेठ हूँ। मेरे पास बहुत धन है, बहुत वैभव है। यह परिचय दिया कि मैं श्रमणों का उपासक हूँ। सेठ सुदर्शन का अर्जुन माली से संवाद हुआ।

अर्जुन माली- आप कहाँ जा रहे हैं?

सेठ- मैं भगवान महावीर की पर्युपासना के लिए जा रहा हूँ।

लोग आकर पूछते हैं- हर्षित मुनि जी म.सा.! गुरुदेव कहाँ विराज रहे हैं?

हर्षित मुनि जी- क्यों क्या काम है?

लोग– मुझे म.सा. से मिलना है।

हर्षित मुनि जी– मिलना है या पर्युपासना करनी है।

(श्रोतागण बोले– पर्युपासना करनी है)

आप बोलते हैं कि मुझे म.सा. से मिलना है। क्या करेंगे मिलकर। दूध में पानी मिलेगा तो क्या होगा?

(श्रोतागण बोले– पानी, दूध बन जाएगा)

दूध में पानी की तरह मिलना चाहिए या घी की तरह?

(श्रोतागण बोले– पानी की तरह)

यह बात सही है। आपको यह बात ही सही लगती है। एक लीटर दूध में दो लीटर पानी डाल देंगे तो क्या होगा?

(एक व्यक्ति ने कहा– तीन लीटर दूध हो जाएगा)

दूध तो तीन लीटर हो जाएगा, किंतु उसकी गुणवत्ता खत्म हो जाएगी। वह असली दूध का मुकाबला नहीं कर पाएगा। आप कह रहे हैं कि हम पानी की तरह मिलना चाहते हैं। उससे गुणवत्ता प्रभावित होगी। मिलना है तो शक्कर की तरह मिलो। न पानी की तरह, न घी की तरह। मिलना हो तो शक्कर की तरह मिलो। लोग बोलते हैं, मैं आया हूँ, म.सा. को मेरा नाम बता देना। तुम कौन–से युग के नवाब हो। परिचय गौरव से नहीं, लघुता में दिया जाना चाहिए। भावना में लघुता होनी चाहिए।

'लघुता से प्रभुता मिले, प्रभुता से प्रभु दूर।'

गौरव का प्रभुता से, प्रभु से, परमात्मा से मिलना नहीं होगा। लघुता में रहेंगे तो आपके भीतर ही परमात्मा प्रकट हो जाएंगे।

सेठ सुदर्शन के भीतर परमात्म शक्ति का जागरण हो गया था। आत्मशक्ति का जागरण हो गया था, जिससे यक्ष की तामसिक शक्ति वहाँ टिक नहीं पाई। वह वहाँ से भाग खड़ी हुई। अर्जुन माली, सेठ सुदर्शन से पूछता है, मैं भी आपके साथ चलूं। सेठ ने अनुमति दी। उसने ऐसा नहीं सोचा कि इसको साथ ले जाऊंगा तो मैं बदनाम हो जाऊंगा। इसने 1141 व्यक्तियों की घात की है। यदि इसे मैं साथ लेकर चलूंगा तो लोग कहेंगे, अरे! ये एक साथ चल रहे हैं। इनकी आपस में दोस्ती है, गुटबंदी है। लोग मेरा नाम भी इसके साथ लेंगे,

इसलिए कह देता हूँ कि भाई! तुझे जाना है तो जा, मैं तुम्हें अपने साथ नहीं ले जा सकता।

किसी व्यक्ति ने मर्डर किया। वह आपसे कहे कि मैं आपके साथ चलूँगा तो आप क्या करेंगे? आप उसको साथ ले चलेंगे क्या? कानून-कायदा की बात सोचेंगे। यह भी सोच सकते हैं कि पुलिस यह न सोच ले कि आपकी इसके साथ साँठ-गाँठ है। आप मर्डर करने वाले का सहयोग दे रहे हैं। ऐसा सोचेंगे या आप उसको साथ ले चलेंगे?

(श्रोतागण बोले- साथ नहीं ले चलेंगे)

अर्जुन का मन पवित्र हो चुका था। सुदर्शन उसको अपने साथ भगवान महावीर के पास ले गया। भगवान महावीर की देशना सुनी और क्या हो गया?

'संयम सुखकारी, तू धार सके तो धार...'

संयम ऐसे ही सुखकारी नहीं है। सारे पाप कर्मों से हलका हो जाने से मन शांत हो जाता है। समाधि भाव आ जाता है, इसलिए संयम सुखकारी है। अर्जुन माली ने साधु जीवन स्वीकार किया। भगवान महावीर से घूँटी पी ली। एक बात ध्यान में लेना, 'क्षमा बड़न को चाहिए...'

अर्जुन माली ने क्षमा धारण किया। किसी ने भी उसके साथ कैसा भी बरताव किया, उसने कोई प्रतिक्रिया नहीं की। यह विषय आप अंतगड सूत्र में सुन चुके हैं। क्षमा भाव की आराधना से वह छह महीने में सिद्ध-बुद्ध हो गया। उसने परिनिर्वाण को प्राप्त कर लिया। मोक्ष कठिन नहीं है, मुक्ति का रास्ता बहुत सरल है। हमने उस रास्ते को कठिन बना लिया है, हमारी नासमझी ने उसको कठिन बना दिया है।

एक-दो दिन पहले किसी ने पूछा था कि म.सा.! मुक्ति का सरल मार्ग क्या है? वर्तमान में मुक्ति का मार्ग क्या हो सकता है? मैंने जवाब दिया, **'समभावभावियप्पा लहइ मोक्खं न संदेहो'** यानी अपने आपको समभाव से भावित कर लो। जिसने अपने आपको समभाव से भावित कर लिया वह निश्चित रूप से मोक्ष में जाएगा।

'न नौ मण तेल हुए, न राधा नाचे।'

न हम अभी समभाव में जाने वाले हैं, न मोक्ष मिलनेवाला है। कोई पूछता है, म.सा.! इस काल में मोक्ष क्यों नहीं होता। 'थारे और म्हारे हाथ में ही है कांई, मोक्ष? मोक्ष जाने की बात करने वाले अपना चेहरा दर्पण में देख लें।

गाँव का एक युवक शहर में गया। शहर में एक जगह एक विज्ञापन का बोर्ड लगा हुआ था कि अविवाहित हैं तो पधारिए। वह वहाँ चला गया। अंदर गया तो दो रूम थे। उस पर लिखा हुआ था, आपको ग्रामीण कन्या चाहिए या शहरी? उसने सोचा कि गाँव में तो बहुत छोरियाँ हैं, सब देखी हुई हैं। शहर की लड़की कैसी है, शहर की लड़की से शादी करनी चाहिए, क्योंकि गाँव की लड़कियाँ पढ़ी-लिखी नहीं होती हैं, प्राय: नासमझ होती हैं। एक ऐसे ही प्रसंग को कव्वाली में इस प्रकार गाया गया है-

तकदीर हमारी ऐसी है, जो अनपढ़ बीवी मिल गई,
एक बार मैंने कहा...
अरे! तुमने क्या कहा?
एक बार मैंने कहा मेरी शेरवानी ले आओ।।
मूर्ख शेरवानी समझी नहीं, और सेर बानी ले आई।। तकदीर हमारी...
एक बार मैंने कहा...
अरे! तुमने क्या कहा?
एक बार मैंने कहा मेरा सूट उठाकर ले आओ
मूर्ख सूट समझी नहीं, सोट उठाकर ले आई।। तकदीर हमारी...

आपको तो कभी सोट नहीं पड़े। सोट तो नहीं पड़े होंगे, बेलन तो हाथ में ले लेती होगी। शौकीन जी! सही है ना? शौकीन जी को बाई जी ने बोल दिया कि अठाई क्यों करनी। उपाध्याय जी तो बोल देते हैं, उनका क्या जा रहा है। खबरदार अठाई की तो...

इन्होंने कह दिया, वा वा! पारणा कर लूँगा और इन्होंने तेला का पारणा कर लिया।

खैर, उस ग्रामीण युवक ने विचार किया कि शहरी लड़की को देख लेता हूँ। शहरी लड़की के लिए एक रूम में घुसा। उस रूम के आगे दो रूम

और थे। वहाँ लिखा था कि कैसी बीवी चाहिए, पढ़ी-लिखी या अनपढ़? वह पढ़ी-लिखी चाहता था अत: उस कक्ष में गया। उसमें दो कोटड़ियाँ और थीं, उन पर लिखा था कि जॉब वाली बीवी चाहिए या निकम्मी? एक लड़की का साल का पैकेज 50 लाख है और एक बेरोजगार है, निकम्मी है तो आप किसको लाना पसंद करेंगे?

(श्रोतागण बोले- पैकेज वाली को)

इसका मतलब? और लाने का विचार है? करोड़पति घर की लड़की को लाओगे तो उसके नखरे ज्यादा होंगे। आचार्य कांति ऋषि जी म. सा. (गुजराती) का प्रिय गीत है-

'काया करोड़पति नी डीकरी रे...'

यह काया करोड़ों की संपत्ति के बदले में मिली है। इसके नखरे आप देख ही रहे हैं। कभी कहती है, मुझे कमर दर्द हो रहा है, तो कभी सिर दर्द। कभी हाथ-पैर में दर्द तो कभी कहीं और दर्द होता रहता है। अब रोज उसको सहलाते रहो। कभी मालिश करो तो कभी कुछ। वैसे ही यदि पैकेज वाली लड़की लाओगे तो उसका गुलाम बनकर रहना पड़ेगा। वह तो ऑफिस जाएगी, ऑफिस से पहले आपको उसके लिए चाय-नाश्ता बनाना पड़ेगा।

(श्रोतागण हँसने लगे)

आप हँस रहे हो! इसमें हँसने की क्या बात हुई, यह तो घर का काम है। जैसे दो पहियों से गाड़ी चलती है, वैसे ही घर में मिलकर काम करेंगे तो गाड़ी चलेगी। ऐसा होना चाहिए कि तुम कमाकर ला रही हो तो मैं रसोई बना देता हूँ।

उस युवक ने सोचा कि बढ़िया है 50 लाख का पैकेज है, मैं तो आराम से रोटी खाऊंगा। वह दरवाजा खोलकर भीतर गया तो एक दर्पण लगा हुआ था। उसके नीचे लिखा हुआ था, अपना चेहरा देख लो।

मोक्ष किसको मिलेगा? क्रोध, अहंकार, इगो पालने वाले को मोक्ष मिलेगा क्या? अहंकार का पोषण करने वाले को मोक्ष मिलेगा क्या? उस दर्पण में पहले अपना चेहरा देखना कि मुझे मोक्ष मिलना चाहिए या नहीं? मोक्ष चाहते हैं तो मोक्ष मिलेगा, किंतु पहले अपनी तसवीर को सही बना लें। तसवीर

सही बन गई तो मोक्ष अगले कदम मिल जाएगी।

बाहुबली जी को कदम उठाने पर मोक्ष मिला। बाहुबली जी ने जैसे ही कदम उठाया उन्हें केवलज्ञान हो गया।

बंधुओ! पर्व पर्युषण दूसरे पर्वों से अलग है। दूसरे पर्वों में खाना-पीना, मौज-शौक उड़ाना होता है, किंतु यहाँ पर आत्मशांति की बात होती है। आत्मसाधना की बात होती है। ऐसे पर्व पर्युषण से अपनी आत्मा को पवित्र बनाएं। इस दिशा की ओर कदम बढ़ाएंगे तो धन्य बनेंगे।

बहुत से भाई-बहनों में तपस्याएँ चल रही हैं। कई भाई-बहन अलग से प्रत्याख्यान ले रहे हैं। महासती श्री मल्लिका श्री जी म.सा. की आज 41 की तपस्या है। महासती श्री सुहर्षा श्री जी म.सा. की आज 28 की, महासती श्री बीजरुचि श्री जी म.सा. की 29 की, श्री निर्वाण मुनि जी म.सा. की 6 की तपस्या है। और भी कई महासतियों की तपस्याएं चल रही हैं। किसी की 5 तो किसी की 6 है। तपस्या होना बड़ी बात नहीं है, बड़ी बात है अपने आपको समभाव में लगाना। अत: समभाव में अपने आपको लगाने का प्रयत्न करें। मोक्ष का मार्ग केवल तपस्या से नहीं, समभाव से प्राप्त होगा। तपस्या से समभाव में आएंगे तो मोक्ष की ओर बढ़ेंगे। बिना समभाव की तपस्या भी मोक्ष नहीं ले जाने वाली है। इसलिए समभाव का लक्ष्य बनाएंगे तो धन्य बनेंगे। इतना ही कहते हुए विराम ले लेता हूँ।

19 अगस्त, 2023

14

अपना संधान करना

धर्म जिनेश्वर गाऊँ रंगशुं, भंग म पड़शो हो प्रीत जिनेश्वर,
बीजो मन मंदिर आणुं नाहीं, ए अम कुलवट रीत जिनेश्वर।।
धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।

पर्व पर्युषण किनारे पर आ गए हैं। कुछ दिन पहले हमने पर्व पर्युषण की तैयारी की बात की, अब विदाई का समय आ गया है। विदाई का क्षण नजदीक आ गया है। जहाँ संबंध जुड़ता है, वहाँ से हटता भी है, टूटता भी है। सदा एक सी स्थिति नहीं रहती। यदि किसी का स्वागत किया तो उसको विदाई भी देनी होगी। चिंतनीय विषय है कि विदाई के क्षणों में अपने आपको कितना सशक्त बनाया!

पर्युषण महान है, करलो निज उत्थान है...
संदेशा यह देता हमको, कर लो निज संधान है।

संधान का एक अर्थ खोजना होता है और दूसरा अर्थ होता है जोड़ना। स्वयं की खोज करो और अपने आपसे स्वयं को जोड़ो। लगभग 20 वर्ष पहले इसी नीमच के जैन भवन में एक चर्चा चली थी। उस चर्चा का सार यह था कि बिना माइक के इतने लोग सुन कैसे लेते हैं?

मैंने कहा कि यह विश्वास मुझे भी नहीं होता था, किंतु निम्बाहेड़ा चातुर्मास (1996) में अधिवेशन के समय लगभग 30 हजार स्कवेयर फीट पांडाल भरा हुआ था, उस समय मैंने पूछा था कि मेरी आवाज आ रही है क्या? पीछे से एक व्यक्ति बोला कि आपकी आवाज आ रही है। आपकी बात समझ में आ रही है।

पूछने वाला पत्रकार था, उसने कहा वह आपका भक्त रहा होगा, इसलिए कह दिया कि आवाज आ रही है। मैंने कहा, बात तो आपकी ठीक है, किंतु वह मेरी आवाज सुनेगा तभी तो बोलेगा न कि आवाज आ रही है। उसने सुना, इसीलिए जवाब दिया। नहीं सुनता तो सही जवाब कैसे आता?

दूसरा विषय निम्बाहेड़ा का है। एक पत्रकार ने कहा, म.सा. आपसे कुछ पूछना है। मैंने कहा पूछो। वह मेरे पास बैठा और प्रश्न किया कि धर्म जोड़ता है या तोड़ता है? मैं जवाब देने ही वाला था कि भीतर से एक नई स्फुरणा हुई। मैंने कहा, धर्म तोड़ता है। उसकी आगे की सारी प्लानिंग फेल हो गई। उसके पूछने का उद्देश्य था कि धर्म जोड़ता है, ऐसा उत्तर आएगा तो वह पूछेगा कि फिर आप यहाँ अलग-अलग चातुर्मास क्यों कर रहे हैं। एक स्थान पर व्याख्यान क्यों नहीं होता। पता नहीं मेरे दिमाग में क्यों आया कि धर्म तोड़ने का काम करता है। इससे उसकी आगे की सारी प्लानिंग फेल हो गई।

धर्म तोड़ता भी है और जोड़ता भी है। धर्म से कर्म टूटते हैं। आत्मा का संधान होता है। खोज होती है।

एवंता कुमार बचपन में ही गौतम गणधर के व्यक्तित्व से प्रभावित हो गए। एवंता कुमार ने भिक्षा के लिए विचरण करते हुए गौतम गणधर से पूछा कि आप इधर क्यों घूम रहे हैं? गौतम ने कहा, मेरा भ्रमण भिक्षा के लिए हो रहा है। एवंता कुमार ने कहा, चलो मेरे घर! मैं आपको भिक्षा दिलवाऊँगा।

आपने अंतगडदशा सूत्र में सुन लिया कि भगवान की देशना सुनी और पहली बार ही अद्भुत ज्ञान के धनी बन गए। अब कह रहे हैं, मुझे गेंद नहीं चाहिए। अब मुझे गेंद नहीं खेलनी है। खिलौने से नहीं खेलना है। अब संयम का खेल खेलना है।

लेऊँ-लेऊँ संयम भार माता मोरी ए,
आज्ञा तो देवो नी माने मोद सूँ।

क्या कहा माता से? कहा कि माँ! मैं संयम लेना चाहता हूँ।

'गच्छाचारपइण्णा' में बताया गया है कि एवंता कुमार की छह वर्ष की उम्र थी। आगम के अनुसार विचार करें तो 8-9 वर्ष की उम्र रही होगी। पहले कभी संतों के दर्शन किए नहीं, संयम की पहचान नहीं थी। पहली बार

भगवान की देशना सुनी और पहली बार में विचार हो गया कि मुझे साधु बनना है।

समझदार व्यक्ति अपने आपको समझ लेता है। अपने आपको समझने का मतलब है कि अपना निर्णय स्वयं करने में समर्थ हो गया हो। जो व्यक्ति अपना निर्णय स्वयं लेता हो, वह व्यक्ति कहे तो बात एक बार समझ में आती है। वहाँ पर भी एक प्रश्नवाचक चिह्न खड़ा होता है कि कहीं भावुकता की बात तो नहीं है।

गेंद से खेलनेवाला कोई बालक दीक्षा का बात करे तो उसको कोई सीरियसली नहीं ले सकता। उस पर सोचेंगे कि बच्चा है, सुन लिया होगा कि साधु जीवन अच्छा है, इसलिए कह रहा है, मैं भी साधु जीवन स्वीकार करूंगा।

आगमों में ऐसी बहुत सी माताओं का वर्णन आया है जिनकी संतानों ने जब दीक्षा लेने की बात कही तो माताएँ बेहोश होकर धड़ाम से गिर गई। श्रीदेवी माता बेहोश नहीं हुई, बल्कि उसको हँसी आ गई। हँसी इसलिए आ गई कि छोटा सा टाबर दीक्षा की बात कर रहा है। श्रीदेवी ने कहा, बेटा! तुम्हें अभी संयम की कोई जानकारी नहीं है। ये लो नई गेंद और खेलो। वह कहता है, जो जानता वह नहीं जानता, जो नहीं जानता उसको जानता है।

किसको जाना और किसको नहीं जाना, मेरे खयाल से यह बात सभी श्रोतागण जानते हैं। सभी जानते हैं कि मुझे मरना है पर ऐसा कोई नहीं होगा जो यह जानता हो कि मैं कब मरूंगा। बहुत कम लोगों को यह पता होगा। बहुत कम कहने का अर्थ है कि किसी-किसी को पूर्वाभास हो जाय तो बात अलग है, बाकी कोई नहीं जानता कि वह कब मरेगा। यह सब जानते हैं कि जीव मरकर परभव में जाता है, पर यह कोई नहीं जानता कि वह कहाँ जाएगा, किस गति में जाएगा। यह सभी जानते हैं कि जीव अपने-अपने कर्मों के अनुसार यहाँ से परभव की यात्रा करता है।

एवंता कुमार की बात केवल पहेली नहीं थी, दिल में उतरा हुआ ज्ञान था। उनकी बात से माता को लगा कि बात हँसी की नहीं है, गहरी है। यह जो कह रहा है सीरियस होकर कह रहा है। माता ने समझाने का प्रयत्न किया कि

संयम जीवन कठिनाइयों का जीवन है। उसमें बहुत सारी कठिनाइयाँ आती हैं।

दो-तीन दिन पहले सतियाँ जी म.सा. बोल गईं कि हमारे परीषहों की तो गिनती है पर आपके परीषहों की? हकीकत में आपके कष्टों को परीषह नहीं बताया गया है। साधना में चलते हुए आने वाली कठिनाइयों को सहन करने को परीषह कहा गया है। जो साधना में लगा ही नहीं उसके सामने आने वाली कठिनाइयों की बात क्या करें।

मेरे खयाल से साधु जीवन में आने वाली कठिनाइयों से ज्यादा कठिनाइयाँ गृहस्थ अवस्था में आती होंगी। शूरवीर कौन हुआ? ज्यादा कठिनाइयों वाला शूरवीर हुआ या कम वाला?

(श्रोतागण बोले- कम कठिनाइयों वाले शूरवीर हुए)

कठिनाइयों को सहने वाले शूरवीर हुए। मोह का रेशा आपकी कठिनाइयों को सहने का बल देता है। कठिनाइयाँ सहते हुए भी आपका जागरण नहीं हो पाता है। कठिनाइयाँ सहते रहने पर भी मन में ऊँच-नीच स्थितियां होती रहने पर भी मोह की नींद खुलती नहीं है। कभी क्रोध आएगा तो कभी अहंकार आएगा, किंतु उन कठिनाइयों से हटने का मन नहीं होगा। ऐसा निरंतर होते रहने से अभ्यस्त बन गए। अभ्यस्त दशा सुसुप्तावस्था है। उसमें जो करंट लगना चाहिए, जो झटका लगना चाहिए वह झटका नहीं लगता। जागृत व्यक्ति या जिंदा व्यक्ति एक चिनगारी से जागृत हो जाता है जबकि मृत शरीर को दस मन लकड़ी लग जाने के बाद भी चेतना का संचार नहीं होता। यह पहचान जिंदा और मरे हुए शरीर की हो जाती है। हम जिंदा है इसलिए एक-एक वाक्य चोट करने वाला होना चाहिए। एक-एक शब्द उद्वेलित करने वाला होना चाहिए कि मैं कैसा हूँ और क्या इसी दशा में मुझे बने रहना चाहिए या कोई आत्महित विचार करना उत्तम होगा।

जो कार्य मनुष्य जीवन में हो सकता है वह कार्य देव भव में भी होना मुश्किल है फिर तिर्यंच-नरक की तो बात ही क्या करें। नरक में रहने वाले जीव को सोचने का समय ही नहीं मिल पाता है। वह त्राहिमाम्... त्राहिमाम्... करता रहता है। वह बचाओ, बचाओ करता रहता है किंतु कोई बचाने वाला नहीं मिलता। हमने भी ऐसी दशा का अनुभव किया है। एक-दो बार नहीं,

अनंत बार नरक में गए हैं। अनेक बार नारकीय दुख का भोग किया है। उसके बावजूद नहीं सँभल पा रहे हैं।

बूँद-बूँद बारिश हो रही थी। एक पत्ते पर पानी की बूँद टिक गई। सूर्य किरणें निकलने पर उनसे पानी की बूँद चमक रही थी। बूँद इठलाने लगी, झूमने लगी कि मुझमें कितनी चमक है। तब तक हवा का एक झोंका आया, पत्ता हिला और चमकती हुई बूँद धूल-धुसरित हो गई। नीचे जाकर धूल में मिल गई, अस्तित्व समाप्त हो गया।

इसी प्रकार जिंदगी क्षणभंगुर है किंतु पुण्यवानी की जोर से चमक है। हमारा दीदार चमक रहा है। लग रहा है कि हम बड़े सुखी हैं। व्यक्ति सोचता है कि मेरे पास धन की कमी नहीं है, परिवार की कमी नहीं है। सभी मेरे हितैषी हैं।

पहलो सुख निरोगी काया, दूसरो सुख घर में माया।
तीसरो सुख पुत्र आज्ञाकारी, चौथो सुख पत्नी सुखदायी।

ऐसे सुखों की गिनती करते जाएं। समझ लो कि किसी को सारी सुख-सुविधाएं प्राप्त हैं और उस पर वह इठला रहा है कि यह मेरी जीवन झांकी है। मुझे इतना आराम है। एक चीज मँगाता हूँ तो चार चीजें आती हैं। एक नौकर को बुलाऊँ तो चार नौकर आते हैं। किसी चीज की कमी नहीं है। आप भी इसी तरह इठला रहे होंगे, किंतु ध्यान रखें कि वायु का झोंका आएगा। हो सकता है कि वह झोंका कभी जल्दी आ जाए और कभी देर से आए। जल्दी आए या देर से, वायु का झोंका आएगा जरूर। कौन-सी वायु का झोंका आएगा?

'मौत की हवा का झोंका एक आएगा,
जिंदगी का वृक्ष तेरा टूट जाएगा।'

हवा जीवनी शक्ति है। वैसे लोग कहते हैं कि पानी ही जीवन है किंतु बिना पानी के लोग महीनों निकाल देते हैं। आप देखें, तीर्थंकरों की तपस्या निर्जल रही है। आदिनाथ भगवान एक वर्ष तक अन्न-जल नहीं ले पाए। भगवान महावीर ने छह-छह महीनों तक जल का सेवन नहीं किया। बिना पानी के महीनों निकल सकते हैं, किंतु बिना हवा के एक दिन भी नहीं निकलेगा।

किसी यंत्र की सहायता से किसी कमरे की सारी हवा बाहर खींचकर

उसमें किसी को बैठा दिया जाए तो जीवन कितने क्षणों का रहेगा?

कुछ ही क्षणों में निढाल हो जाएंगे। इसलिए हवा जीवनदात्री भी है और उसका झोंका जीवन को गिराने वाला भी है। जैसे पत्ते पर से पानी की बूँद पत्ते के हिलते ही गिर जाती है, वैसे ही आयुष्य बल पूरा होते ही हम गिर जाएंगे। एक क्षण भी नहीं लगेगा गिरने में। उस क्षण को भूलना मत, सदा सामने रखना। ज्यादा आशा, ज्यादा अभिलाषा मत सँजोना। जैसे कर्म होंगे, वैसे ही स्थान भविष्य में मिलनेवाले हैं। सुख-सुविधा में आसक्तिपूर्ण जीवन जीया होगा तो पशु योनि, नरक योनि में भी जा सकते हैं और शालिभद्र जैसा जीवन जीया होगा, कोई आसक्ति नहीं की होगी, कोई लगाव नहीं हुआ होगा तो हो सकता है कि देव गति मिल जाए। मनुष्य गति मिल जाए। साधु जैसा जीवन जीने पर, तटस्थ जीवन जीने पर हो सकता है कि देव गति मिल जाए। मनुष्य गति मिल जाए।

सोचना यह है कि देव गति में, मनुष्य गति में जाने से फायदा क्या होगा। लाभ उठाने की स्थिति है तो वर्तमान में भी लाभ उठा सकते हैं। अभी आपके पास मौका है, अभी अवसर है। अभी अवसर का लाभ नहीं उठा पाए तो पता नहीं फिर कब यह मौका मिले।

कई लोग बोलते हैं, म.सा.! अगले जन्म में जरूर साधु बनूंगा। वापस कब मनुष्य जन्म मिलेगा और उस समय क्या याद रहेगा कि मैंने म.सा. को क्या जुबान दी थी? यदि उस जन्म में भी कोई साधु मिल जाए तो उससे भी क्या यही बोलोगे कि म.सा.! अगले जन्म में साधु बनूँगा, क्योंकि कल पर छोड़ने की आदत है। आज का कार्य, आज करने की तैयारी नहीं है तो बोल देंगे कि कल करूंगा। म.सा. उपवास का बोलेंगे तो कहेंगे, म.सा.! कल करूंगा।

काल करे सो आज कर, आज करे सो अब,
पल में परलय होएगी, बहुरि करेगा कब।

किंतु हमारी आदत क्या है?

आज करे सो काल, काल करे सो परसों,
फिक्र है किस बात की, हम जीएंगे वर्षों।

इसका मतलब, अभी हमारी लंबी उम्र है। कितनी लंबी है उम्र? ध्यान रखना, इसका कोई भरोसा नहीं है। एवंता कुमार माता से कह रहे हैं–

लेऊँ-लेऊँ संयम भार माता मोरी ए,
आज्ञा तो देवो नी माने मोद सूँ।
दोरो घणो संयम रो मारग, जाया म्हारा रे...

माता कहती है, बेटा! तू साधु बनने की बात कह रहा है। साधु जीवन दोरो घणों है। साधु का मार्ग नंगी तलवार पर चलने से भी दुष्कर है। बहुत कठिन है। ऐसा नहीं है कि जब चाहे तब खा लिया। साधु जीवन में ठंडे-गर्म की ही बात नहीं होती। ठंडा-गर्म जो भी मिलेगा खाना पड़ेगा। नंगे पैर चलना भी आसान काम नहीं है।

आज सड़कें हो गई हैं। एक जमाने में कच्चे मार्ग हुआ करते थे, काँटे बिखरे होते थे। पत्थर-कंकड़ लगे होते थे, उन पर भी साधु को नंगे पैर चलना होता था।

इसलिए माता ने कहा कि साधु जीवन लोहे के चने चबाने के समान है। नंगी तलवार पर चलने के समान है।

माता की बात सुनकर एवंता कुमार कहता है–

'कायरो रे काँपे कलेजो माता मोरी ए,
वीरां ने लागे मारग सांवलो।'

माँ! तुम कह रही हो कि संयम का मार्ग बड़ा कठिन है। कठिनाई की बात सुनकर कायर व्यक्ति का दिल काँपने लगेगा। शूरवीरों के लिए काँपने की बात नहीं है। शूरवीरों को वह मार्ग बड़ा सुहाना लगता है। वह कहता है, माँ! मैं कायर नहीं हूँ, मैं वीर सपूत हूँ। कितनी भी बाधाएं आ जाएं, कठिनाइयाँ आ जाएं, मुझे कोई भय नहीं है।

जिसके चैतन्य केंद्र खुल जाते हैं उससे भय दूर हो जाता है। उसके पास क्रोध, खिन्नता, अवसाद टिक ही नहीं पाते। उसके पास न क्रोध टिकेगा, न खिन्नता टिकेगी। उसके जीवन में कभी अवसाद आएगा ही नहीं।

प्रश्न है कि चैतन्य केंद्र कैसे जागृत हो? उनको जगाएं कैसे?

उसका जागरण क्षमा से होता है। निरंतर क्षमा का अभ्यास करने

वाला अपने चैतन्य केंद्रों को खोल देता है। जहाँ क्षमा होगी, वहाँ उसकी संगिनी सरलता, ऋजुता उसके साथ होंगी।

'सोही उज्जुयभूयस्स...'

ऋजुभूत होने पर ही शुद्धि होती है। टेढ़े-मेढ़े भावों से शुद्धि नहीं होती। सर्प कितना ही टेढ़ा-मेढ़ा चलता होगा, किंतु बिल में घुसते समय सरल हो जाता है, सीधा हो जाता है। मोक्ष में जाने के लिए सरल होना पड़ेगा। सरल नहीं होने पर मुक्ति कोसों दूर है। बिना सरलता के मुक्ति प्राप्त होना असंभव है। मुक्ति मिलना तो दूर की बात है, सरल हुए बिना सही मायनों में धर्माराधना होना भी बहुत कठिन है। धर्माराधना के लिए भी सरलता बहुत जरूरी है। सरलता आ जाने पर, क्षमा आ जाने पर उसका परिणाम देखने को मिलेगा।

अहेतुकी प्रसन्नता सदाबहार होगी। पद मिलने से, डिग्री मिलने से व्यक्ति खुश हो जाता है। इस खुशी में बाहर की अवस्थाएं हेतुभूत होती हैं किंतु जिस प्रसन्नता में बाहर के कोई भी हेतु नहीं हैं फिर भी उसकी प्रसन्नता सदाबहार बनी रहती है। इसका मतलब है कि उसके चैतन्य केंद्र खुल गए होते हैं। उस समय कोई कितना भी क्रोध दिलाने का काम करेगा उसके भीतर क्रोध जागृत नहीं होगा। पानी में आग फिर भी लग सकती है, किंतु प्रसन्न व्यक्ति कभी क्रोधित नहीं होगा। प्रसन्नता के रहते क्रोध नहीं आ सकता।

यदि क्रोध आ रहा है तो जागना पड़ेगा। क्रोध आने का मतलब है कि अभी वह प्रसन्नता प्राप्त नहीं हो पाई है। इसका मतलब है कि चेतना में जी रहे हैं, किंतु चैतन्य केंद्र को जगा नहीं पाए हैं। जब तक उसको जगाएंगे नहीं, तब तक मोह से लड़ना, मोह से भिड़ना आसान नहीं होगा। हर व्यक्ति युद्ध करने में समर्थ नहीं होता। सेना के जवानों के भीतर जज्बा होता है। वे देश के लिए मर-मिटने को तैयार रहते हैं। वैसी तैयारी होने पर ही वे युद्ध में जुड़ सकते हैं। कायर मन होगा तो घबराएंगे।

जब तक चैतन्य केंद्र जाग्रत नहीं होंगे, तब तक उतार-चढ़ाव होते रहेंगे। एक मन कहेगा कि साधु बन जाऊँ तो दूसरा मन रोकेगा। कहेगा कि रहने दे, रहने दे, ज्यादा छलाँग लगाने की आवश्यकता नहीं है। मन की दुविधा उसे आगे नहीं बढ़ने देगी।

'तीन दुविधा जानो रे साधु, तीन दुविधा जानो।'

क्या है तीन दुविधाएं?

पहली दुविधा है, किसी कार्य में मन नहीं लगता। सामायिक करते हैं तो सामायिक में मन नहीं लगता। प्रतिक्रमण करते हैं तो उसमें मन नहीं लगता।

पहली दुविधा ज्ञान ध्यान में, बणे नहीं अवधानो रे,
ज्ञान ध्यान में जब भी बैठूँ, बातां रो संधानो रे।

ज्ञान-ध्यान में एकाग्रता नहीं हो रही है। कुछ भी याद नहीं हो रहा है। जो भी पढ़ रहा है वह याद नहीं हो रहा है। पढ़ा और भूल जाता है। 'आगे पाठ, पीछे सपाट।' जो पढ़ा, हाथोंहाथ भूल गया।

दूजी दुविधा नींद घणेरी, पडिक्कमणे में जानो रे,
सही सलामत नहीं प्रतिकमणो, नहीं पाठ मन ध्यानो रे।

दूसरी दुविधा है, धर्म ध्यान करते समय झपकी आना।

(श्रोता हँस पड़े)

हँसने की बात नहीं है। कई लोगों को बैठे-बैठे तो क्या खड़े-खड़े भी नींद आ जाती है। गाड़ी में यात्रा करते समय पाइप पकड़े हुए लोग खड़े-खड़े नींद ले लेते हैं। यह अभ्यास है। कौन, कहाँ सो जाता है कुछ पता नहीं चलता। जिनको नींद नसीब होती है वह कहीं भी सो जाता है।

एक बहन जी ने दो दिन पहले प्रश्न किया कि म.सा. नींद नहीं आती। माला गिनते-गिनते हाथ थक जाते हैं, किंतु नींद नहीं आती। और नींद आने वाले को खड़े-खड़े ही आ जाती है। हमारा सिद्धांत यह कहता है कि चलते-चलते भी आदमी को नींद आ सकती है।

एक रघुवीर जी थे। वे कभी संत-सतियों के साथ विहार में भी रहे थे। वे चलते-चलते ही नींद ले लेते। नींद में ही चल पड़ते। पहली दुविधा में मन नहीं लगता, मन एकाग्र नहीं होता। दूसरी दुविधा में धर्म ध्यान करते समय नींद आ जाती है। हाथ से माला छूट जाती है।

तीजी दुविधा प्रत्याख्यान री, याद मुझे न आणो रे,
त्याग लिया में भांगो पड़जा, मन अवगुणों री खाणो रे।।

लोग कहते हैं, म.सा.! क्या पच्चक्खाण लिया याद ही नहीं है।

पच्चक्खाण याद नहीं है तो प्रत्याख्यान पालोगे कैसे? फिर पच्चक्खाण टूटेगा या सही रहेगा?

(श्रोतागण बोले– पच्चक्खाण टूटेगा)

लोग पच्चक्खाण ले लेते हैं और छह महीने, साल भर निकलने पर भूल जाते हैं कि क्या पच्चक्खाण लिया था। पच्चक्खाण में क्या आगार रखा याद ही नहीं है। भावुकता में आकर पच्चक्खाण ले लेते हैं। भावुकता से तपस्या हो जाती है और पारणा बड़ा कठिन हो जाता है।

'पारणो घणो कठिन छे रे, पारणो घणो कठिन छे रे,
अन्न खाय ने मन वश रखनो घणो कठिन छे रे'

गगन मुनि जी म.सा. ज्यादा जानते हैं कि पारना कितना कठिन होता है। जो तपस्या ही नहीं करते उनको क्या पता कि पारणा कितना कठिन होता है। जो तपस्या करेगा उसको ही मालूम पड़ेगा कि पारणा कितना कठिन होता है। पारणा होने के बाद सोचते हैं कि गुड़ ले लूँ, पापड़ ले लूँ, यह ले लूँ, वह ले लूँ।

केवल इनकी बात नहीं है, तपस्यावालों की बात है। पारणे के बाद मुँह फीका-फीका लगता है, मन करता है कि हाजमोला की गोली ले लूँ। थोड़ा नीबू दे दो स्वाद आ जाएगा।

पच्चक्खाण लेते समय जितना उत्साह था, उतना ही उत्साह उन्हें पालते समय होना चाहिए।

माता श्रीदेवी, एवंता कुमार को भगवान महावीर के पास ले जाती हैं और दीक्षा दिलाती हैं। एवंता कुमार दीक्षित हो गए। साधु बन गए। एवंता मुनि साधना में चल रहे थे कि एक बार वर्षा होने के बाद पंचमी के लिए पात्र लेकर जंगल की ओर निकले। पंचमी से निवृत्त हो अन्य मुनियों का इंतजार कर रहे थे कि एक जगह पानी दिखा था और क्या हो गया?

'एवंता मुनिवर नाव तिराई, बहते नीर में।'

बहते पानी में नाव चली या रुके हुए में, जो भी हो। बाल सुलभ चेष्टा थी। मन में कोई अपराधवृत्ति का भाव नहीं था। यह नहीं था कि कोई मुझे देख न ले। कोई मुझे देख नहीं ले। ऐसा होने पर अपराध भाव जुड़ता है। जहाँ

अपराध जुड़ जाता है वहाँ भावना रहती है कि मैं सही नहीं कर रहा हूँ, कोई मुझे देख न ले। यदि सहज रूप से क्रिया होती है उसमें उक्त प्रत्यय पैदा नहीं होता, किंतु जहाँ मन में भय है कि मुझे कोई देख न ले वहाँ अपराध जुड़ता है।

किसी के देखने का भय होने का मतलब है कि मर्यादा से हटकर काम किया जा रहा है। एवंता मुनि के मन में ऐसा विचार नहीं था। उनके भावों में सहजता थी। इसलिए सदाबहार प्रसन्नता थी।

एवंता मुनि के साथ रहे मुनिराजों ने एवंता मुनि को नाव चलाते हुए देखा तो उनके मन में उतार-चढ़ाव होने लगा। उनकी प्रसन्नता भंग हो गई, जो कि भंग नहीं होनी चाहिए। कोई कितना ही बड़ा अपराध करे उससे उनको कोई लेना-देना नहीं था, किंतु जब संबंध जुड़ जाता है तो व्यक्ति दुखी हो जाते हैं।

भगवान महावीर सर्वज्ञ, सर्वदर्शी थे। उनसे क्या छिपा था। उन्होंने मुनियों को संबोधित किया। उस संबोधन का सार है, अपनी प्रसन्नता कायम रखो। किसी को उपालंभ देने के पहले अपने दिल की धड़कन को जान लेना जरूरी है। गलती बताना बुरी बात नहीं है, किंतु गलती बताने में गलती करना बुरी बात है। गलती बताने का उद्देश्य सामने वाले को टोकने का है, उसको दुखी करने का है, तो बुरी बात है। यदि सुधार का लक्ष्य है तो उचित है।

यह समझने की आवश्यकता है कि हमारी टोन किस प्रकार से होती है। टोन ही असर करने वाली होती है। वही मन के भीतर भेद कराने वाली होती है। प्रेम से कही हुई बात, आत्मीय भाव से कही हुई बात व्यक्ति को चुभती नहीं है। उस बात को व्यक्ति सहजता से स्वीकार कर लेता है। गुस्से से कही हुई बात मन में दूरियाँ पैदा करती है।

इसलिए देखें और समझें कि किसी की गलती बताते हुए किस टोन से बात की जा रही है। चाहे साधु की बात हो या गृहस्थ की, ऐसा सबके साथ होता है। ऐसा नहीं है कि साधु में नहीं होता और गृहस्थ में होता है। सबमें होता है। साधु में भी होता है और गृहस्थ में भी होता है। कहीं कम होगा तो कहीं ज्यादा होगा।

एवंता मुनि ने बहुत जल्दी ही अपना कार्य समेट लिया। कार्य समेटने का मतलब है कि बहुत जल्दी केवलज्ञान की प्राप्ति कर वे सिद्ध, बुद्ध, निरंजन,

निराकार बन गए। वे निर्वाण प्राप्त करते हैं। ऐसे उत्तम पुरुषों का जीवन वृत्तांत हम सुन रहे हैं।

नीरज मुनि जी म.सा. दीक्षित हुए तो बहुत से लोगों को आश्चर्य हुआ था, क्योंकि उम्र के अनुपात से इनकी हाइट कम थी। लोग आते और बोलते, म.सा.! आप इतनी जल्दी दीक्षित हो गए। लोगों को जवाब देते-देते परेशान हो जाते। कभी-कभी बोल देते, मैंने दीक्षा जल्दी ले ली तो आप देर क्यों कर रहे हो। छोटी उम्र में दीक्षा नहीं लेनी तो किस उम्र में लेनी। गजसुकुमाल की माता ने कहा-

'संयमी बनना कोई खेल नहीं, तेरी वय का भी मेल नहीं'

क्या उम्र होती है दीक्षा लेने की?

आठ साल से ऊपर वाले दीक्षित हो सकते हैं और 80 साल वाले भी दीक्षा के योग्य नहीं होते। जिसके भीतर संवेग और निर्वेद का झरना बह रहा हो, जो निरंतर समभाव और निर्वेद में रमण करने वाला हो, वह किसी उम्र का हो, दीक्षा योग्य है। जिसमें संवेग-निर्वेद नहीं है वह चाहे कितनी उम्र का भी हो, दीक्षा के योग्य नहीं होता। कोई घेवरिया मुनि की तरह दीक्षा ले ले तो बात अलग है।

घेवरिया मुनि घेवर खाने के लिए दीक्षित हुए थे। बाद में उनके भीतर संवेग और निर्वेद की धारा बह गई। संवेग-निर्वेद साधु जीवन की मूल भीति है। उसी पर साधु का जीवन टिका रहता है। संवेग-निर्वेद नहीं होंगे तो चाहे कितने भी त्याग कर लो, उपवास कर लो, बेला-तेला, मास-मासखमण की तपस्या कर लो, 32 शास्त्र रटे हुए हो तो भी उसमें साधु जीवन की पात्रता नहीं जगेगी। हाँ! कोई विशिष्ट ज्ञानी, घेवरिया मुनि की तरह दीक्षित हो तो बात अलग है। घेवरिया मुनि ने घेवर खाने के लिए दीक्षा ले ली, किंतु उनमें सरलता बहुत थी।

जो सरलता से आगे बढ़ता है, स्वयं को सुधारने का लक्ष्य रखता हो तो उसे भी दीक्षा दी जा सकती है, अन्यथा दीक्षा देना तो आसान है, किंतु उसका निर्वाह होना बहुत कठिन है।

महासती श्री स्वर्णा श्री जी म.सा. ने निर्वाह, निर्माण और निर्वाण की

बात बताई। अपना निर्वाह पशु-पक्षी भी करते हैं, किंतु जो दूसरों का निर्वाहक हो जाता है, ऊँची-नीची किसी भी परिस्थिति में निर्वाह करनेवाला होता है, वह अपने जीवन का निर्माण कर लेता है। जिसका जीवन निर्माण हो जाएगा उसके लिए निर्वाण दूर की बात नहीं है।

बंधुओ! अब बारह बजने वाले हैं, किंतु हमें जीवन का बारह नहीं बजाना है।

एवंता मुनि की तरह नहीं बन पाए, छोटी उम्र में दीक्षा नहीं ले पाए तो अर्जुन माली की तरह बड़ी उम्र में ले लो। नहीं तो प्रसन्नता बरकरार रखने की तैयारी करो। ऐसा लक्ष्य बनेगा तो धन्य बनेंगे। इतना कहते हुए विराम।

20 अगस्त, 2023

15

गुणपरक दृष्टि बन जाय

प्रभु मेरा हृदय गुण सिंधु अपरम्पार हो जाए,
सफल सब ओर से पावन मनुज अवतार हो जाए।

हमारा मन कुएं जैसा संकीर्ण है, क्योंकि उसमें स्वार्थ के अलावा परमार्थ की गूँज पैदा ही नहीं होती। स्वार्थ के संकीर्ण घेरे से हम उपरत नहीं हो पा रहे हैं। उस स्थिति में यह निवेदन कर रहा हूँ, यह प्रार्थना कर रहा हूँ, भावना भा रहा हूँ कि–

प्रभु मेरा हृदय गुण सिंधु अपरम्पार हो जाए,
सफल सब ओर से पावन मनुज अवतार हो जाए।

अर्थात् मेरा हृदय गुणों का सागर हो जाए। ढूँढने पर उसमें एक भी दुर्गुण प्राप्त नहीं हो। राग खतरनाक होता है, किंतु द्वेष उससे भी खतरनाक होता है। द्वेष के दो सिपाही हैं– ईर्ष्या और इगो।

'देख दूसरे की बढ़ती को...'

ईर्ष्या की पहचान है कि व्यक्ति दूसरे का उत्थान स्वीकार करने को तैयार नहीं होता है। ईगो की पहचान है कि व्यक्ति दूध में घी की तरह स्वयं को ही ऊपर–ऊपर तैरता देखना चाहता है। वह चाहता है कि मैं ही नजर आऊँ। मेरा ही बोलबाला हो। लोग मेरी तरफ आकर्षित हों। दूसरी तरफ लोग आकर्षित होने लगें तो उसके लिए वह असहनीय हो जाता है।

आज का दिन यह भावना लिए हुए है कि हे प्रभु! मेरा हृदय संकीर्णता की दीवारों को भेदता चला जाए। ईगो और ईर्ष्या मेरे भीतर से बहकर निकल जाएं, वे मौजूद नहीं रहें। ये दोनों भीतर से हट गए तो हृदय गुणों से लबालब भर जाएगा। ईगो और ईर्ष्या के रहते हुए कोई भी गुण प्रवेश नहीं कर पाते। उन गुणों

को लाने का कितना भी प्रयत्न करेंगे, नहीं पाएंगे। जैसे पानी बाँध से टकराकर वापस लौट जाता है, वैसे ही ईगो से गुण टकराकर वापस चले जाएंगे।

आपने कई बार सुना होगा कि बाहुबली जी का एक छोटा-सा अहंकार केवलज्ञान में बाधक बना हुआ था। ईगो जितना सशक्त होगा, पतन उतना ही अधिक होगा। ईगो से वर्तमान जीवन भी सही तरीके से जी नहीं पाएंगे और भविष्य भी अंधकारमय बना डालेंगे। वर्तमान और भविष्य दोनों उज्ज्वल हो इसलिए हम भगवान से प्रार्थना करते हैं कि 'मेरा हृदय गुण सिंधु अपरम्पार हो जाए।' इतना लबालब भर जाए जिसकी कोई सीमा नहीं रहे। खोजने पर भी कोई दुर्गुण न मिले।

असंभव कुछ भी नहीं है, किंतु उसके लिए प्रयत्न आवश्यक है। सबसे पहले लक्ष्य होना चाहिए कि मुझे ऐसा बनना है। प्रयत्न से पहले आत्मविश्वास भी होना चाहिए। आत्मविश्वास के साथ कदम बढ़ते जाएंगे, प्रयत्न होता रहेगा तो मंजिल तक पहुँचने में समर्थ होंगे। यदि ऐसा सोच लिया कि अंगूर खट्टे हैं, तो कभी भी उसे चख नहीं पाएंगे। जैसे लोमड़ी अंगूर के पास पहुँचकर भी उसका स्वाद चख नहीं पाई। अंगूर का स्वाद नहीं ले पाई थी।

हमारा मन, हमारा दिल, हमारा हृदय गुणपरक दृष्टिवाला हो। हमारे भीतर गुणग्राहकता बढ़े। गुणों पर दृष्टि कायम रखेंगे तो उनका समावेश भीतर हो पाएगा। जैसे कोयले के व्यापारी के हाथ में कोयला आता है और हीरे के व्यापारी के हाथ में हीरे आते हैं, वैसे ही गुणपरक दृष्टि होगी तो गुण आएंगे और दुर्गुणों पर दृष्टि होगी तो दुर्गुण देखते रहेंगे। वही हमारे पल्ले पड़ेगा, जिस पर नजर रहेगी।

गुणपरक दृष्टि बनाए रखने के लिए पर्व पर्युषण की आराधना होती है। पर्व पर्युषण की आराधना संपन्नता की ओर है। पर स्पष्ट है कि कान बंद नहीं किए जा सकते, न आँखें ही बंद की जा सकती हैं। पर इतना कर सकते हैं कि किसी में कोई दुर्गुण नजर आ गए तो उसको गहरी दृष्टि से देखने की कोशिश नहीं करें। वहाँ से दृष्टि हटा लें। खोज करके किसी के अवगुणों को देखने की तो कोशिश करनी ही नहीं है। इस लक्ष्य को सिद्धात रूप से स्वीकार किया जाएगा तो चर्या बदलेगी। भीतर गुणात्मक परिवर्तन होंगे, अन्यथा शब्दों के व्यापारी रहेंगे।

अमूमन शब्द, बोलने और सुनने में प्रिय हो सकते हैं। वे कानों तक या मुँह से बोलने तक सीमित रह जाएंगे। जीवन या हृदय उनके स्वाद से अछूता रहेगा।

मिसरी के बारे में किताबों में पढ़कर, व्याख्यान में सुनकर कितनी भी जानकारी कर ली जाए कि वह सफेद होती है, कठोर होती है, मीठी होती है, जब तक उसकी मिठास का ज्ञान नहीं होगा, तब तक उसके बारे में ज्ञान अधूरा रहेगा। उसके मिठास का ज्ञान तब होगा, जब उसे मुँह में रखा जाएगा। वैसे ही जब तक गुणपरक दृष्टि नहीं बनेगी, गुण ग्राहक का भाव नहीं बनेगा, तब तक गुणात्मक परिवर्तन आना बहुत कठिन है। बहुत ही कठिन है।

आज का यह पर्व शिक्षा देता है कि भूलों को भूलो। कौन व्यक्ति है जिससे भूल नहीं हुई हो?

आओ-आओ खमा लें आज, संवत्सरी आई सा,
हल्का कर लें बोझ सब आज, संवत्सरी आई सा।

छोटा-सा निष्कर्ष है, 'हल्का कर लें बोझ सब आज।' बस इतनी सी बात है। जो भार ढो रहे हैं दिमाग में, बुद्धि में जिसको स्टोर कर रखा है, उससे हलका हो जाएं। व्यक्ति व्यर्थ का भार ढोता जा रहा है। यदि उससे पूछ लिया जाए कि भाई! यह भार कब तक ढोते रहोगे, तो उसके पास इसका उत्तर मिलना कठिन है। यदि भार को नहीं छोड़ पाए तो इसी को लेकर जन्म-जन्मांतरों में चले जाएंगे। इस बोझ के कारण कितना नीचे गिरेंगे पता नहीं है। यदि नरक में चले गए तो वहाँ क्या दशा होगी! वहाँ कौन रक्षक बनेगा! भले ही हम गातें रहेंगे-

म्हाने अबके बचालो जिनराज, म्हाने तो थारो आसरो...

यदि बोझ लेकर चले जाएंगे और उसके कारण नरक गति में चले गए, तो क्या दशा होगी! क्या हाल होगा! जैसे कैरी या नीबू का अचार बनाने के लिए उसमें नमक डालकर धूप में रखने पर उनके टुकड़ों में नमक भीतर तक उतरता जाता है, वैसे ही नरक कुंभियों में हमें पकाया जाएगा। इतना ही नहीं, गरमी लगेगी तो मन करेगा कि छाया में चला जाऊँ किंतु वहाँ छाया मिलने वाली नहीं है। यदि दौड़कर कूटशाल्मली पेड़ के नीचे चले गए तो वहाँ भी

छाया तो नहीं मिलेगी अपितु उसके करवत जैसे तीक्ष्ण गिरेंगे और हमारे शरीर को काट डालेंगे। इतना ही नहीं परमाधर्मी देव आकाश में उछालते हैं और वापस भालों की नोक पर हमें झेलते हैं। हम कितने ही रोए होंगे, कितना ही हाय-हाय किया होगा, फिर भी बचाने वाला कोई नहीं है।

पशु योनि में चले गए तो बेरहमी से मारे जाएंगे। बैल बने तो गाड़ियों में जोते जाएंगे। चलने में तकलीफ होगी तो पीछे से आर लगेगी। भयंकर यातना भोगनी पड़ेगी। व्रतों की विराधना करके यदि देवगति में भी चले गए तो वहाँ भी अच्छी अवस्था मिलने वाली नहीं है। व्रतों की आराधना करनेवालों का स्वागत होता है और व्रतों की विराधना करनेवालों को झाड़ू, बुहारी, पोछा का काम दिया जाएगा।

दो बहनें थीं। दोनों शीलव्रत का पालन करती थीं। मरकर दोनों देवलोक में गईं, वहाँ से पुन: जन्म पाकर एक बहन वेश्या हो जाती है और एक महारानी। जिसने मन से शीलव्रत पाला वह देवलोक में जाकर पुन: जन्म लेकर महारानी बनती है। दूसरी बहन ने लोक लोज से शीलव्रत पाला। उसने शरीर से शीलव्रत का पालन तो किया, किंतु मन से नहीं कर पाई। कभी किसी पुरुष को, कभी किसी पुरुष को देखती तो उसके विचार बदल जाते। बताया जाता है कि वह देवलोक में जन्म लेकर 64 हजार वर्ष की उम्र वाली देवी बन जाती है किंतु वहाँ से आयु पूर्ण होने पर मनुष्य गति में तो आई लेकिन भोग की कामना बनी रहने से वेश्या का जीवन स्वीकार करती है।

आप विचार कीजिए! मन से आराधना करेंगे तो भव्य लाभ मिलेगा जबकि मन-ही-मन में विराधना करेंगे तो भयंकर दुष्परिणाम होंगे।। ये बातें हम किताबों में पढ़ते हैं, व्याख्यानों में सुनते हैं, किंतु जब तक यह बात हृदय में नहीं उतरेगी, गले नहीं उतरेगी, तब तक उद्धार नहीं होगा।

पर्व पर्युषण का मौका बोझ हलका करने के लिए मिला है। हमें अपने सारा बोझ हलका कर देना है। स्वयं को एकदम साफ कर लेना है। क्लीन कर लेना है। कोई भी बोझ रहना नहीं चाहिए। बहुत खींच लिया बोझ को, अब और कितना खींचेंगे। यह जिंदगी भार ढोने के लिए नहीं, आनंद के लिए है। इस जिंदगी का आनंद लेंगे तो धन्य बनेंगे।

चार गतियों में हमारा परिभ्रमण होता रहा है। कभी किसी के साथ संयोग बना, कभी किसी के साथ। भगवान की वाणी के अनुसार संसार की एक भी आत्मा ऐसी नहीं है जिसके साथ हमारा रिलेशन नहीं बना हो, संबंध नहीं जुड़ा हो, रिश्ता नहीं बना हो। इसलिए आज मन से यह भावना भाएं कि जिसके साथ भी योग-संयोग रहा, जिन भी आत्माओं के साथ संबंध रहा, उनमें से किसी भी आत्मा को कुछ कठोर कहा गया हो, वेदना दी गई हो, असाता पैदा की हो तो उनसे मन, वचन, काया से क्षमायाचना करते हैं। चाहे वह आत्मा नरक गति में हो, निगोद में हो, तिर्यंच गति में हो या मनुष्य गति में। वर्तमान में जिन लोगों के साथ रह रहे हैं, उनमें से किसी का भी हमारे निमित्त दिल दुखा हो, किसी के दिल में ठेस पहुँची हो, अंत:करण से सरल भावों से अपने हृदय को शुद्ध करते हुए, मैं सभी से क्षमायाचना चाहता हूँ। वे मुझे क्षमा करें।

मन से क्षमा करना या वचन से?

(श्रोतागण बोले- मन से करना)

वस्तुत: आज हलका हो जाना चाहिए। आज प्रतिक्रमण करते हुए इतना आनंद आना चाहिए कि जितना कभी आया ही नहीं हो। आज प्रतिक्रमण के पहले-पहले अपने दिमाग को साफ कर लेना। अपने मस्तिष्क को हलका कर लेना। कपड़े बहुत बार धोए हैं, आज मन को धोने का उपक्रम करना है।

भगवान ने हम साधुओं के लिए बताया कि प्राण, भूत, जीव, सत्त्व किसी की अशातना नहीं करनी। किसी की अशातना हो गई हो तो 'मिच्छा मि दुक्कडं' देने की बात बताई। हम प्रतिक्रमण में अनेक बार मिच्छा मि दुक्कडं बोलते हैं, किंतु आज दिल से मिच्छा मि दुक्कडं होना चाहिए।

आज सिद्ध भगवान से भी क्षमायाचना कर लें। हालांकि उनसे हमारा प्रत्यक्ष संबंध नहीं है, किंतु कभी उनके प्रति अवज्ञा के भाव आए हों, अशातना के विचार पैदा हुए हों, ऐसा विचार पैदा हुआ हो कि सिद्ध होते हैं या नहीं, तो उनसे क्षमायाचना करते हैं।

अरिहंत भगवान ने हमें धर्म का मार्ग बताया है। उस मार्ग पर हम

गतिशील हैं। यदि उनके विचारों के अनुसार, उनकी भावनाओं के अनुसार, उनके सिद्धांत के अनुसार हमारी प्रवृत्ति नहीं हुई हो, अपनी मति से हमने कोई अन्यथा रास्ता अपना लिया हो या गलत समझ लिया हो, उसमें उनकी अवज्ञा, अशातना हुई हो तो उन समग्र अरिहंत भगवंतों से क्षमायाचना चाहते हैं। वे हमें क्षमा करें।

आचार्य परंपरा से हमारे सिद्धांत सुरक्षित हैं। आचार्यों का महान उपकार हमारे जीवन पर है। उनके कारण से हमें तीर्थंकर भगवंतों की वाणी मिली। हमारा लक्ष्य होना चाहिए कि भगवंतों की वाणी अवरुद्ध न हो। उस वाणी का प्रवाह आगे-से-आगे बढ़ता जाए। इसलिए प्रत्येक माता-पिता का यह विचार होना चाहिए कि भगवंतों की वाणी, धर्म सिद्धांत अपनी संतानों के माध्यम से आगे बढ़ता रहे। आचार्य परंपरा के महान आचार्यों का आशय समझने में हमसे त्रुटि हो गई हो, सुधर्मा स्वामी से लेकर श्रीलाल चन्द जी म. सा. तक के सभी आचार्य भगवंतों का हृदय से आभार व्यक्त करते हैं। उनसे विपरीत कुछ भी कार्य हुआ तो हम क्षमायाचना करते हैं।

आचार्य पूज्य हुक्मीचंद जी म.सा. ने क्रांति की लौ जलाई, आचार्य शिवलाल जी म.सा. ने उस लौ को झेला, आचार्य उदयसागर जी सहित आचार्यों की परंपरा को आपने सुना। उन सभी आचार्यों के आशय से विपरीत हमारा कोई भी आचरण हुआ हो तो हम उन सभी से क्षमायाचना करते हैं। आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म.सा. के बारे में क्या कहूँ-

उस युग में संत अनेकों थे, मेरे नाना गुरु का क्या कहना,
उनकी समता का क्या कहना, उनकी समता का क्या कहना।। उस युग में...

किसके मन में नहीं हैं नाना गुरु? बोलो, किसके मन में नहीं है?

(श्रोतागण बोले- सबके मन में हैं)

जो समा गए हर जन-जन में, ऐसे गुरुवर का क्या कहना,
उस युग में संत अनेकों थे, मेरे नाना गुरु का क्या कहना।

आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म.सा. महान विभूति थे। उनके दर्शन का लाभ बहुतों ने लिया है। वे जन-जन के हृदय में बसे हुए हैं। ऐसे महान उपकारी गुरु ने कंकड़ तुल्य जीवन को तराशने की कोशिश की। मेरे में जितनी

भी अच्छाइयाँ हैं, सब उनकी तराशी हुई हैं और जितने भी दोष हैं वे मेरी नासमझी से हैं। उन महापुरुष के द्वारा जो उपक्रम हुआ, उन्होंने जिस भावना से, जिस उद्देश्य से, जिस लक्ष्य से संघ के बीच में मुझे उपस्थित किया, उसके अनुरूप यदि कार्य करने में मेरा सामर्थ्य प्रकट नहीं हो पाया हो, सामर्थ्य प्रकट नहीं कर पाया हूँ तो उन महान विभूति से अंत:करणपूर्वक क्षमायाचना चाहता हूँ।

उपाध्याय प्रवर, अनवरत ज्ञान-ध्यान, साधना, स्वाध्याय, चतुर्विध संघ की सारणा, वारणा, धारणा में अप्रमत्त भाव से लगे हुए हैं। इनके बारे में श्री हर्षित मुनि जी से आपने सुन ही लिया है। किंतु सुनना बहुत कम हो पाता है, जीवन उससे बहुत विराट है। उनको भी कई बार टोकने का प्रसंग बन जाता है, कुछ बात कहने की हो जाती है। साधु-साध्वी गुणरत्नों की खान हैं। एक-एक को आप देख रहे हैं। नीरज मुनि जी को, हर्षित मुनि जी को, गगन मुनि जी को, निर्वाण मुनि जी को, सुमित मुनि जी को, गुणीश मुनि जी को आप देख रहे हैं। इन सबमें अपनी-अपनी गुणात्मकता रही हुई है। मेरी सहनशीलता, धैर्य की कमी होने से इन्हें भी कुछ कहने में आ ही जाता है। महासतिवर्याएँ, शासन दीपिका श्री जयश्री जी म.सा. सुशीलाकँवर जी म.सा., कुशुमकांता श्री जी म.सा, चेतना श्री जी म.सा., ज्योतप्रभा श्री जी म.सा. आदि-आदि में सबका समावेश है। इन्होंने शासन प्रभावना में दिन-रात एक किए हैं। कोई त्यागी है, कोई तपस्वी है, कोई ज्ञानी है, कोई ध्यानी है। कोई किसी में रुचिशील है तो कोई किसी में। इनकी भावना रहती है कि इन्हें समय मिले पर वैसा नहीं बन पाने से व मेरे अन्यान्य क्रिया कलापों से इनका मन दुखा हो तो इनसे भी क्षमायाचना।

(तेज वर्षा की आवाज के कारण प्रवचन से विराम लेना पड़ा)

21 अगस्त, 2023

16

विरोध तजें, सहयोग दें

धम्म सद्धा हृदय धरूँ, धर्म बने मुझ प्राण।
धर्म आराधन नित करूँ, धर्म सदा सुख त्राण।

महापर्व पर्युषण के रूप में धर्माराधना का एक अनूठा अवसर हमें प्राप्त हुआ था। निश्चित ही हम सबकी पुण्यवानी है कि हमें धर्म के संस्कार मिले हैं। इस भौतिकवादी युग में, अर्थप्रधान युग में जहाँ व्यक्ति की भाग-दौड़ लगी रहती है, धर्म को समझने के लिए उसके पास फुरसत नहीं है, वहाँ हम लोग भाग्यशाली हैं कि संस्कारों के कारण धर्माराधना के लिए तत्पर हैं। एक बात कल मैंने कही थी-

आओ-आओ खमा लें आज, संवत्सरी आई सा।
हल्का कर लें बोझ सब आज, संवत्सरी आई सा।।

एक साल के बाद हमें संवत्सरी का अवसर प्राप्त होता है। यह ऐसा क्षण होता है, जिसमें हमारे भाव कोमल बन जाते हैं। सरल बन जाते हैं। आपने अनुभव किया होगा कि जिस समय आप किसी से क्षमायाचना करते हैं, उस समय आपके भावों में ऋजुता आ जाती है, हलकापन आ जाता है। यह अनुभूति की बात है। भले कितना ही पारा चढ़ा हुआ हो किंतु जिस समय क्षमायाचना की जाती है, कम-से-कम उस समय हृदय में कुछ अंतर होता है। उस समय मन-मस्तिष्क ऋजुता का अनुभव करता है। सरलता की अनुभूति होती है। हलकेपन का अहसास होता है।

यदि अपने बोझ को एक क्षण के लिए ही हलका कर लिया तो उसका भी बड़ा महत्त्व है। वही बोझ सदा के लिए हट जाए तो कितने आनंद की अनुभूति होगी, इसकी परिकल्पना कर सकते हैं।

समुदाय में रहने पर कुछ-न-कुछ विचार हो जाता है। मन-मस्तिष्क उसके लिए कार्यरत हो जाता है। दूसरों की तरफ ध्यान चला जाता है। दूसरों का व्यवहार हर्ष या खिन्नता का बोध करानेवाला हो जाता है। यह आपने बहुत बार सुन ही लिया है कि दूसरों द्वारा किया गया व्यवहार हममें कोई फर्क देने वाला नहीं होना चाहिए। कोई कितनी भी प्रशंसा कर रहा हो उससे कोई फर्क नहीं आए। यदि कोई ऐसा सोचे कि प्रशंसा करने से वह प्रशंसित हो गया, अच्छा हो गया, तो ऐसी सोच खोटी है। जरूरी नहीं है कि प्रशंसा करने से पात्रता आ जाएगी। यह दृढ़ विश्वास अपने मन में बिठा लिया जाए कि जिसमें योग्यता होगी, अर्हता होगी, उसकी किसी ने बुराई कर दी, उसे गलत बता दिया, तो वह गलत नहीं हो जाएगा। अपनी क्षमता का आकलन स्वयं से करना सीख लेंगे तो विकास होगा।

बहुधा हम अपने सामर्थ्य को नहीं समझ पाते हैं। दूसरों के कहने से आश्वस्त हो जाते हैं, जबकि ऐसा न होकर हमें अपना सामर्थ्य ज्ञात होना चाहिए। कोई व्यापारी, व्यापार करने के लिए उद्यत होता है तो वह चाहता है कि अधिक विकास करूँ। अपने पास उपलब्ध साधन के अनुसार और कुछ नया करूँ।

जिसके पास परचून की छोटी दुकान खोलने का साधन नहीं हो, वह चाहे कि फैक्टरी लगाऊँ तो क्या वह वैसा कर पाएगा? नहीं। हाँ, धीरे-धीरे विकास से वैसा हो सकता है। इसलिए सोच निरंतर अपने सामर्थ्य को बढ़ाने वाली होनी चाहिए। आध्यात्मिक जीवन के लिए, निरंतर सामर्थ्य बढ़ाने के लिए अवश्यमेव हमें दो तरह की तैयारी करनी चाहिए। एक प्रत्याख्यान ऐसा होना चाहिए जो जीवनपर्यंत के लिए हो। जैसे श्रावक का पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा, पाँचवाँ व्रत जीवनपर्यंत के लिए है। साथ ही कुछ ऐसा भी होना चाहिए जो रोजाना करें, प्रतिदिन करें। ऐसा नहीं हो कि प्रतिदिन के लिए तो कुछ करें और जीवनपर्यंत के लिए कुछ नहीं हो। जीवनपर्यंत के लिए भी कोई प्रत्याख्यान होना चाहिए और प्रतिदिन के लिए भी कोई-न-कोई प्रत्याख्यान स्वीकार करते रहें।

साधु-साध्वी हों या नहीं हों, त्याग-प्रत्याख्यान की भावना निरंतर

विकसित होती रहनी चाहिए। 14 नियम बहुत सरल हैं। अपनी मरजी के अनुरूप जैसा चाहें वैसा एक दिन के लिए त्याग कर सकते हैं। जैसे, जिस दिन ज्यादा कहीं बाहर नहीं जाना है, उस दिन एक या दो वाहनों के अतिरिक्त वाहनों का त्याग। पानी की जरूरत के आधार पर उसकी लिमिट कर लें। थोड़ा सा समय उधर देने से जीवन सही दिशा में मुड़ जाता है। ज्यादा समय नहीं चाहिए। मेरे खयाल से पाँच मिनट पर्याप्त है। आपके पास 14 नियमों की सूची रहे। पाँच मिनट में उसमें अंक भर लें और दूसरे दिन वापस उसको चितारें कि कोई दोष तो नहीं लगा।

यदि थोड़ा-सा समय दे दिया तो जीवन आध्यात्मिक बन जाएगा। जीवन की दिशा बदल जाएगी। सही दिशा में आगे बढ़ने वाले बनेंगे।

कल मैंने व्याख्यान के दौरान अरिहंत भगवान, सिद्ध भगवान आदि से क्षमायाचना की। आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म.सा. का इस जीवन पर महान उपकार रहा है। यहाँ बैठने वाले अमूमन सभी लोगों ने उनके दर्शन किए होंगे। आज भी हमारे दिल-दिमाग में उनकी सूरत, उनके उपकार बने हुए होंगे। उनको भूले नहीं होंगे, क्योंकि उनसे नजदीक का रिश्ता रहा है। आचार्य श्री हुक्मीचंद जी म.सा. आदि को हमने नहीं देखा है, किंतु आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म.सा. के दर्शन किए हैं। दुख-दर्द की बात भी उनके सामने की है। उनके उपदेशों से मन को सुकून भी मिला है। ऐसे आचार्य का महान उपकार रहा है। कोई कल्पना नहीं थी, कोई विचार नहीं था, किसी संभावना की बात ही नहीं थी कि मुझे इस दायित्व का निर्वाह करना पड़ेगा या यह दायित्व मेरे सिर पर आने वाला है। कहीं-से-कहीं तक कोई कल्पना की बात नहीं थी, किंतु जो कुछ भी प्रसंग बना, महापुरुषों ने अपने ज्ञान में जैसा देखा, सोचा अब मेरा विषय बनता है कि मैं उनके विश्वास पर खरा उतरूँ। उनकी अपेक्षाओं के अनुरूप यदि मैं कर नहीं पाया अथवा अन्य किसी प्रकार से भी उन महापुरुषों की कोई अवज्ञा-आशातना हुई हो तो अंतर् दिल से, अंतर्भावों से क्षमायाचना करता हूँ।

उपाध्याय प्रवर, साधु-साध्वी, श्रावक वर्ग से आपने कल बातें सुनीं। मैं भी बैठा हुआ था। मेरे मन में एक विचार पैदा हुआ, जो कल व्यक्त करने

वाला था, किंतु बारिश के शोर में मुझे चुप रहना पड़ा।

कनार्टक के सम्राट कृष्णराय के वहाँ तेनालीराम नाम का व्यक्ति रहता था। ऐसा माना जाता था कि वह बड़ा चतुर था। लोगों ने राजा के कान तक बात पहुँचाई कि इसने अभी तक आपको अपने घर पर भोजन के लिए आमंत्रित नहीं किया। आपके लिए भोज की व्यवस्था नहीं की। एक बार लोगों ने उसके सामने ही सम्राट से कहा, हुजूर! हम चाहते हैं कि तेनालीराम के यहाँ एक बार आपके भोजन की व्यवस्था हो। अब तेनालीराम क्या बोले! वह मना कर नहीं सकता था।

सम्राट ने उसकी ओर देखा तो उसने कहा, हाँ हुजूर! आप तो कृपा कराइए। सम्राट ने कहा, कितने लोगों को साथ में लाना है? तेनालीराम ने कहा, जितने लोग हों, जो भी आपके साथ आना चाहें उन्हें ले आएं। सब आमंत्रित हैं। तारीख निश्चित हो गई। सम्राट अपने गुप्तचरों से जानकारी करते रहे। पता चला कि दिन नजदीक आ रहे हैं, किंतु तेनालीराम कोई तैयारी नहीं कर रहा है। नीमच संघ वाले नेमीचंद जी कल बोल गए कि जब से चातुर्मास खुला, तभी से तैयारी चालू हो गई।

खैर, तेनालीराम ने सब लोगों को आमंत्रित किया, किंतु तैयारी कुछ लग नहीं रही थी। लोग सोच रहे थे कि ऐन वक्त पर हाथ खड़ा तो नहीं कर देगा। एक दिन तेनालीराम को बुलाकर सम्राट ने उससे कहा, तुम्हारी अनुकूलता नहीं हो तो समय पर बता देना। उसने कहा, आप निश्चिंत रहिए महाराज, सब ठीक है, समय पर सब हो जाएगा। एक दिन पहले तेनालीराम मुँह लटकाए सम्राट के सामने आया। सम्राट ने कहा, क्या हुआ, व्यवस्था नहीं हो पा रही है तो मना करवा दूँ क्या? उसने कहा, राजन्! सभी व्यवस्था है, मगर नगर में विवाह-शादियाँ बहुत होने से मेरी लाख कोशिश के बाद भी बरतन नहीं मिल पाये। सारी व्यवस्था हो गई, किंतु थाली, लोटा, गिलास, कटोरियों की व्यवस्था करने में मैं लाचार हूँ। विवश हूँ। इसलिए मेरा निवेदन है कि जो भी भोजन करने पधारें, वे अपने साथ थाली, लोटा, गिलास, कटोरियाँ लेकर आएं।

राजा ने घोषणा करवा दी कि लोग अपने घर से थाली, लोटा,

गिलास, कटोरियाँ लेकर चलें। यह आप भी जानते हैं कि अपने घर पर कोई फूटी थाली में भी खा लेगा किंतु कहीं बाहर जाने पर फर्क पड़ेगा। अपने घर में कैसी भी पोशाक चलेगी, किंतु बाहर मेहमान बनकर जाएंगे तो अन्य पोशाक पहनेंगे। यह फर्क होता है या नहीं?

(श्रोतागण- होता है)

सभी लोग बड़ी उमंग से जा रहे थे कि तेनालीराम को आज मजा चखाएंगे। तेनालीराम ने सबके भोजन की व्यवस्था की। परोसगारी करने वाले परोसगारी कर रहे थे। तेनालीराम, सम्राट के पास पंखा लेकर खड़ा था। एक से बढ़कर एक खाने की चीजें थीं। ऐसी व्यवस्था थी कि सभी लोग धन्य-धन्य कहने लगे। सारे लोग कहने लगे, धन्य हो तुम। तुमने बढ़-चढ़कर व्यवस्था की है। सम्राट ने भी कहा, तुमने अच्छी व्यवस्था की, सुंदर व्यवस्था की।

तेनालीराम ने कहा, हुजूर! ''अन्न आपरो, धन आपरो, म्हारी तो वाहवाही है।'' यानी अन्न आपका है, धन आपका है, मेरी तो सिर्फ वाहवाही हो रही है। तेनालीराम की ऐसी बात सुनकर लोगों ने सोचा कि बहुत विनम्रता दिखा रहा है।

जब सारे लोग खाना खाकर, अपनी-अपनी थाली उठाकर जाने लगे तो तेनालीराम ने हाथ जोड़कर कहा कि आप इतना तो मेरा अपमान मत करें। मैं थालियों की व्यवस्था नहीं कर पाया था, किंतु इन्हें धुलवा तो सकता हूँ। उसने कहा कि थालियाँ आप यहीं छोड़ दीजिए, इनको मँजवाने का काम मेरा है। ये यथासमय सबके घर पहुँचा दी जाएगी। सब लोगों ने अपने-अपने थाली-लोटे आदि वहीं छोड़ दिए। एक दिन बीता, दो-तीन दिन बीते, पर किसी के यहाँ थाली आदि बरतन नहीं पहुँचे।

सम्राट के सामने बात पहुँची कि बरतन नहीं आए तो सम्राट ने तेनालीराम को बुलाकर कहा, भाई! सबके बरतन नहीं पहुँचे, क्या बात है?

उसने कहा ''हुजूर, सारे-के-सारे बरतन अमुक सेठ के यहाँ गिरवी रखे हुए हैं। मैंने आपसे पहले ही कहा था कि 'अन्न आपरो, धन आपरो, म्हारी तो वाहवाही है।' आपने कहा तो सारी व्यवस्था हो गई, किंतु मेरे पास इतने साधन नहीं थे, इसलिए सारे लोग अपने-अपने हिसाब से पैसे देकर बरतन

छुड़ा लाएं।''

(श्रोतागण हँसने लगे)

हँसने की बात नहीं है। वही सारा खेल यहाँ पर है। जितनी भी अच्छाइयाँ हैं, सभी उपाध्याय-प्रवर, साधु-साध्वियों की वजह से हैं। मेरा तो केवल नाम है। मेरी तो केवल वाहवाही है। अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता। समुदाय से काम होता है। आपको जो भी काम नजर आ रहे हैं, जो भी अच्छाई नजर आ रही है, वह केवल मेरी नहीं है। उसमें सबका समावेश है। न केवल साधु-साध्वी, न केवल उपाध्याय-प्रवर, बल्कि श्रावक-श्राविका आदि का महान योगदान है।

आज हम जो सही व्यवस्था देख रहे हैं, उसमें आचार्य पूज्य श्री जवाहरलाल जी म.सा. की सोच थी, उनका सपना था। आचार्य पूज्य श्री गणेशलाल जी म.सा. ने स्तंभ खड़े किए। आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म.सा. ने छत डाली और हम छत के नीचे आराम की अनुभूति कर रहे हैं। समुदाय में मतभिन्नता भी होती है। मतभिन्नता कोई बुरी बात नहीं है। मतभिन्नता होती है और होनी भी चाहिए। किंतु राजनीति में चल रहे परिदृश्य की तरह देखा-देखी नहीं होनी चाहिए। जैसाकि विरोधी पार्टियों को देखते हैं कि वे सरकार को कोई काम नहीं करने देती, अड़ियल रूप बनाकर खड़ी रहती हैं। वैसा अड़ियल रूप आपको अच्छा लगता है क्या? आपका मन उसका समर्थन करना चाहता है क्या? आपके लोकसभा-विधानसभा में जो खेल होते हैं, क्या वे अच्छे हैं?

हमारे धर्म संघ में, धर्म क्षेत्र में, धर्म नीति में, राजनीति का प्रवेश नहीं होना चाहिए। यह लक्ष्य हम सबके दिमाग में आ जाना चाहिए।

आचार्य पूज्य गुरुदेव फरमाते थे कि जहाँ भी गुटबंदी होती है, ग्रुपिंग होती है, वहाँ कहीं-न-कहीं हिंसा का संबंध जुड़ता है। इससे मन मलिन होता है। मन में द्वेष की भावना बनती है। धर्म करके, आराधना करके जो शुद्धि होनी चाहिए वह नहीं होती, दृष्टि में जरूर अंतर आ जाता है। दृष्टि का वह अंतर मन को मैला किए बिना नहीं रहेगा।

संघ की व्यवस्था के लिए अध्यक्ष या मंत्री के पद पर किसी एक का

चयन किया जाता है। वह केवल व्यवस्था की दृष्टि से है। वह भी अल्पकाल के लिए, न कि जिंदगीभर के लिए। किसी को अध्यक्ष-मंत्री कितने समय के लिए बनाया जाता है? एक वर्ष, दो वर्ष, तीन वर्ष। नीमच संघ को चातुर्मास मिला तो जिम्मेदारी किसकी बन गई? केवल अध्यक्ष-मंत्री की जिम्मेदारी है या पूरे समाज-संघ की भी जिम्मेदारी है?

(श्रोतागण बोले- पूरे संघ की जिम्मेदारी बनती है)

आचार्य पूज्य श्री जवाहरलाल जी म.सा. की जीवनी में लिखी हुई बात है। उदयपुर का प्रसंग था। कांफ्रेन्स के अध्यक्ष उपस्थित हुए थे। उस समय आचार्यश्री ने बड़ी सुंदर बात कही थी कि आप अध्यक्ष साहब की जय-जयकार बोल रहे हो, उनका स्वागत कर रहे हो, किंतु उनके साथ कदमताल नहीं हो पाए तो जय-जयकार औपचारिक है।

भारतीय संस्कृति में वर, वधू को माला पहनाने के बाद जीवनपर्यंत उसका साथ निभाता है। आपने भी अध्यक्ष साहब को माला पहनाई है। इसका मतलब है कि आपका इनके साथ संबंध जुड़ गया। उनको निभाना अब आपकी जिम्मेदारी है। कोई अध्यक्ष, कोई मंत्री योग्य नहीं भी हो किंतु यदि अध्यक्ष, मंत्री बना दिया गया है तो आपका क्या कर्तव्य है? आप फजीहत करेंगे या घर की बात घर तक ही सीमित रखेंगे?

(श्रोतागण बोले- घर की बात घर तक ही सीमित रखेंगे)

फजीहत करेंगे तो सबसे पहले आपकी फजीहत होगी कि आपने अयोग्य को पद पर प्रतिष्ठित कर दिया। अध्यक्ष, मंत्री बनाए गए या स्वयं से बने?

एक पिता ने अपने लड़के की शादी की। शादी से पहले उसने लड़की को परखा-देखा। शादी होने के बाद उसका स्वभाव मैच नहीं हो रहा है तो क्या करना चाहिए? यदि वह योग्य है तो उत्तम बात है। यदि योग्य नहीं है तो उस पिता की जिम्मेदारी क्या बनती है?

नाना गुरु ने मुझे इस स्थान पर बिठाया है, मैं नहीं समझ रहा था कि मुझमें योग्यता है। आज भी वही मान रहा हूँ, किंतु सब निभा रहे हैं तो गाड़ी चल रही है। वैसे ही आपका भी दायित्व बन जाना चाहिए। इस संघ के सदस्यों

को सोच लेना चाहिए कि घर की बात जगजाहिर नहीं हो। ऐसा सपोर्ट रखें कि लोगों को मालूम ही नहीं पड़े कि हमारा अध्यक्ष अयोग्य है। योग्य है तो कोई बात ही नहीं। कदाचित् अयोग्य हो तो भी संघ सदस्यों को चाहिए कि दूसरे लोगों को पता ही नहीं पड़े कि अमुक संघ का अध्यक्ष योग्यता में न्यून है।

यह बात एक बार पहले भी मैं बोल गया था कि कृष्ण वासुदेव ने गोवर्धन पर्वत को अंगुली पर उठा लिया। ग्वालों ने अपने डंडे उस पर्वत के नीचे लगाए। क्यों लगाए?

उनका मानना था कि श्रीकृष्ण पर पूरा भार न आ जाए, इसलिए हम भी डंडे लगा दें। ग्वालों द्वारा डंडे लगाने से भार हलका हुआ या नहीं हुआ, वह बात अलग है, किंतु उनकी सोच भार को हलका करने की रही। वैसा ही लक्ष्य यदि हमारा बनता है तो संघ का प्रवाह व्यवस्थित रूप से चलेगा अन्यथा हम धर्म की बात करेंगे, किंतु मन धर्म में भीगेगा नहीं। मन में द्वेष धधकता रहेगा। वह बात, वह विषय, वह व्यक्ति सामने आते ही मन उद्विग्न हो जाएगा। भले ही हमें कितने ही सुंदर अवसर मिले हैं, किंतु माथे पर भार बनाए रखेंगे तो उद्धार नहीं हो पाएगा। इसलिए-

आओ-आओ खमा लें आज, संवत्सरी आई सा।
हल्का कर लें बोझ सब आज, संवत्सरी आई सा।।

आज हम सारे बोझ को हलका करने वाले हैं। काम करनेवालों से सैकड़ों गलतियाँ हो सकती हैं। उन गलतियों का सुधार जरूरी है, न की उनकी चर्चा। चर्चा करने से गलती का सुधार हो जाएगा, यह मानना भ्रांति है। मिल-बैठकर बातचीत करें कि कैसे उन गलतियों का सुधार हो जाए। हो सकता है कि एक की दृष्टि में गलती हो, दूसरे की दृष्टि में गलती नहीं हो। एक गलत मान रहा हो और दूसरे को गलत लग ही नहीं रहा हो। जो चलेगा वह ठोकर खाएगा। ठोकर खाकर गिरने की बात नहीं है, सँभल करके आगे बढ़ने की बात है। यदि ठोकर खाकर गिरने पर सोचें कि चलें ही नहीं, तो कभी भी मंजिल नहीं मिलेगी।

आज अध्यक्ष-मंत्री कोई है, कल कोई और होगा। हमारे यहाँ ऐसी व्यवस्था नहीं है कि कोई जीवनपर्यंत के लिए अध्यक्ष हो जाए। संघ की

व्यवस्था के अनुसार 2, 3, 4 साल के लिए अध्यक्ष-मंत्री बनते हैं। इस दौरान टाँग खींचते रहेंगे तो विकास नहीं हो पाएगा।

कुछ दिन पहले एक भाई ने कहा कि म.सा.! हम काम करना चाहते हैं, किंतु लोग काम नहीं करने देते। टाँग खिंचाई करते हैं। मैंने बात को विनोद का रूप दे दिया। मैंने कहा, भाई सामने वाला तुम्हारे पैर पकड़ रहा है, और क्या चाहिए। तुम्हारे पैर पकड़ रहे हैं, अब तुम ताकत लगाकर पैर को उसके सहित ऊपर उठा लो। यदि टाँग खिंचाई अच्छी नहीं लग रही है तो नियम लें कि किसी की टाँग नहीं खींचेंगे। कंधे से कंधा मिलाकर काम करेंगे। ऐसा होगा तो फिर आप देखना कि संघ का कितना विकास होता है, किंतु लोग अलग होकर बैठ जाते हैं। कोई बोलता है कि उनके साथ मुझसे काम नहीं हो सकता। कल यदि आप अध्यक्ष बनेंगे तो आपके साथ कौन काम करेगा, यह सोचने की बात है। यह किसी एक संघ की बात नहीं है। हर संघ में राजनीति का थोड़ा-थोड़ा असर आ रहा है। समझदार व्यक्ति समझ लेता है। उसको समझाने की ज्यादा आवश्यकता नहीं पड़ती।

नीमच संघ की भावना गुरुदेव के समय से चलती रही है। गुरुदेव के चातुर्मास की स्वीकृति भी हो गई थी। विहार भी हो गया, किंतु स्वास्थ्य की अनुकूलता नहीं होने से वापस उदयपुर पधारना हो गया। चातुर्मास स्वीकृति के समय मैंने स्पष्ट किया था कि हम आगारों के साथ स्वीकृति देते हैं। स्वीकृत स्थान पर पहुँचना हो जाए ऐसा लक्ष्य रहता है, किंतु उसके बावजूद पहुँचना नहीं हो पाए तो कोई उधारी नहीं रहती। कर्जे का काम नहीं रहता। उधारी का काम माथे पर भार देने वाला होता है, इसलिए हमारे यहाँ उधारी का काम नहीं है।

चाहे किसी भी संत-सती की स्वीकृति दी जाए, यदि पहुँचना नहीं हो पाए तो वहाँ चातुर्मास नहीं होगा। बंबोरा संघ के चातुर्मास की स्वीकृति हुई, किंतु महासतियाँ जी पहुँच नहीं पाईं। नहीं पहुँच पाईं तो नहीं पहुँच पाईं। उधारी नहीं रही। ऐसे ही गुरुदेव का यहाँ पहुँचना नहीं हुआ तो ऐसा नहीं है कि वह उधार रह गया। नीमच संघ का उत्साह बहुत है। लोग तपस्या में बढ़-चढ़कर भाग ले रहे हैं। उपाध्यायश्री जी ने कहा कि 200 अठाई की तपस्या होनी

चाहिए। 200 का लक्ष्य बनाया और यहाँ के भाई जुट गए। नवीन जी अकेले तपस्या करते तो कितनी कर लेते! सबका सहयोग था या नहीं! कई लोगों ने कहा कि आपने बोल दिया इसलिए करते हैं। हालत अच्छी नहीं है, शक्ति नहीं है, किंतु भैया ने बोल दिया तो तपस्या करनी है। ऐसे भी लोग हैं, ऐसी भी तपस्याएँ हो रही हैं।

हालांकि जोर-जबरदस्ती का मेरा भाव नहीं रहता। हकीकत में ऐसा भाव उपाध्यायश्री जी का भी नहीं रहता, किंतु आलस्य को दूर करने के लिए, शक्ति को जगाने के लिए प्रेरणा है। कई बार तपस्या से बीमारियाँ भी दूर हो जाती हैं।

नीमच संघ ने पुरुषार्थ किया और काफी हद तक सफलता भी प्राप्त की। हम लगभग 53 साधु-साध्वी हैं। हमारे द्वारा नीमच संघ तथा नीमच के किसी भी परिवार को गोचरी से लेकर मांगलिक तक के विषय में कोई पीड़ा हुई हो, किसी भी व्यवहार से किसी भी भाई का दिल दुखा हो, चाहे अध्यक्ष-मंत्री हों, चाहे पदाधिकारी हों या और कोई, उन सबसे मैं हृदय से क्षमायाचना चाहता हूँ। गोचरी-पानी के लिए किसी के यहाँ ज्यादा जाना हुआ, किसी के यहाँ कम, किसी के यहाँ जाने का काम नहीं हुआ। हमारा लक्ष्य रहता है कि हर घर से गोचरी-पानी लाएं। चाहे किसी भी समुदाय का घर हो। व्याख्यान में किसी को लक्ष्य बनाकर बात नहीं की जाती, किंतु कई लोग आते हैं और बोलते हैं, म.सा. आज का व्याख्यान तो मेरे ऊपर ही था। सामने वाले की दृष्टि होती है जो अपने ऊपर ले लेता है।

पर्व पर्युषण की भावना लेकर दूर-दूर से दर्शनार्थी आते हैं। उनको साधु-साध्वियों का पाथेय मिला। व्याख्यान के बाद दोपहर में अलग-अलग विषयों पर कार्यक्रम रखा गया। अलग-अलग विषयों पर आपको जानकारी मिले इसका प्रयत्न किया गया और आपने उसका लाभ भी उठाया। इसके बावजूद यदि किसी के मन में कसक रह गई हो कि आचार्यश्री जी हमसे बात नहीं करते, हमें 'दया पालो' नहीं कहते, मांगलिक नहीं देते, उपाध्यायश्री जी बात नहीं करते तो दिल को बड़ा रखकर क्षमा प्रदान कर देना।

यहाँ व्याख्यान लिख रहे भाई सुभाष जी विश्नोई के सामने परीक्षा का

प्रसंग आ रहा है। उसके लिए उनके साथियों ने उन्हें बुलाया तो उन्होंने कहा कि यहाँ का सान्निध्य छोड़कर मैं जाना नहीं चाहता। उनको टीचिंग का बोला गया तो कहा कि मैं एक-दो दिन परीक्षा देने के लिए ही जाऊंगा। यह उनका धर्म-प्रेम ही कहा जा सकता है। इतना ही कहते हुए विराम।

22 अगस्त, 2023